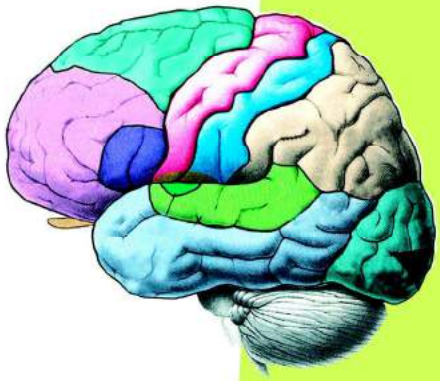

इकाई पाँच

मानव शरीर विज्ञान

अध्याय 16
पाचन एवं अवशोषण

अध्याय 17
श्वसन और गैसों का विनिमय

अध्याय 18
शरीर द्रव्य तथा परिसंचरण

अध्याय 19
उत्सर्जी उत्पाद एवं उनका निष्कासन

अध्याय 20
गमन एवं संचलन

अध्याय 21
तंत्रकीय नियंत्रण एवं समन्वय

अध्याय 22
रासायनिक समन्वय तथा एकीकरण

न्युनीकरणकर्ता जीवन के स्वरूपों के अध्ययन का उपागम करते हैं, परिणामस्वरूप भौतिक-रसायन संकल्पना एवं तकनीकी के उपयोग में वृद्धि होती है। ऐसे अध्ययनों में बहुतायत से या तो जीवद्-ऊतक मॉडल का उपयोग करते हैं या फिर सीधे-सीधे कोशिकामुक्त प्रणाली का उपयोग करते हैं। एक ज्ञान की अभिवृद्धि के परिणामस्वरूप आण्विक जीव विज्ञान का जन्म हुआ। आज जैव-रसायनशास्त्र एवं जैव-भौतिकी के साथ आण्विक शरीर विज्ञान लगभग पर्यायवाची बन चुका है। हालांकि, अब तीव्र वृद्धि के साथ यह महसूस किया जा रहा है कि न तो शुद्ध रूप से जैविक उपागम और न ही शुद्ध रूप से न्यूनीकरण आण्विक उपागम जैव वैज्ञानिक प्रक्रम या जीवित प्रत्याभासों के सत्य को उद्घाटित कर पाएगा। वर्गिकी जीव विज्ञान हमें यह विश्वास दिलाता है कि सभी जैविक प्रत्याभास अध्ययन के अंतर्गत सभी कारकों की परस्पर क्रिया के कारण निर्गत विशिष्टाएं या गुणधर्म है। अणुओं का नियामक नेटवर्क, सुप्रा आण्विक जनसंख्या एवं समुदाय हर एक निर्गत गुणधर्म को पैदा करते हैं। इस खंड के अंतर्गत आने वाले अध्यायों में प्रमुख मानव शरीर वैज्ञानिक प्रक्रमों, जैसे पाचन, गैसों का विनिमय, रक्त परिसंचरण, गमन एवं संचलन के बारे में कोशिकीय एवं आण्विक भाषा में वर्णन किया गया है। अंतिम दो अध्यायों के अंतर्गत जैविक समन्वय के बिंदुओं पर चर्चा की गई है।

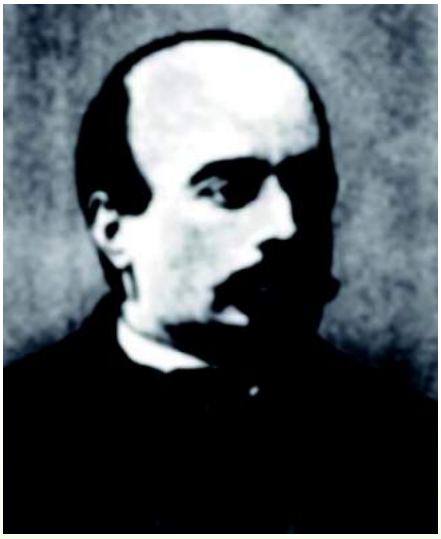

अलफोन्सो कार्टी
(1822 - 1888)

इटैलियन शरीर क्रिया वैज्ञानिक अलफोन्सो कोर्टी का जन्म 1822 में हुआ था। कोर्टी ने अपना वैज्ञानिक जीवन सरीसृपों के हृद-वाहिका तंत्र के अध्ययन से प्रारंभ किया था। बाद में उन्होंने अपना ध्यान स्तनधारियों के श्वसन-तंत्र की ओर केंद्रित किया था। सन् 1951 में आपने एक लेख प्रकाशित किया, जिसमें आपने कर्णावर्त (कॉक्लिया) की आधारस्थ झिल्ली पर स्थित संरचना में समाहित रोम कोशिकाओं की व्याख्या की थी जोकि ध्वनि कंपनों को तंत्रकीय आवेगों में परिवर्तित कर देती हैं। जिन्हें कोर्टी का अंग कहा गया। आपका देहांत वर्ष 1888 में हो गया।

अध्याय 16

पाचन एवं अवशोषण

16.1 *पाचन तंत्र*
16.2 *भोजन का पाचन*
16.3 *पाचित उत्पादों का अवशोषण*
16.4 *पाचन तंत्र के विकार और अनियमितताएं*

भोजन सभी सजीवों की मूलभूत आवश्यकताओं में से एक है। हमारे भोजन के मुख्य अवयव कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन एवं वसा हैं। अल्प मात्रा में विटामिन एवं खनिज लवणों की भी आवश्यकता होती है। भोजन से ऊर्जा एवं कई कच्चे कायिक पदार्थ प्राप्त होते हैं जो वृद्धि एवं ऊतकों के मरम्मत के काम आते हैं। जो जल हम ग्रहण करते हैं, वह उपापचयी प्रक्रियाओं में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है एवं शरीर के निर्जलीकरण को भी रोकता है। हमारा शरीर भोजन में उपलब्ध जैव-रसायनों को उनके मूल रूप में उपयोग नहीं कर सकता। अतः पाचन तंत्र में छोटे अणुओं में विभाजित कर साधारण पदार्थों में परिवर्तित किया जाता है। जटिल पोषक पदार्थों को अवशोषण योग्य सरल रूप में परिवर्तित करने की इसी क्रिया को **पाचन** कहते हैं और हमारा पाचन तंत्र इसे यांत्रिक एवं रासायनिक विधियों द्वारा संपन्न करता है। मनुष्य का पाचन तंत्र चित्र 16.1 में दर्शाया गया है।

16.1 पाचन तंत्र

मनुष्य का पाचन तंत्र आहार नाल एवं सहायक ग्रंथियों से मिलकर बना होता है।

16.1.1 आहार नाल

आहार नाल अग्र भाग में मुख से प्रारंभ होकर पश्च भाग में स्थित गुदा द्वारा बाहर की ओर खुलती है।

मुख, मुखगुहा में खुलता है। मुखगुहा में कई दांत और एक पेशीय जिह्वा होती है। प्रत्येक दांत जबड़े में बने एक सांचे में स्थित होता है। (चित्र 16.2) इस तरह की व्यवस्था को **गर्तदंती** (thecodont) कहते हैं। मनुष्य सहित अधिकांश स्तनधारियों के जीवन काल में दो तरह के दांत आते हैं- अस्थायी दांत-समूह अथवा दूध के दांत जो वयस्कों में स्थायी दांतों से प्रतिस्थापित हो जाते हैं। इस तरह की दांत (दंत) व्यवस्था को **द्विबारदंती**

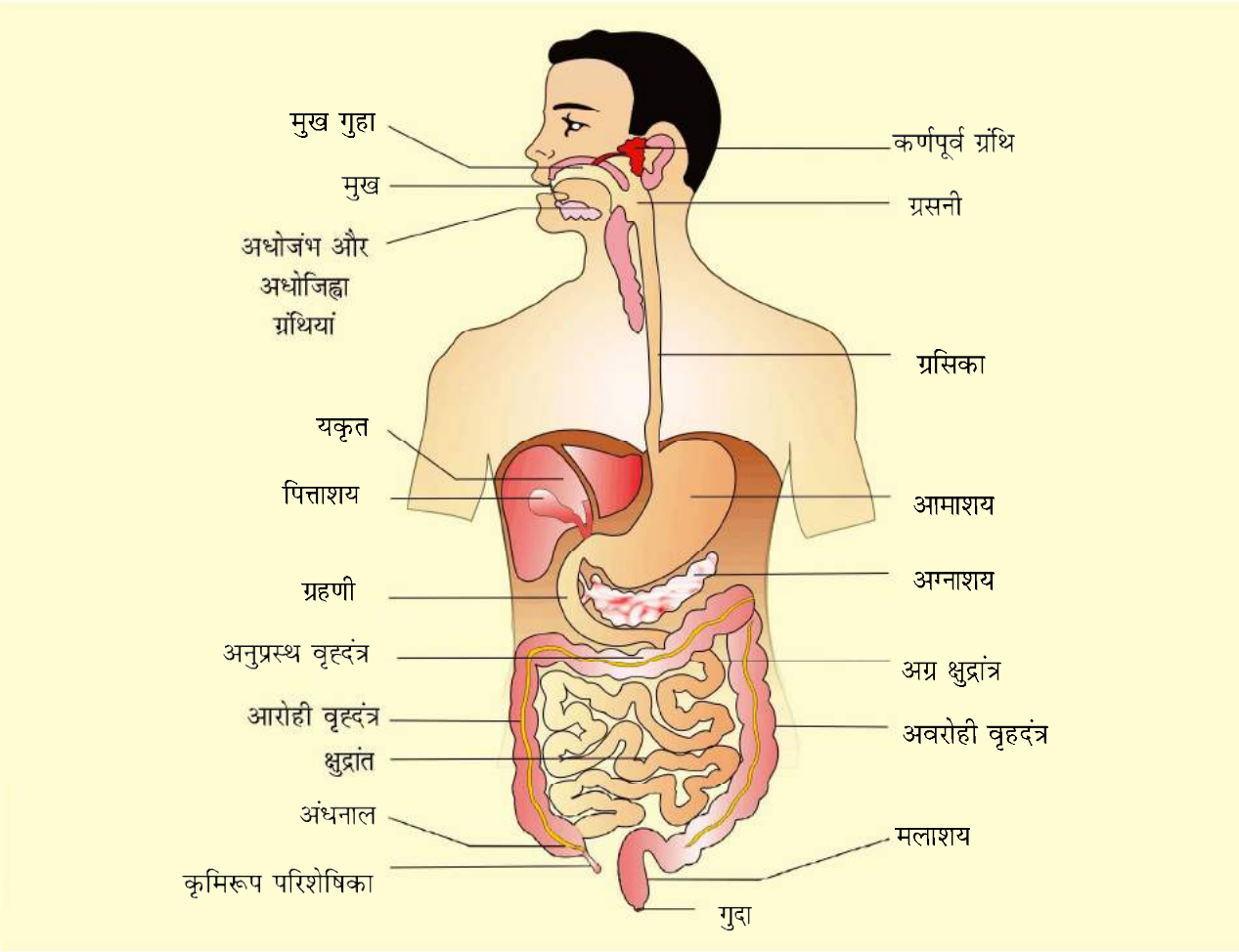

चित्र 16.1 मानव पाचन तंत्र

(Diphyodont) कहते हैं। वयस्क मनुष्य में 32 स्थायी दांत होते हैं, जिनके चार प्रकार हैं जैसे- कृंतक (I), रदनक (C) अग्र-चर्वणक (PM) और चर्वणक (M)। ऊपरी एवं निचले जबड़े के प्रत्येक आधे भाग में दांतों की व्यवस्था I, C, PM, M क्रम में एक दंतसूत्र के अनुसार होती है जो मनुष्य के लिए $\frac{2123}{2123}$ है। इनैमल से बनी दांतों की चबाने वाली कठोर सतह भोजन को चबाने में मदद करती है। जिह्वा स्वतंत्र रूप से घूमने योग्य एक पेशीय अंग है जो फ्रेनुलम (frenulum) द्वारा मुखगुहा की आधार से जुड़ी होती है। जिह्वा की ऊपरी सतह पर छोटे-छोटे उभार के रूप में पिप्पल (पैपिला) होते हैं, जिनमें कुछ पर स्वाद कलिकाएं होती हैं।

मुखगुहा एक छोटी ग्रसनी में खुलती है जो वायु एवं भोजन, दोनों का ही पथ है। उपास्थिमय घाँटी ढक्कन, भोजन को निगलते समय श्वासनली में प्रवेश करने से रोकती है। ग्रसिका (oesophagus) एक पतली लंबी नली है, जो गर्दन, वक्ष एवं मध्यपट से होते हुए पश्च भाग में 'J' आकार के थैलीनुमा आमाशय में खुलती है। ग्रसिका का आमाशय

में खुलना एक पेशीय (आमाशय-ग्रसिका) अवरोधिनी द्वारा नियंत्रित होता है। आमाशय (गुहा के ऊपरी बाएं भाग में स्थित होता है), को मुख्यत: तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है- **जठरागम भाग** जिसमें ग्रसिका खुलती है, **फंडिस** क्षेत्र और **जठरनिर्गमी** भाग जिसका छोटी आंत में निकास होता है (चित्र 16.3)। छोटी आंत के तीन भाग होते हैं- 'C' आकार की ग्रहणी, कुंडलित मध्यभाग अग्रक्षुद्रांत्र और लंबी कुंडलित क्षुद्रांत्र। आमाशय का ग्रहणी में निकास जठरनिर्गम अवरोधिनी द्वारा नियंत्रित होता है। क्षुद्रांत्र बड़ी आंत में खुलती है जो अंधनाल, वृहदांत्र और मलाशय से बनी होती है। अंधनाल एक छोटा थैला है जिसमें कुछ सहजीवीय सूक्ष्मजीव रहते हैं। अंधनाल से एक अंगुली जैसा प्रर्वध, परिशेषिका निकलता है जो एक अवशेषी अंग है। अंधनाल, बड़ी आंत में खुलती है। वृहदांत्र तीन भागों में विभाजित होता है- आरोही, अनुप्रस्थ एवं अवरोही भाग। अवरोही भाग मलाशय में खुलता है जो मलद्वार (anus) द्वारा बाहर खुलता है।

आहार नाल की दीवार में ग्रसिका से मलाशय तक, चार स्तर होते हैं (चित्र 16.4) जैसे सिरोसा, मस्कुलेरिस, सबम्यूकोसा और म्युकोसा। सिरोसा सबसे बाहरी परत है और एक पतली मेजोथिलियम (अंतरंग अंगों की उपकला) और कुछ संयोजी ऊतकों से बनी होती है। मस्कुलेरिस प्राय: आंतरिक वर्तुल पेशियों एवं बाह्य अनुदैर्घ्य पेशियों की बनी होती है। कुछ भागों में एक तिर्यक पेशी स्तर होता है। सबम्यूकोसा स्तर रुधिर, लसीका व तंत्रिकाओं युक्त मुलायम संयोजी ऊतक की बनी होती है। ग्रहणी में, कुछ ग्रंथियाँ भी सबम्यूकोसा में पाई जाती हैं। आहार नाल की ल्यूमेन की सबसे भीतरी परत म्यूकोसा है। यह स्तर आमाशय में अनियमित वलय एवं छोटी आंत में अंगुलीनुमा प्रवर्ध बनाता है जिसे **अंकुर** (villi) कहते हैं (चित्र 16.5)। अंकुर की सतह पर स्थित कोशिकाओं से असंख्य सूक्ष्म प्रवर्ध निकलते हैं जिन्हें सूक्ष्म अंकुर कहते हैं, जिससे ब्रस-बार्डर जैसा लगता है। यह रूपांतरण सतही क्षेत्र को अत्यधिक बढ़ा देता है। अंकुरों में केशिकाओं का जाल फैला रहता है और एक बड़ी लसीका वाहिका (vessel) होती है जिसे

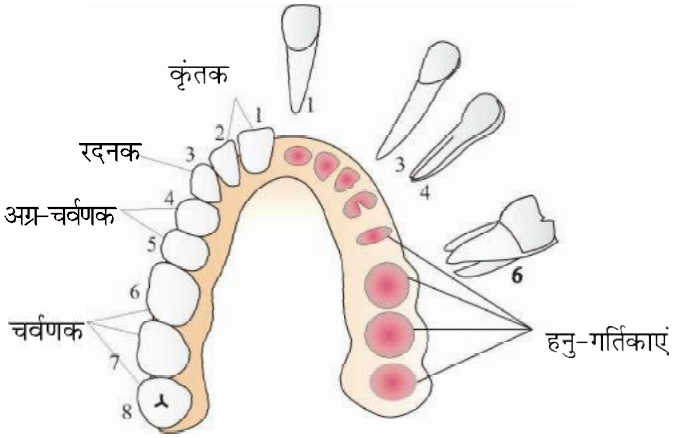

चित्र 16.2 एक ओर हनु में विभिन्न प्रकार के दंत-विन्यास और दूसरी ओर हनु-गर्तिकाओं को दर्शाते हुए।

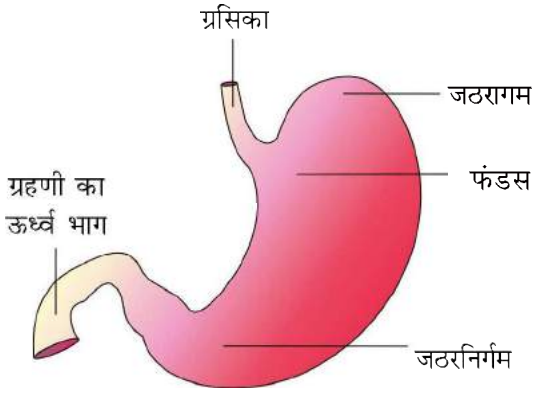

चित्र 16.3 एक ओर हनु में विभिन्न प्रकार के दंत-विन्यास और दूसरी ओर हनु-गर्तिकाओं को दर्शाते हुए।

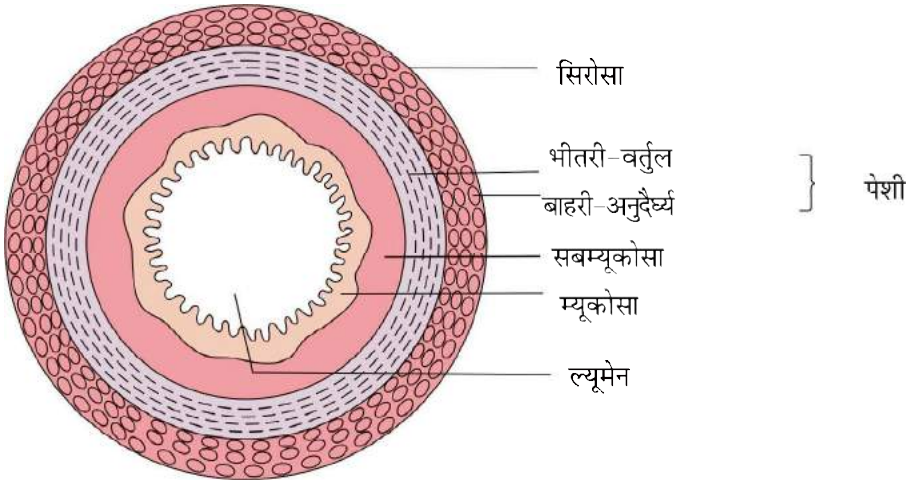

चित्र 16.4 आंत्र की अनुप्रस्थ काट का आरेखीय निरूपण

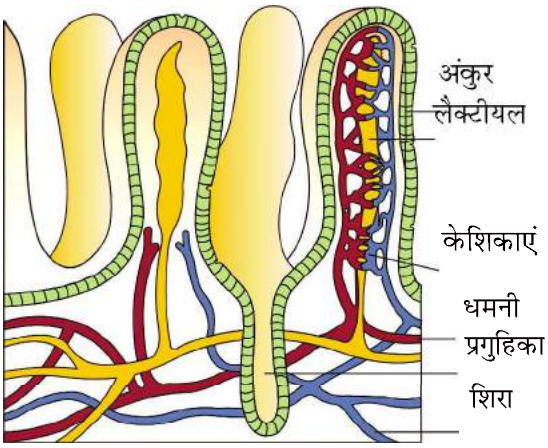

चित्र 16.5 अंकुर दर्शाते हुए क्षुद्रांत्र म्यूकोसा का एक भाग

लैक्टीयल कहते हैं। म्यूकोसा की उपकला पर कलश-कोशिकाएं होती हैं, जो स्नेहन के लिए म्यूकस का स्राव करती हैं। म्यूकोसा आमाशय और आंत में स्थित अंकुरों के आधारों के बीच लीबरकुन-प्रगुहिका (crypts of Lieberkuhn) भी कुछ ग्रंथियों का निर्माण करती है। सभी चारों परतें आहार नाल के विभिन्न भागों में रूपांतरण दर्शाती हैं।

16.1.2 पाचन ग्रंथियाँ

आहार नाल से संबंधित पाचन ग्रंथियों में लार ग्रंथियाँ, यकृत और अग्नाशय शामिल हैं।

लार का निर्माण तीन जोड़ी ग्रंथियों द्वारा होता है। ये हैं गाल में कर्णपूर्व, निचले जबड़े में अधोजंभ/अवचिबुकीय तथा जिह्वा के नीचे स्थित अधोजिह्वा। इन ग्रंथियों से लार मुखगुहा में पहुँचती है।

यकृत (liver) मनुष्य के शरीर की सबसे बड़ी ग्रंथि है जिसका वयस्क में भार लगभग 1.2 से 1.5 किलोग्राम होता है। यह उदर में मध्यपट के ठीक नीचे स्थित होता है और इसकी दो पालियाँ (lobes) होती हैं। यकृत पालिकाएं यकृत की संरचनात्मक और कार्यात्मक इकाइयां हैं जिनके अंदर यकृत कोशिकाएं रज्जु की तरह व्यवस्थित रहती हैं। प्रत्येक पालिका संयोजी ऊतक की एक पतली परत से ढकी होती है जिसे ग्लिसंस केपसूल कहते हैं। यकृत की कोशिकाओं से पित्त का स्राव होता है जो यकृत नलिका से

होते हुए एक पतली पेशीय थैली- पित्ताशय में सांद्रित एवं जमा होता है। पित्ताशय की नलिका यकृतीय नलिका से मिलकर एक मूल पित्त वाहिनी बनाती है (चित्र 16.6)। पित्ताशयी नलिका एवं अग्नाशयी नलिका, दोनों मिलकर यकृतअग्नाशयी वाहिनी द्वारा ग्रहणी में खुलती है जो ओडी अवरोधिनी से नियंत्रित होती हैं।

अग्नाशय U आकार के ग्रहणी के बीच स्थित एक लंबी ग्रंथि है जो बहि: स्रावी और अंत: स्रावी, दोनों ही ग्रंथियों की तरह कार्य करती है। बहि: स्रावी भाग से क्षारीय अग्नाशयी स्राव निकलता है, जिसमें एंजाइम होते हैं और अंत: स्रावी भाग से इंसुलिन और ग्लुकेगोन नामक हार्मोन का स्राव होता है।

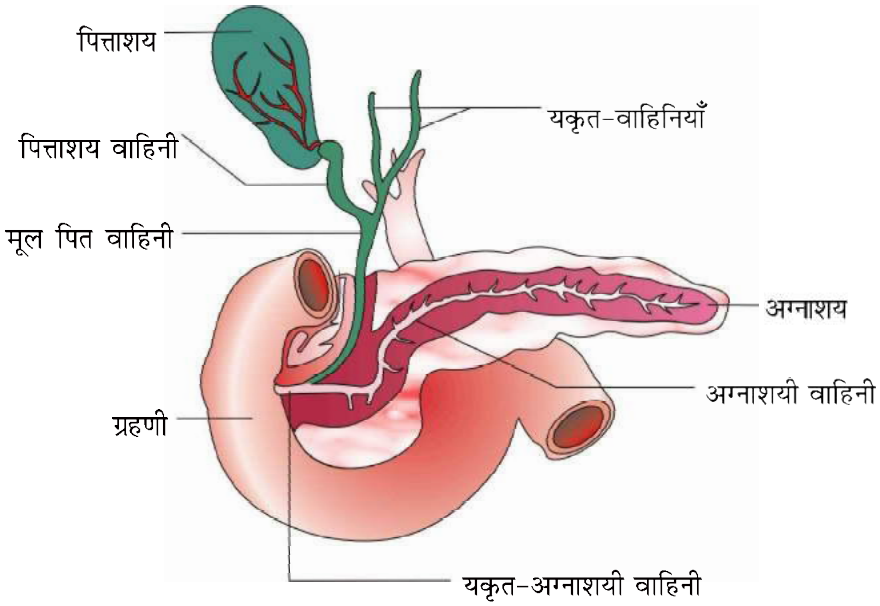

चित्र 16.6 यकृत, पित्ताशय और अनाशय का वाहिनी-तंत्र

16.2 भोजन का पाचन

पाचन की प्रक्रिया यांत्रिक एवं रासायनिक विधियों द्वारा संपन्न होती है। मुखगुहा के मुख्यत: दो प्रकार्य हैं, भोजन का चर्वण और निगलने की क्रिया। लार की मदद से दांत और जिह्वा भोजन को अच्छी तरह चबाने एवं मिलाने का कार्य करते हैं। लार का श्लेषम भोजन कणों को चिपकाने एवं उन्हें बोलस में रूपांतरित करने में मदद करता है। इसके उपरांत **निगलने की क्रिया** द्वारा **बोलस** ग्रसनी से ग्रसिका में चला जाता है। **बोलस** पेशीय संकुचन के क्रमाकुंचन (peristalsis) द्वारा ग्रसिका में आगे बढ़ता है। जठर-ग्रसिका अवरोधिनी भोजन के अमाशय में प्रवेश को नियंत्रित करती है। लार (मुखगुहा) में विद्युत-अपघट्य (electrolytes) (Na^+, K^+, Cl^-, $HCO3^-$) और एंजाइम (लार एमाइलेज या टायलिन तथा लाइसोजाइम) होते हैं। पाचन की रासायनिक प्रक्रिया

मुखगुहा में कार्बोहाइड्रेट को जल अपघटित करने वाली एंजाइम टायलिन या लार एमाइलेज की सक्रियता से प्रारंभ होती है। लगभग 30 प्रतिशत स्टार्च इसी एंजाइम की सक्रियता (pH 6.8) से द्विशर्करा माल्टोज में अपघटित होती है। लार में उपस्थित लाइसोजाइम जीवाणुओं के संक्रमण को रोकता है।

$$\text{स्टार्च} \xrightarrow[\text{pH 6.8}]{\text{लार एमाइलेज}} \text{माल्टोज}$$

आमाशय की म्यूकोसा में जठर ग्रंथियाँ स्थित होती हैं। जठर ग्रंथियों में मुख्य रूप से तीन प्रकार की कोशिकाएं होती हैं, यथा- (i) म्यूकस का स्राव करने वाली श्लेषमा ग्रीवा कोशिकाएं (ii) पेप्टिक या मुख्य कोशिकाएं जो प्रोएंजाइम पेप्सिनोजेन का स्राव करती हैं तथा (iii) भित्तीय या ऑक्सिन्टिक कोशिकाएं जो हाइड्रोक्लोरिक अम्ल और नैज कारक स्रवित करती हैं (नैज कारक विटामिन B_{12} के अवशोषण के लिए आवश्यक है)। अमाशय 4-5 घंटे तक भोजन का संग्रहण करता है। आमाशय की पेशीय दीवार के संकुचन द्वारा भोजन अम्लीय जठर रस से पूरी तरह मिल जाता है जिसे **काइम** (chyme) कहते हैं। प्रोएंजाइम पेप्सिनोजेन हाइड्रोक्लोरिक अम्ल के संपर्क में आने से सक्रिय एंजाइम पेप्सिन में परिवर्तित हो जाता है; जो आमाशय का प्रोटीन-अपघटनीय एंजाइम है। पेप्सिन प्रोटीनों को प्रोटियोज तथा पेप्टोंस (पेप्टाइडों) में बदल देता है। जठर रस में उपस्थित श्लेष्म एवं बाइकार्बोनेट श्लेष्म उपकला स्तर का स्नेहन और अत्यधिक सांद्रित हाइड्रोक्लोरिक अम्ल से उसका बचाव करते हैं। हाइड्रोक्लोरिक अम्ल पेप्सिनों के लिए उचित अम्लीय माध्यम (pH 1.8) तैयार करता है। नवजातों के जठर रस में रेनिन नामक प्रोटीन अपघटनीय एंजाइम होता है जो दूध के प्रोटीन को पचाने में सहायक होता है। जठर ग्रंथियाँ थोड़ी मात्रा में लाइपेज भी स्रवित करती हैं।

छोटी आंत का पेशीय स्तर कई तरह की गतियां उत्पन करता है। इन गतियों से भोजन विभिन्न स्रावों से अच्छी तरह मिल जाता है और पाचन की क्रिया सरल हो जाती है। यकृत अग्नाशयी नलिका द्वारा पित्त, अग्नाशयी रस और आंत्र-रस छोटी आंत में छोड़े जाते हैं। अग्नाशयी रस में ट्रिप्सिनोजन, काइमोट्रिप्सिनोजन, प्रोकार्बोक्सीपेप्टिडेस, एमाइलेज और न्युक्लिएज एंजाइम निष्क्रिय रूप में होते हैं। आंत्र म्यूकोसा द्वारा स्रावित ऐंटेरोकाइनेज द्वारा ट्रिप्सिनोजन सक्रिय ट्रिप्सिन में बदला जाता है जो अग्नाशयी रस के अन्य एंजाइमों को सक्रिय करता है। ग्रहणी में प्रवेश करने वाले पित्त में पित्त वर्णक (बिलिरूबिन एवं बिलिवर्डिन), पित्त लवण, कोलेस्टेरॉल और फास्फोलिपिड होते हैं, लेकिन कोई एंजाइम नहीं होता। पित्त वसा के इमल्सीकरण में मदद करता है और उसे बहुत छोटे मिसेल कणों में तोड़ता है। पित्त लाइपेज एंजाइम को भी सक्रिय करता है।

आंत्र श्लेषमा उपकला में **गोब्लेट कोशिकाएं** होती हैं जो श्लेषमा का स्राव करती है। म्यूकोसा के ब्रस बॉर्डर कोशिकाओं और गोब्लेट कोशिकाओं के स्राव आपस में मिलकर आंत्र स्राव अथवा **सक्कस एंटेरिकस** बनाते हैं। इस रस में कई तरह के एंजाइम होते हैं, जैसे-ग्लाइकोसिडेज डायपेप्टिडेज, एस्टरेज, न्यूक्लियोसिडेज आदि। म्यूकस अग्नाशय के बाइकार्बोनेट के साथ मिलकर आंत्र म्यूकोसा की अम्ल के दुष्प्रभाव से रक्षा करता है तथा

एंजाइमों की सक्रियता के लिए आवश्यक क्षारीय माध्यम (pH 7.8) तैयार करता है। इस प्रक्रिया में सब-म्यूकोसल ब्रूनर ग्रंथि भी मदद करती है।

आंत में पहुँचने वाले काइम में उपस्थित प्रोटीन, प्रोटियोज और पेप्टोन (आंशिक अपघटित प्रोटीन) अग्नाशय रस के प्रोटीन अपघटनीय एंजाइम निम्न रूप से क्रिया करते हैं:

प्रोटीन, पेप्टोन, प्रोप्टिोज $\xrightarrow[\text{कार्बोक्सीपेप्टिडेज}]{\text{ट्रिप्सिन/काइमोट्रिप्सिन}}$ डायपेप्टाइड

काइम के कार्बोहाइड्रेट अग्नाशयी एमाइलेज द्वारा डायसैकेराइड में जलापघटित होते हैं।

पॉलिसैकेराइड (स्टार्च) $\xrightarrow{\text{एमाइलेज}}$ डायसैकेराइड

वसा पित्त की मदद से लाइपेजेज द्वारा क्रमशः डाई और मोनोग्लिसेराइड में टूटते हैं।

वसा $\xrightarrow{\text{लाइपेज}}$ डाइग्लिसेराइड $\longrightarrow$ मोनोग्लिसेराइड

अग्नाशयी रस के न्यूक्लिएस न्यूक्लिक अम्लों को न्यूक्लियोटाइड और न्यूक्लियोसाइड में पाचित करते हैं।

न्यूक्लिक अम्ल $\xrightarrow{\text{न्यूक्लिएस}}$ न्यूक्लियोटाइड $\longrightarrow$ न्यूक्लियोसाइड

आंत्र रस के एंजाइम उपर्युक्त अभिक्रियाओं के अंतिम उत्पादों को पाचित कर अवशोषण योग्य सरल रूप में बदल देते हैं। पाचन के ये अंतिम चरण आंत के म्यूकोसल उपकला कोशिकाओं के बहुत समीप संपन्न होते हैं।

डाइपेप्टाइड $\xrightarrow{\text{डाइपेप्टिडेजेज}}$ एमीनो अम्ल

माल्टोस $\xrightarrow{\text{माल्टेस}}$ ग्लुकोस + ग्लुकोस

लैक्टोस $\xrightarrow{\text{लैक्टेस}}$ ग्लुकोस + गैलेक्टोस

सुक्रोस $\xrightarrow{\text{सुक्रेस}}$ ग्लुकोस + फ्रक्टोस

न्यूक्लियोटाइडेस $\xrightarrow{\text{न्यूक्लियोटाइड}}$ न्यूक्लियोसाइड $\xrightarrow{\text{यूक्ल्योसाइडेस}}$ शर्करा + क्षारक

डाइ व मोनोग्लिसराइड $\xrightarrow{\text{लाइपेज}}$ वसीय अम्ल + ग्लेसेरोल

ऊपर वर्णित जैव वृहत् अणुओं के पाचन की क्रिया आंत्र के ग्रहणी भाग में संपन्न होती हैं। इस तरह निर्मित सरल पदार्थ छोटी आंत के अग्रक्षुद्रांत्र और क्षुद्रांत्र भागों में अवशोषित होते हैं। अपचित तथा अनावशोषित पदार्थ बड़ी आंत में चले जाते हैं।

बड़ी आंत में कोई महत्वपूर्ण पाचन क्रिया नहीं होती है। बड़ी आंत का कार्य है- (1) कुछ जल, खनिज एवं औषध का अवशोषण (2) श्लेष्म का स्राव जो अपचित उत्सर्जी पदार्थ कणों को चिपकाने और स्नेहन होने के कारण उनका बाह्य निकास आसान बनाता है। अपचित और अवशोषित पदार्थों को मल कहते हैं, जो अस्थायी रूप से मल त्यागने से पहले तक मलाशय में रहता है।

जठरांत्रिक पथ की क्रियाएं विभिन्न अंगों के उचित समन्वय के लिए तंत्रिका और हॉर्मोन के नियंत्रण से होती है। भोजन के भोज्य पदार्थों को देखने, उनकी गंध और/अथवा मुखगुहा नली में उपस्थिति लार ग्रंथियों को स्राव के लिए उद्दीपित कर सकती हैं। इसी प्रकार जठर और आंत्रिक स्राव भी तंत्रिका संकेतों से उद्दीप्त होते हैं। आहार नाल के विभिन्न भागों की पेशियों की सक्रियता भी स्थानीय एवं केंद्रीय तंत्रिकीय क्रियाओं द्वारा नियमित होती हैं। हार्मोनल नियंत्रण के अंतर्गत, जठर और याँत्रिक म्यूकोसा से निकलने वाले हार्मोन पाचक रसों के स्राव को नियंत्रित करते हैं।[6]

16.3 पाचित उत्पादों का अवशोषण

अवशोषण वह प्रक्रिया है, जिसमें पाचन से प्राप्त उत्पाद यांत्रिक म्यूकोसा से निकलकर रक्त या लसीका में प्रवेश करते हैं। यह निष्क्रिय, सक्रिय अथवा सुसाध्य परिवहन क्रियाविधियों द्वारा संपादित होता है। ग्लुकोज, ऐमीनो अम्ल, क्लोराइड आयन आदि की थोड़ी मात्रा सरल विसरण प्रक्रिया द्वारा रक्त में पहुंच जाती हैं। इन पदार्थों का रक्त में पहुंचना सांद्रण-प्रवणता (concentration gradient) पर निर्भर है। हालांकि, ग्लूकोज और एमीनो एसिड जैसे कुछ पदार्थ वाहक प्रोटीन की मदद से अवशोषित होते हैं। इस क्रियाविधि को सुसाध्य परिवहन कहते हैं।

जल का परिवहन परासरणी प्रवणता पर निर्भर करता है। सक्रिय परिवहन सांद्रण-प्रवणता के विरुद्ध होता है जिसके लिए ऊर्जा की आवश्यकता होती है। विभिन्न पोषक तत्वों जैसे ऐमीनो अम्ल, ग्लुकोस (मोनोसैकेराइड) और सोडियम आयन (विद्युत-अपघट्य) का रक्त में अवशोषण इसी क्रियाविधि द्वारा होता है।

वसाम्ल और ग्लिसेरॉल अविलेय होने के कारण रक्त में अवशोषित नहीं हो पाते। सर्वप्रथम वे विलेय सूक्ष्म बूंदों में समाविष्ट होकर आंत्रिक म्यूकोसा में चले जाते हैं जिन्हें मिसेल (micelles) कहते हैं। ये यहाँ प्रोटीन आस्तरित सूक्ष्म वसा गोलिका में पुनः संरचित होकर अंकुरों की लसीका वाहिनियों (लेक्टियल) में चले जाते हैं। ये लसीका वाहिकाएं अंततः अवशोषित पदार्थों को रक्त प्रवाह में छोड़ देती हैं।

पदार्थों का अवशोषण आहारनाल के विभिन्न भागों जैसे-मुख, आमाशय, छोटी आंत और बड़ी आंत में होता है। परंतु सबसे अधिक अवशोषण छोटी आंत में होता है। अवशोषण सारांश (अवशोषण- स्थल और पदार्थ) तालिका 16.1 में दिया गया है।

तालिका 16.1 पाचन तंत्र के विभिन्न भागों में अवशोषण का सारांश

मुख	आमाशय	छोटी आंत	बड़ी आंत
कुछ औषधियाँ जो मुख और जिह्वा की निचली सतह के म्यूकोसा के संपर्क में आती हैं। वे आस्तरित करने वाली रुधिर कोशिकाओं में अवशोषित हो जाती हैं।	जल, सरल शर्करा, एल्कोहॉल, आदि का अवशोषण होता है।	पोषक तत्वों के अवशोषण का प्रमुख अंग। यहां पर पाचन की क्रिया पूरी होती है और पाचन के अंतिम उत्पाद, जैसे-ग्लूकोस, फ्रक्टोस, वसीय अम्ल, ग्लिसेराल, और ऐमीनो अम्ल का म्यूकोसा द्वारा रक्त प्रवाह और लसीका में अवशोषण होता है।	जल, कुछ खनिजों और औषधि का अवशोषण होता है।

अवशोषित पदार्थ अंत में ऊतकों में पहुंचते हैं जहाँ वे विभिन्न क्रियाओं के उपयोग में लाए जाते हैं। इस प्रक्रिया को स्वांगीकरण (assimilation) कहते हैं।

पाचक अवशिष्ट मलाशय में कठोर होकर संबद्ध मल वन जाता है जो तांत्रिक प्रतिवर्ती (neural reflex) क्रिया को शुरू करता है जिससे मलत्याग की इच्छा पैदा होती है। मलद्वार से मल का बहिक्षेपण एक ऐच्छिक क्रिया है जो एक बृहत् क्रमाकुंचन गति से पूरी होती है।

16.4 पाचन तंत्र के विकार (Disorder) और अनियमितताएं

आंत्र नलिका का शोथ जीवाणुओं और विषाणुओं के संक्रमण से होने वाला एक सामान्य विकार है। आंत्र का संक्रमण परजीवियों, जैसे- फीता कृमि, गोलकृमि, सूत्रकृमि, हुकवर्म, पिनवर्म, आदि से भी होता है।[7]

पीलिया *(Jaundice)* **:** इसमें यकृत प्रभावित होता है। पीलिया में त्वचा और आंख पित्त वर्णकों के जमा होने से पीले रंग के दिखाई देते हैं।

वमन *(Vomiting)* **:** यह आमाशय में संगृहीत पदार्थों की मुख से बाहर निकलने की क्रिया है। यह प्रतिवर्ती क्रिया मेडुला में स्थित वमन केंद्र से नियंत्रित होती है। उल्टी से पहले बेचैनी की अनुभूति होती है।

प्रवाहिका *(Diarrhoea)* **:** आंत्र (bowel) की अपसामान्य गति की बारंबारता और मल का अत्यधिक पतला हो जाना प्रवाहिका (diarrhoea) कहलाता है। इसमें भोजन अवशोषण की क्रिया घट जाती है।

कोष्ठबद्धता (कब्ज) *(Constipation)* **:** कब्ज में, मलाशय में मल रुक जाता है और आंत्र की गतिशीलता अनियमित हो जाती है।

अपच *(Indigestion)* **:** इस स्थिति में, भोजन पूरी तरह नहीं पचता है और पेट भरा-भरा महसूस होता है। अपच एंजाइमों के स्राव में कमी, व्यग्रता, खाद्य विषाक्तता, अधिक भोजन करने, एवं मसालेदार भोजन करने के कारण होती है।

सारांश

मानव के पाचन तंत्र में एक आहार नाल और सहयोगी ग्रंथियाँ होती हैं। आहर नाल मुख, मुखगुहा, ग्रसनी, ग्रसिका, आमाशय, क्षुद्रांत्र, वृहदांत्र, मलाशय और मलद्वार से बनी होती है। सहायक पाचन ग्रंथियों में लार ग्रंथि, यकृत (पित्ताशय सहित) और अग्नाशय हैं। मुख के अंदर दाँत भोजन को चबाते हैं, जीभ स्वाद को पहचानती है और भोजन को लार के साथ मिलाकर इसे अच्छी तरह से चबाने के लिए सुगम बनाती है। लार में मंड या मांड (स्टार्च) पचाने वाली पाचक एंजाइम, लार एमिलेज होती है जो मांड को पचाकर माल्टोस (डाइसैकेराइड) में बदल देती हैं। इसके बाद भोजन ग्रसनी से होकर बोलस के रूप में ग्रसिका में प्रवेश करता है, जो आगे क्रमाकुंचन द्वारा आमाशय तक ले जाया जाता है। आमाशय में मुख्यत: प्रोटीन का पाचन होता है। सरल शर्कराओं, अल्कोहल और दवाओं का भी आमाशय में अवशोषण होता है।

काइम क्षुद्रांत्र के ग्रहणी भाग में प्रवेश करता है जहाँ अग्नाशयी रस, पित्त और अंत में आंत्र रस के एंजाइमों द्वारा कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन और वसा का पाचन पूरा होता है। इसके बाद भोजन छोटी आँत के अग्र क्षुद्रांत्र (जेजुनम) और क्षुद्रांत्र (इलियम) भाग में जाता है।

पाचन के पश्चात कार्बोहाइड्रट, ग्लुकोस जैसे- मोनोसैकेराइड में परिवर्तित हो जाते हैं। अंतत: प्रोटीन टूटकर ऐमीनो अम्लों में तथा वसा, वसीय अम्लों और ग्लिसेराल में परिवर्तित हो जाते हैं। आँत-उत्पादों का पाचित आँत अंकुरों के उपकला स्तर द्वारा शरीर में अवशोषित हो जाता है। अपचित भोजन (मल) त्रिकांत्र (ileoceacal) कपाट द्वारा वृहदांत्र की अंधनाल (caecum) में प्रवेश करता है। इलियो सीकल कपाट मल को वापस नहीं जाने देता। अधिकांश जल बड़ी आँत में अवशोषित हो जाता है। अपचित भोजन अर्ध ठोस होकर मलाशय और गुदा नाल में पहुँचता है और अंतत: गुदा द्वारा बहि:क्षेपित हो जाता है।

अभ्यास

1. निम्नलिखित में से सही उत्तर छाँटें :
   (क) आमाशय रस में होता है-
      (अ) पेप्सिन, लाइपेस और रेनिन
      (ब) ट्रिप्सिन, लाइपेस और रेनिन
      (स) ट्रिप्सिन, पेप्सिन और लाइपेस
      (द) ट्रिप्सिन, पेप्सिन और रेनिन
   (ख) सक्कस एंटेरिकस नाम दिया गया है-
      (अ) क्षुद्रांत्र (illum) और बड़ी आँत के संधिस्थल के लिए
      (ब) आंत्रिक रस के लिए
      (स) आहार नाल में सूजन के लिए
      (द) परिशेषिका (appendix) के लिए

2. स्तंभ I का स्तंभ II से मिलान कीजिए।

स्तंभ I	**स्तंभ II**
बिलिरुबिन और बिलिवर्डिन	पैरोटिड
मंड (स्टार्च) का जल-अपघटन	पित्त
वसा का पाचन	लाइपेस
लार ग्रंथि	एमाइलेस

3. संक्षेप में उत्तर दें :
   (क) अंकुर (villi) छोटी आंत में होते हैं, आमाशय में क्यों नहीं ?
   (ख) पेप्सिनोजेन अपने सक्रिय रूप में कैसे परिवर्तित होता है ?
   (ग) आहार नाल की दीवार के मूल स्तर क्या हैं ?
   (घ) वसा के पाचन में पित्त कैसे मदद करता है?
4. प्रोटीन के पाचन में अग्नाशयी रस की भूमिका स्पष्ट करें।
5. आमाशय में प्रोटीन के पाचन की क्रिया का वर्णन करें।
6. मनुष्य का दंत-सूत्र बताइए।
7. पित्त रस में कोई पाचक एंजाइम नहीं होते, फिर भी यह पाचन के लिए महत्वपूर्ण हैं; क्यों?
8. पाचन में काइमोट्रिप्सिन की भूमिका वर्णित करें। जिस ग्रंथि से यह स्रवित होता है, इसी श्रेणी के दो अन्य एंजाइम कौन से हैं?
9. पॉलि सैकेराइड और डाइसैकेराइड का पाचन कैसे होता है?
10. यदि आमाशय में हाइड्रोक्लोरिक अम्ल का स्राव नहीं होगा तो तब क्या होगा?
11. आपके द्वारा खाए गए मक्खन का पाचन और उसका शरीर में अवशोषण कैसे होता है? विस्तार से वर्णन करें।
12. आहार नाल के विभिन्न भागों में प्रोटीन के पाचन के मुख्य चरणों का विस्तार से वर्णन करें।
13. 'गर्तदंती' (thocodont) और 'द्विबारदंती' (diphyodont) शब्दों की व्याख्या करें।
14. विभिन्न प्रकार के दाँतों का नाम और एक वयस्क मनुष्य में दाँतों की संख्या बताएं।
15. यकृत के क्या कार्य हैं ?

अध्याय 17

श्वसन और गैसों का विनिमय

17.1 *श्वसन के अंग*

17.2 *श्वसन की क्रियाविधि*

17.3 *गैसों का विनिमय*

17.4 *गैसों का अभिगमन*

17.5 *श्वसन का नियंत्रण*

17.6 *श्वसन संबंधी विकार*

जैसाकि आप पहले पढ़ चुके हैं, सजीव पोषक तत्वों जैसे- ग्लूकोज को तोड़ने के लिए ऑक्सीजन (O_2) का परोक्ष रूप से उपयोग करते हैं, जिससे विभिन्न क्रियाओं को संपादित करने के लिए आवश्यक ऊर्जा प्राप्त होती है उपरोक्त अपचयी क्रियायों में कार्बनडाइऑक्साइड (CO_2) भी मुक्त होती है जो हानिकारक है। इसलिए यह आवश्यक है कि कोशिकाओं को लगातार O_2 उपलब्ध कराई जाए और CO_2 को बाहर मुक्त किया जाए। वायुमंडलीय O_2 और कोशिकाओं में उत्पन्न CO_2 के आदान-प्रदान (विनिमय)की इस प्रक्रिया को **श्वासन** (Breathing) समान्यतया **श्वसन** (Respiration) कहते हैं। अपने हाथों को अपने सीने पर रखिए, आप सीने को ऊपर नीचे होते हुए अनुभव कर सकते हैं। आप जानते हैं कि यह श्वसन के कारण है। हम श्वास कैसे लेते हैं? इस अध्याय के निम्नलिखित खंडों में श्वसन अंगों और श्वसन की क्रियाविधि का वर्णन किया गया है।

17.1 श्वसन के अंग

प्राणियों के विभिन्न वर्गों के बीच श्वसन की क्रियाविधि उनके निवास और संगठन के अनुसार बदलती है। निम्न अकशेरुकी जैसे स्पंज, सीलंटेरेटा चपटेकृमि आदि O_2 और CO_2 का आदान-प्रदान अपने सारे शरीर की सतह से सरल विसरण द्वारा करते हैं। केंचुए अपनी आर्द्र क्यूटिकल को श्वसन के लिए उपयोग करते हैं। कीटों के शरीर में नलिकाओं का एक जाल (श्वसन नलिकाएं) होता है; जिनसे वातावरण की वायु का उनके शरीर

में विभिन्न स्थान पर पहुँचती है; ताकि कोशिकाएं सीधे गैसों का आदान-प्रदान कर सकें। जलीय आर्थोपोडा तथा मौलस्का में श्वसन विशेष संवहनीय संरचना **क्लोम** (गिल) द्वारा होता है, जबकि स्थलचर प्राणियों में श्वसन विशेष संवहनीय थैली फुप्फुस/**फेफड़े** द्वारा होता है। कशेरुकों में मछलियाँ क्लोम (गिल) द्वारा श्वसन करती हैं जबकि सरीसृप,पक्षी और स्तनधारी फेफड़ों द्वारा श्वसन करते हैं। उभयचर जैसे मेंढक अपनी आर्द्र त्वचा (नम त्वचा) द्वारा भी श्वसन कर सकते हैं। स्तनधारियों में एक पूर्ण विकसित श्वसन प्रणाली होती है।

17.1.1 मानव श्वसन तंत्र

हमारे एक जोड़ी बाह्य नासाद्वार होते हैं, जो होठों के ऊपर बाहर की तरफ खुलते हैं। ये नासा मार्ग द्वारा नासा कक्ष तक पहुँचते हैं। नासा कक्ष **ग्रसनी** में खुलते हैं। ग्रसनी आहार और वायु दोनों के लिए उभयनिष्ठ मार्ग है। ग्रसनी कंठ द्वारा **श्वासनली** में खुलती है। कंठ एक उपास्थिमय पेटिका है जो ध्वनि उत्पादन में सहायता करती है इसीलिए इसे **ध्वनि पेटिका** भी कहा जाता है। भोजन निगलते समय घाँटी एक पतली लोचदार उपास्थिल पल्ले/फ्लैप **कंठच्छद**(epiglottis) से ढक जाती है, जिससे आहार ग्रसनी से कंठ में प्रवेश न कर सके। श्वासनली एक सीधी नलिका है जो वक्ष गुहा के मध्य तक 5वीं वक्षीय कशेरुकी तक जाकर दाईं और बाईं दो प्राथमिक **श्वसनियों** में विभाजित हो जाती है। प्रत्येक श्वसनी कई बार विभाजित होते हुए द्वितीयक एवं तृतीयक स्तर की श्वसनी, श्वसनिका और बहुत पतली अंतस्थ श्वसनिकाओं में समाप्त होती हैं। श्वासनली, प्राथमिक, द्वितीयक एवं तृतीयक श्वसनी तथा प्रारंभिक श्वसनिकाएं अपूर्ण उपास्थिल वलयों से आलंबित होती हैं। प्रत्येक अंतस्थ श्वसनिका बहुत सारी पतली अनियमित भित्ति युक्त वाहिकायित थैली जैसी संरचना कूपिकाओं में खुलती है, जिसे **वायु कूपिका** कहते हैं। श्वसनी, श्वसनिकाओं और कूपिकाओं का शाखित जाल फेफड़ों (lungs) की रचना करते हैं (चित्र 17.1)। हमारे दो फेफड़े हैं जो एक द्विस्तरीय फुप्फुसावरण (pleura) से ढके रहते हैं और जिनके बीच फुप्फुसावरणी द्रव भरा होता है। यह फेफड़े की सतह पर घर्षण कम करता है। बाहरी फुप्फुसावरणी झिल्ली वक्षीय पर्त के निकट संपर्क में रहती है; जबकि आंतरिक फुप्फुसावरणी झिल्ली फेफड़े की सतह के संपर्क में होती है। बाह्य नासारंध्र से अंतस्थ श्वसनिकाओं तक का भाग चालन भाग; जबकि कूपिकाएं एवं उनकी नलिकाएं श्वसन तंत्र का श्वसन या विनिमय भाग गठित करती हैं। चालन भाग वायुमंडलीय वायु को कूपिकाओं तक संचारित करता है, इसे बाहरी कणों से मुक्त करता है, आर्द्र करता है तथा वायु को शरीर के तापक्रम तक लाता है। विनिमय भाग (आदान-प्रदान इकाई) रक्त एवं वायुमंडलीय वायु के बीच O_2 और CO_2 का वास्तविक विसरण स्थल है। फेफड़े वक्ष-गुहा में स्थित होते हैं जो शारीरत: एक वायुरोधी कक्ष है। वक्ष-गुहा कक्ष पृष्ठ भाग में कशेरुक दंड, अधर भाग में उरोस्थि, पार्श्व में पसलियों और नीचे से गुंबदाकर डायाफ्राम (diaphragm) द्वारा बनता है। वक्ष में फेफड़ों की शारीरिक व्यवस्था ऐसी होती है कि वक्ष गुहा के आयतन में कोई भी परिवर्तन फेफड़े (फुप्फुसी) की गुहा में प्रतिबिंबित हो जाएगा। श्वसन के लिए ऐसी व्यवस्था आवश्यक है, क्योंकि हम लोग सीधे फेफड़ों का आयतन नहीं बदल सकते।

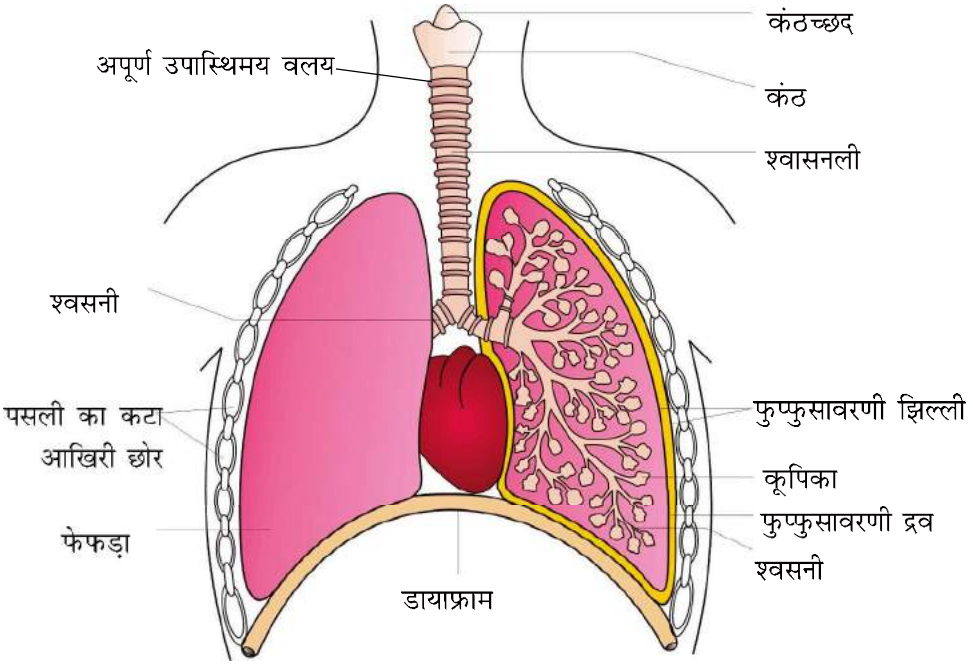

चित्र 17.1 मानव श्वसन तंत्र का आरेखीय दृश्य (साथ ही बाएं फेफड़े का अनुप्रस्थ काट दिखाया गया है)

श्वसन में निम्नलिखित चरण सम्मिलित हैं:

(i) श्वसन या फुप्फुसी संवातन जिससे वायुमंडलीय वायु अंदर खींची जाती है और CO_2 से भरपूर कूपिका की वायु को बाहर मुक्त किया जाता है।

(ii) कूपिका झिल्ली के आर-पार गैसों (O_2 और CO_2) का विसरण।

(iii) रुधिर द्वारा गैसों का परिवहन (अभिगमन)

(iv) रुधिर और ऊतकों के बीच O_2 और CO_2 का विसरण।

(v) अपचयी क्रियायों के लिए कोशिकाओं द्वारा O_2 का उपयोग और उसके फलस्वरूप CO_2 का उत्पन्न होना (कोशिकीय श्वसन,जैसे कि अध्याय 14-श्वसन में बताया गया है)।

17.2 श्वासन की क्रियाविधि

श्वासन में दो चरण सम्मिलित है: **अंत:श्वसन** (श्वासन) जिसके दौरान वायुमंडलीय वायु को अंदर खीचा जाता है और **नि:श्वसन** जिसके द्वारा फुप्फुसी वायु को बाहर मुक्त किया जाता है। वायु को फेफड़ों के अंदर ले जाने के लिए फेफड़ों एवं वायुमंडल के बीच दाब प्रवणता निर्मित की जाती है।

अंत:श्वसन तभी हो सकता है जब वायुमंडलीय दाब से फेफड़ों की वायु का दाब (आंतर फुप्फुसी दाब) कम हो अर्थात् फेफड़ों का दाब वायुमंडलीय दाब के सापेक्ष कम होता है। इस तरह नि:श्वसन तब होता है, जब आंतर फुप्फुसी दाब वायुमंडलीय दाब से

अधिक होता है। डायाफ्राम और एक विशिष्ट पेशी समूह (पसलियों के बीच स्थित बाह्य एवं अंत: अंतरापर्शुक /इंटरकोस्टल) इस तरह की प्रवणताएं उत्पन्न करते हैं । अंत:श्वसन डायाफ्राम के संकुचन से प्रारंभ होता है जो अग्र पश्च अक्ष (antero posterior axis) में वक्ष गुहा का आयतन बढ़ा देता है। बाह्य अंतरापर्शुक पेशियों का संकुचन पसलियों और उरोस्थि को ऊपर उठा देता है, जिससे पृष्ठधार अक्ष (dorso ventral axis) में वक्ष-गुहा कक्ष का आयतन बढ़ जाता है। वक्ष गुहा के आयतन में किसी प्रकार से भी हुई वृद्धि के कारण फुप्फुस के आयतन में भी समान वृद्धि होती है। यह समान तरह की वृद्धि फुप्फुसी दाब को वायुमंडलीय दाब से कम कर देती है, जिससे बाहर की वायु बलपूर्वक फेफड़ों के अंदर आ जाती है अर्थात् अंत:श्वसन की क्रिया होती है (चित्र-17.2अ)। डायाफ्राम और अंतरापर्शुक पेशियों का शिथिलन (relaxation) डायाफ्रम और उरोस्थि को उनके सामान्य स्थान पर वापस कर देता है और वृक्षीय आयतन को घटाता है जिससे फुप्फुसी आयतन भी घट जाता है। इसके परिणामस्वरूप अंतर फुप्फुसी दाब वायुमंडलीय दाब से थोड़ा अधिक हो जाता है, जिससे फेफड़ों की हवा बाहर निकल जाती है अर्थात् नि:श्वसन हो जाता है (चित्र 17.2 ब)। हम अपनी अतिरिक्त उदरीय पेशियों की सहायता से अंत:श्वसन और नि:श्वसन की क्षमता को बढ़ा सकते हैं। औसतन एक स्वस्थ मनुष्य प्रति मिनट 12-16 बार श्वसन करता है। श्वसन गतिविधियों में सम्मिलित वायु के आयतन का आकलन स्पाइरोमीटर की सहायता से किया जा सकता है जो फुप्फुसी कार्यकलापों का नैदानिक मूल्यांकन करने में सहायक होता है।

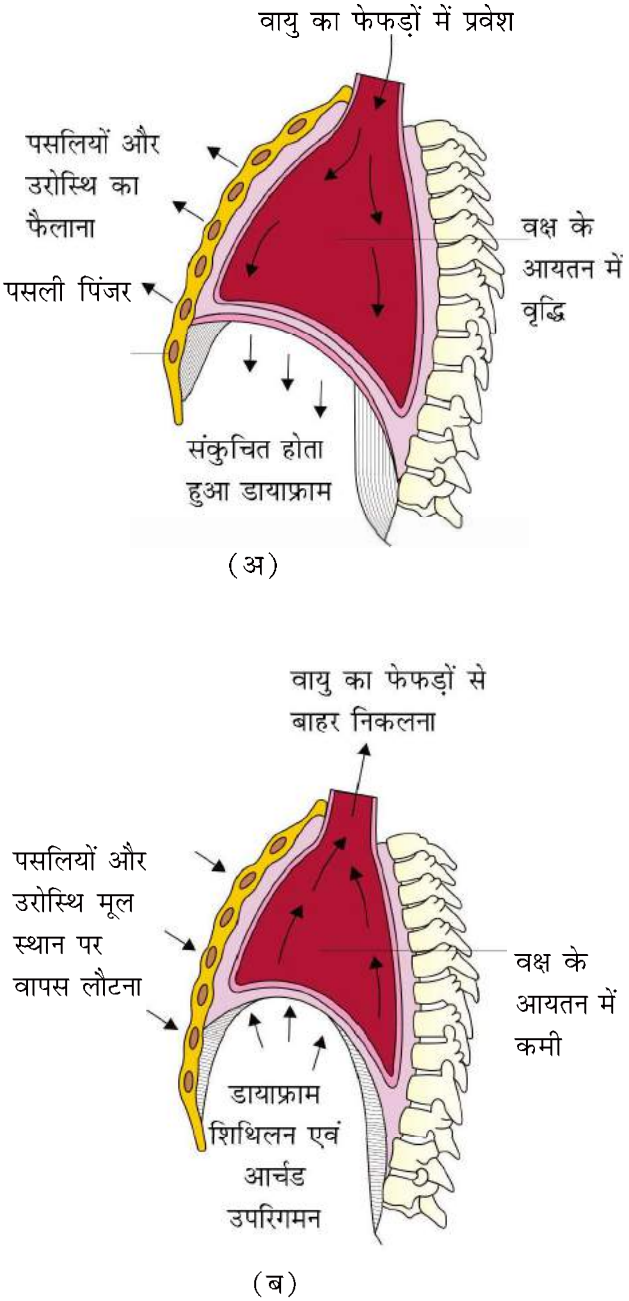

चित्र 17.2 (अ) अंत: श्वसन (ब) नि:श्वसन दर्शाते हुए श्वसन की क्रियाविधि

17.2.1 श्वसन संबंधी आयतन और क्षमताएं

ज्वारीय आयतन (Tidal Volume/ TV): सामान्य श्वसन क्रिया के समय प्रति श्वास अंत: श्वासित या नि:श्वासित वायु का आयतन यह लगभग 500 मिली. होता है अर्थात् स्वस्थ मनुष्य लगभग 6000 से 8000 मिली. वायु प्रति मिनट की दर से अंत: श्वासित/नि:श्वासित कर सकता है।

अंत:श्वसन सुरक्षित आयतन (Inspiratory Reserve Volume IRV): वायु आयतन की वह अतिरिक्त मात्रा जो एक व्यक्ति बलपूर्वक अंत: श्वासित कर सकता है। यह औसतन 2500 मिली. से 3000 मिली. होता है।

नि:श्वसन सुरक्षित आयतन (Expiratory reserve volume, ERV): वायु आयतन की वह अतिरिक्त मात्रा जो एक व्यक्ति बलपूर्वक नि:श्वासित कर सकता है। औसतन यह 1000 मिली. से 1100 मिली. होती है।

अवशिष्ट आयतन (Residual Volume RV): वायु का वह आयतन जो बलपूर्वक नि:श्वसन के बाद भी फेफड़ों में शेष रह जाता है। इसका औसत 1100 मिली. से 1200 मिली. होता है।

ऊपर वर्णित कुछ श्वसन संबंधी आयतनों को जोड़कर फुप्फुसी क्षमताएं (फुप्फुसी धारिताएं) निकाली जा सकती हैं जिनका नैदानिक उद्देश्यों में उपयोग किया जा सकता है।

अंत:श्वसन क्षमता (Inspiratory Capacity, IC): सामान्य नि:श्वसन उपरांत वायु की कुल मात्रा (आयतन)जो एक व्यक्ति अंत:श्वासित कर सकता है। इसमें ज्वारीय आयतन तथा अंत:श्वसन सुरक्षित आयतन सम्मिलित है (TV+IRV)।

नि:श्वसन क्षमता (Expiratory Capacity, EC): सामान्य अंत:श्वसन उपरांत वायु की कुल मात्रा (आयतन) जिसे एक व्यक्ति नि:श्वासित कर सकता है। इसमें ज्वारीय आयतन और नि:श्वसन सुरक्षित आयतन सम्मिलित होते हैं (TV+ERV)।

क्रियाशील अवशिष्ट क्षमता (Functional Residual Capacity, FRC): सामान्य नि:श्वसन उपरांत वायु की वह मात्रा (आयतन)जो फेफड़ों में शेष रह जाती है। इसमें नि:श्वसन सुरक्षित आयतन और अवशिष्ट आयतन सम्मिलित होते हैं (ERV+RV)।

जैव क्षमता (Vital Capacity, VC): बलपूर्वक नि:श्वसन के बाद वायु की वह अधिकतम मात्रा (आयतन)जो एक व्यक्ति अंत:श्वासित कर सकता है। इसमें ERV, TV और IRV सम्मिलित है अथवा वायु की वह अधिकतम मात्रा जो एक व्यक्ति बलपूर्वक अंत:श्वसन के बाद नि:श्वासित कर सकता है।

फेफड़ों की कुल क्षमता (Total Lung Capacity): बलपूर्वक नि:श्वसन के पश्चात फेफड़ों में समायोजित (उपस्थित) वायु की कुल मात्रा । इसमें RV,ERV,TV और IRV सम्मिलित है। यानि जैव क्षमता + अवशिष्ट क्षमता (VC+RV)।

17.3 गैसों का विनिमय

कुपिकाएं गैसों के विनिमय के लिए प्राथमिक स्थल होती हैं। गैसों का विनिमय रक्त और ऊतकों के बीच भी होता है। इन स्थलों पर O_2 और CO_2 का विनिमय दाब अथवा सांद्रता प्रवणता के आधार पर सरल विसरण द्वारा होता है। गैसों की घुलनशीलता के साथ-साथ विसरण में सम्मिलित झिल्लियों की मोटाई भी विसरण की दर को प्रभावित करने वाले कुछ महत्वपूर्ण घटक हैं।

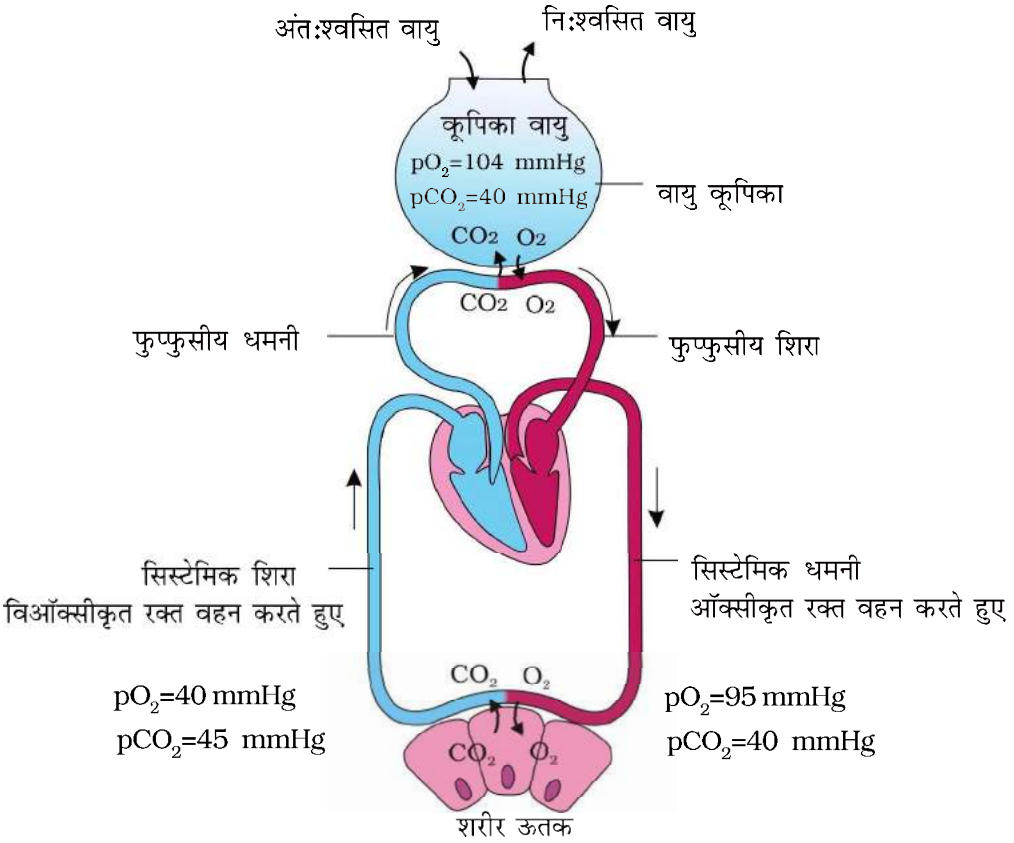

चित्र 17.3 वायु कूपिका एवं शरीर ऊतकों के बीच गैसों का विनिमय जो ऑक्सीजन तथा कार्बन -डाइऑक्साइड का रक्त के साथ वहन का आरेखीय चित्र

गैसों के मिश्रण में किसी विशेष गैस की दाब में भागीदारी को आंशिक दाब कहते हैं और उसे ऑक्सीजन तथा कार्बनडाइऑक्साइड के लिए क्रमश: pO_2 तथा pCO_2 द्वारा दर्शाते हैं। वायुमंडलीय वायु और दोनों विसरण स्थलों में इन दो गैसों के आंशिक दाब तालिका 17.1 और चित्र 17.3 में दर्शाए गए है। सारणी में दिए गए आँकड़ें स्पष्ट रूप से कूपिकाओं से रक्त और रक्त से ऊतकों में ऑक्सीजन के लिए सांद्रता प्रवणता का संकेत देते हैं। इसी प्रकार CO_2 के लिए विपरीत दिशा में प्रवणता दर्शाई गई है, अर्थात् ऊतकों से रक्त और रक्त से कूपिकाओं की तरफ। चूँकि CO_2की घुनलशीलता O_2 की

तालिका 17.1 वातावरण की तुलना में विसरण में सम्मिलित विभिन्न भागों पर ऑक्सीजन एवं कार्बनडाइऑक्साइड का आंशिक दबाव (mm Hg में)

श्वसन	वातावरणीय वायु	वायु कूपिका	अनॉक्सीकृत रक्त	ऑक्सीकृत रक्त	ऊतक
O_2	159	104	40	95	40
CO_2	0.3	40	45	40	45

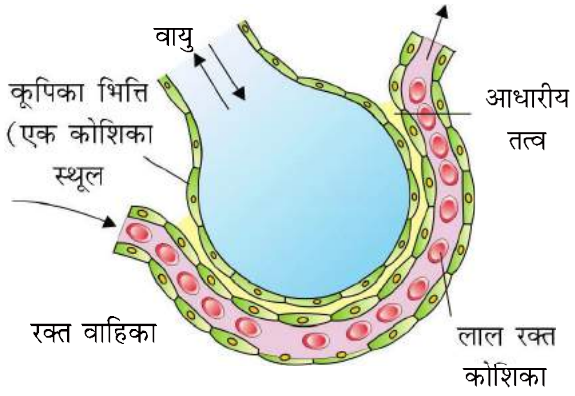

चित्र 17.4 एक फुप्फुसीय वाहिका की एक वायुकूपिका का अनुप्रस्थ काट

घुलनशीलता से 20-25 गुना अधिक होती है, अंत:विसरण झिल्लिका में से प्रति इकाई आंशिक दाब के अंतर की विसरित होने वाली CO_2 मात्रा O_2 की तुलना में बहुत अधिक होती है। विसरण झिल्लिका मुख्य रूप से तीन स्तरों की बनी होती है, (चित्र 17.4), यथा कूपिका की पतली शल्की उपकला (शल्की एपिथिलियम), कूपिकाओं की कोशिकाओं की अंत:कला और उनके बीच स्थित आधारी तत्व । फिर भी, इनकी कुल मोटाई एक मिलीमीटर से बहुत कम होती है। इसलिए हमारे शरीर में सभी कारक O_2 के कूपिकाओं से ऊतकों और CO_2 के ऊतकों से कूपिकाओं में विसरण के लिए अनुकूल होते हैं।

17.4 गैसों का परिवहन (Transport of Gases)

O_2 और CO_2 के परिवहन का माध्यम रक्त होता है। लगभग 97 प्रतिशत O_2 का परिवहन रक्त में लाल रक्त कणिकाओं द्वारा होता है। शेष 3 प्रतिशत O_2 का प्लाजमा द्वारा घुल्य अवस्था में होता हैं। लगभग 20-25 प्रतिशत CO_2 का परिवहन लाल रक्त कणिकाओं द्वारा है, जबकि 70 प्रतिशत का बाईकार्बोनेट के रूप में अभिगमित होती है। लगभग 7 प्रतिशत CO_2 प्लाजमा द्वारा घुल्य अवस्था होता हैं।

17.4.1 ऑक्सीजन का परिवहन (Transport of Oxygen)

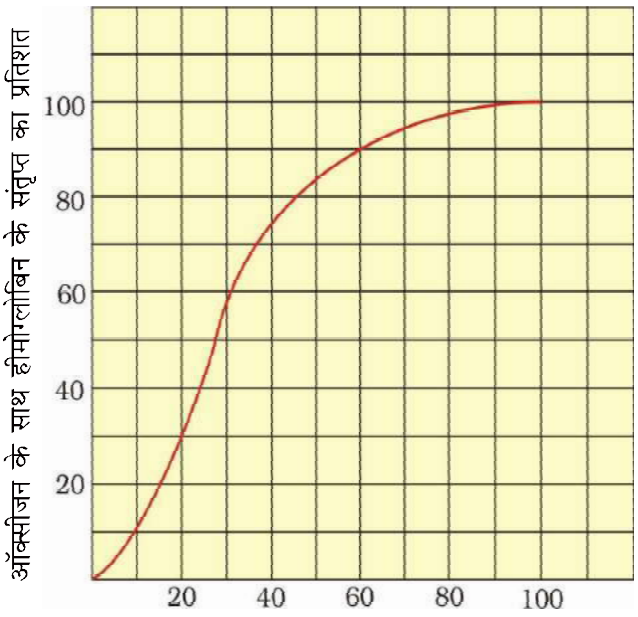

चित्र 17.5 ऑक्सीजन वियोजन वक्र

हीमोग्लोबिन लाल रक्त कणिकाओं में स्थित एक लाल रंग का लौहयुक्त वर्णक है। हीमोग्लोबिन के साथ उत्क्रमणीय (Rerersible) ढंग से बंधकर ऑक्सीजन **ऑक्सी-हीमोग्लोबिन** का गठन कर सकता है। प्रत्येक हीमोग्लोबिन अणु अधिकतम चार O_2 अणुओं के वहन कर सकते हैं। हीमोग्लोबिन के साथ ऑक्सीजन का बंधना प्राथमिक तौर पर O_2 के आंशिक दाब से संबंधित है। CO_2 का आंशिक दाब हाइड्रोजन आयन सांद्रता और तापक्रम कुछ अन्य कारक हैं जो इस बंधन को बाधित कर सकते हैं। हीमोग्लोबिन की ऑक्सीजन से प्रतिशत संतृप्ति को pO_2 के सापेक्ष आलेखित करने पर सिग्माभ वक्र (Sigmoid Curve) प्राप्त होता है। इस वक्र को वियोजन वक्र (Dissociation Curve) कहते हैं जो हीमोग्लोबिन से O_2 बंधन को प्रभावित करने वाले pCO_2, H^+ आयन सांद्रता, आदि घटकों के अध्ययन में अत्यधिक सहायक होता है (चित्र 17.5)। कूपिकाओं में जहाँ उच्च pO_2, निम्न pCO_2, कम H^+ सांद्रता और

निम्न तापक्रम होता है, वहाँ ऑक्सीहीमोग्लोबिन बनाने के लिए ये सभी घटक अनुकूल साबित होते हैं जबकि ऊतकों में निम्न pO_2, उच्च pCO_2, उच्च H^+ सांद्रता और उच्च तापक्रम की स्थितियाँ ऑक्सीहीमोग्लोबिन से ऑक्सीजन के वियोजन के लिए अनुकूल होती हैं। इससे स्पष्ट है कि O_2 हीमोग्लोबिन से फेफड़ों की सतह पर बँधता है और ऊतकों में वियोजित हो जाती है। प्रत्येक 100 मिली. ऑक्सीजनित रक्त सामान्य शरीर क्रियात्मक स्थितियों में ऊतकों को लगभग 5 मिली. O_2 प्रदान करता है।

17.4.2 कार्बनडाइऑक्साइड का परिवहन

कार्बनडाइऑक्साइड (CO_2) हीमोग्लोबिन द्वारा **कार्बामीनो-हीमोग्लोबिन** (लगभग 20–25 प्रतिशत) के रूप में वहन की जाती है। यह बंधनीयता (बंधन) CO_2 के आंशिक दाब से संबंधित होती है। pO_2 इस बंधन को प्रभावित करने वाला एक मुख्य कारक है ऊतकों में उच्च pCO_2 और निम्न pO_2 की अवस्था होने से हीमोग्लोबिन से CO_2 का बंधन होता है; जबकि कूपिका में, जहाँ pCO_2 निम्न और pO_2 उच्च होता है, कार्बामीनो-हीमोग्लोबिन से CO_2 का वियोजन होने लगता है अर्थात् ऊतकों में हीमोग्लोबिन से बंधित CO_2 कूपिका में मुक्त हो जाती है। एंजाइम कार्बोनिक एन्हाइड्रेज की सांद्रता लाल रक्त कणिकाओं में उच्च और प्लाज्मा में अल्प होती है। इस एंजाइम से निम्नलिखित प्रतिक्रिया दोनों दिशाओं में सुगम होती है।

$$CO_2 + H_2O \xleftrightarrow{\text{कार्बोनिक एंहाइड्रेज}} H_2CO_3 \xleftrightarrow{\text{कार्बोनिक एंहाइड्रेज}} HCO_3^- + H^+$$

ऊतकों में अपचय के कारण pCO_2 अधिक होने से CO_2 रक्त (RBCsऔर प्लाज्मा) में विसरित होती है और HCO_3 और H^+ बनाती है। कूपिका में pCO_2 कम होने से प्रतिक्रिया की दिशा विपरीत हो जाती है जिससे CO_2 और H_2o बनते हैं। इस तरह बाईकार्बोनेट के रूप में ऊतक स्तर पर ग्रहित (Trapped) और कूपिका तक परिवहित कार्बनडाइऑक्साइड बाहर की तरफ पुनः CO_2 के रूप में मुक्त हो जाती है (चित्र 17.4)। प्रति 100 मिलीलीटर विऑक्सीजनित रक्त द्वारा कूपिका में लगभग CO_2 की 4 मिली. मात्रा मुक्त होती है।

17.5 श्वसन का नियमन (Regulation of Respiration)

मानव में अपने शरीर के ऊतकों की माँग के अनुरूप श्वसन की लय को संतुलित और स्थिर बनाए रखने की एक महत्वपूर्ण क्षमता है। यह नियमन तंत्रिका तंत्र द्वारा संपन्न होता है। मस्तिष्क के मेड्यूला क्षेत्र में एक विशिष्ट श्वसन लयकेंद्र विद्यमान होता है, जो मुख्य रूप से श्वसन के नियमन के लिए उत्तरदायी होता है। मस्तिष्क के पोंस क्षेत्र में एक अन्य केंद्र स्थित होता है जिसे **श्वासप्रभावी** (श्वास अनुचन) (Pneumotaxic) केंद्र कहते हैं जो श्वसन लयकेंद्र के कार्यों को संयत (सुधार) कर सकता है। इस केंद्र के तंत्रिका संकेत अंत:श्वसन की अवधि को कम कर सकते हैं और इस प्रकार श्वसन दर (Respiratory rate) को परिवर्तित कर सकते हैं। लयकेंद्र के पास एक रसोसंवेदी (Chemosensitive) केंद्र लयकेंद्र के लिए अति संवेदी होता है, जो CO_2 और

हाइड्रोजन आयनों के लिए अति संवेदी होता है। इन पदार्थों की वृद्धि से यह केंद्र सक्रिय होकर श्वसन प्रक्रिया में आवश्यक समायोजन करता है, जिससे ये पदार्थ निष्कासित किए जा सकें। महाधमनी चाप (Aortic arch) और ग्रीवा धमनी (Carotid artery) से जुड़ी संवेदी संरचनाएं भी CO_2 और H^+ सांद्रता के परिवर्तन को पहचान सकते हैं तथा उपचारात्मक कार्यवाही हेतु लयकेंद्र को आवश्यक संकेत दे सकते हैं। श्वसन लय के नियमन में ऑक्सीजन की भूमिका बहुत ही महत्वहीन है।

17.6 श्वसन के विकार (Respiratory disorders)

दमा (Asthma) में श्वसनी और श्वसनिकाओं की शोथ के कारण श्वासन के समय घरघरहाट होती है तथा श्वास लेने में कठिनाई होती है।

श्वसनी शोथ (Bronchitis) : यह श्वसनी की शोथ है जिसके विशेष लक्षण श्वसनी में सूजन तथा जलन होना है जिससे लगातार खाँसी होती है।

वातस्फीति या एम्फाइसिमा(Emphysema) : एक चिरकालिक रोग है जिसमें कूपिका भित्ति क्षतिग्रस्त हो जाती है जिससे गैस विनिमय सतह घट जाती है। धूम्रपान इसके मुख्य कारकों में एक है।

व्यावसायिक श्वसन रोग (Occupational Respiratory Disease) : कुछ उद्योगों में विशेषकर जहाँ पत्थर की घिसाई - पिसाई या तोड़ने का कार्य होता है, वहाँ इतने धूल कण निकलते हैं कि शरीर की सुरक्षा प्रणाली उन्हें पूरी तरह निष्प्रभावी नहीं कर पाती। दीर्घकालीन प्रभावन शोथ उत्पन्न कर सकता है जिनसे रेशामयता (रेशीय ऊतकों की प्रचुरता) होती है, जिसके फलस्वरूप फेफड़ों को गंभीर नुकसान हो सकता है। इन उद्योगों के श्रमिकों को मुखावरण का प्रयोग करना चाहिए।

सारांश

कोशिकाएं अपापचयी क्रियाओं के लिए ऑक्सीजन का उपयोग करती हैं तथा ऊर्जा के साथ कार्बनडाइऑक्साइड जैसे हानिकारक पदार्थ भी उत्पन्न करती हैं। प्राणियों में कोशिकाओं तक ऑक्सीजन एवं वहाँ से कार्बनडाइऑक्साइड को भी बाहर करने के लिए कई तरह की क्रियाविधि विकसित हैं और जिनमें हमारे पास इस क्रिया के लिए एक पूर्ण विकसित श्वसन तंत्र है जिसके अंतर्गत दो फेफड़े और इनसे जुड़े वायु मार्ग है।

श्वसन का पहला चरण श्वासन है जिसमें वायुमंडलीय वायु कूपिकाओं में ली जाती है (अंत:श्वसन)और कूपिकाओं से वायु को बाहर निकाला जाता है (नि:श्वसन)। ऑक्सीजनित रहित रक्त और कूपिका के बीच O_2 और CO_2 का विनिमय, इन गैसों का रक्त द्वारा पूरे शरीर में परिवहन ऑक्सीजन युक्त रक्त और ऊतकों के बीच O_2 और CO_2 का विनिमय और कोशिकाओं द्वारा ऑक्सीजन का उपयोग (कोशिकीय श्वसन) अन्य सम्मिलित चरण हैं। अंत:श्वसन और नि:श्वसन के लिए वायुमंडल और कूपिका के बीच विशिष्ट अंतरापर्शक पेशियों, (इंटरकोस्टल) और डायाफ्राम की सहायता से दाब प्रवणता पैदा की जाती है। इन क्रियाओं में सम्मिलित वायु के विभिन्न आयतन को स्पाइरोमीटर की सहायता से मापा जा सकता है जिनका चिकित्सीय व नैदानिक महत्व है। कूपिका एवं ऊतकों में CO_2 और O_2 का विनिमय विसरण द्वारा होता है। विसरण दर O_2 (pO_2) और CO_2 (pCO_2) के आंशिक दाब प्रवणता उनकी घुलनशीलता और विसरण सतह की मोटाई पर निर्भर है। ये कारक हमारे शरीर में कूपिका से ऑक्सीजन का विऑक्सीजनित रक्त में तथा रक्त से ऊतकों में

विसरण सुगम बनाते हैं। ये कारक CO_2 के अर्थात् ऊतकों से कूपिका में विसरण के लिए भी अनुकूल होते हैं।

ऑक्सीजन का मुख्य रूप से ऑक्सीहीमोग्लोबिन के रूप में परिवहन होता है कूपिका में जहाँ pO_2 अधिक रहता है। ऑक्सीजन हीमोग्लोबिन से युग्मित हो जाती है तथा ऊतकों में जहाँ pO_2 कम, pO_2 एवं H^+ की सांद्रता अधिक होती है सरलता से वियोजित हो जाती है। लगभग 70 प्रतिशत कार्बनडाइऑक्साइड का परिवहन कार्बोनिक एनहाइड्रेज एंजाइम की सहायता से बाइकार्बोनेट (HCO_2) के रूप में होता है। 20–25 प्रतिशत कार्बनडाइऑक्साइड हीमोग्लोबिन द्वारा कार्बामीनो हीमोग्लोबिन के रूप में वहन की जाती है। ऊतकों में जहाँ pCO_2 उच्च और pO_2 निम्न होता है, वहाँ यह रक्त से युग्मित होता है; जबकि कूपिका में जहाँ pCO_2 निम्न और pO_2 उच्च रहता है यह रक्त से निष्कासित हो जाती है।

श्वसन लय मस्तिष्क के मेड्यूला क्षेत्र स्थित श्वसन केंद्र द्वारा बनाए रखी जाती है। मस्तिष्क के पोंस क्षेत्र स्थित श्वास अनुचन श्वास प्रभावी (न्यूमोटैक्सिक) केंद्र तथा एक रसो संवेदी क्षेत्र श्वसन क्रियाविधि को परिवर्तित कर सकते हैं।

अभ्यास

1. जैव क्षमता की परिभाषा दें और इसका महत्व बताएं?
2. सामान्य नि:श्वसन के उपरांत फेफ़डों में शेष वायु के आयतन को बताएं।
3. गैसों का विसरण केवल कूपकीय क्षेत्र में होता है, श्वसन तंत्र के किसी अन्य भाग में नही। क्यों?
4. CO_2 के परिवहन (ट्रांसपोर्ट) की मुख्य क्रियाविधि क्या है; व्याख्या करें?
5. कूपिका वायु की तुलना में वायुमंडलीय वायु में pO_2 तथा pCO_2 कितनी होगी, मिलान करें?
   (i) pO_2 न्यून, pCO_2 उच्च (ii) pO_2 उच्च, pCO_2 न्यून
   (iii) pO_2 उच्च, pCO_2 उच्च (iv) pO_2 न्यून, pCO_2 न्यून
6. सामान्य स्थिति में अंत:श्वसन प्रक्रिया की व्याख्या करें?
7. श्वसन का नियमन कैसे होता है?
8. pCO_2 का ऑक्सीजन के परिवहन में क्या प्रभाव है?
9. पहाड़ पर चढ़ने वाले व्यक्ति की श्वसन प्रक्रिया में क्या प्रभाव पड़ता है?
10. कीटों में श्वसन क्रियाविधि कैसी होती है?
11. ऑक्सीजन वियोजन वक्र की परिभाषा दें, क्या आप इसकी सिग्माभ आकृति का कोई कारण बता सकते हैं?
12. क्या आप ने अवकॉसीयता (हाइपोक्सिया) (न्यून ऑक्सीजन) के बारे में सुना है? इस संबंध में जानकारी प्राप्त करने की कोशिश करें व साथियों के बीच चर्चा करें।
13. निम्न के बीच अंतर करें:
   (क) I R V (आई आर वी) ERV (इ आर वी)
   (ख) अंत: श्वसन क्षमता (IC) और नि:श्वसन क्षमता
   (ग) जैव क्षमता तथा फेफड़ों की कुल धारिता
14. ज्वारीय आयतन क्या है? एक स्वस्थ मनुष्य के लिए एक घंटे के ज्वारीय आयतन (लगभग मात्रा) को आंकलित करें?

अध्याय 18

शरीर द्रव तथा परिसंचरण

18.1 *रुधिर*
18.2 *लसीका (ऊतक द्रव्य)*
18.3 *परिसंचरण पथ*
18.4 *द्विपरिसंचरण*
18.5 *हृद क्रिया का नियंत्रण*
18.6 *परिसंचरण से संबंधित रोग*

अब तक आप यह सीख चुके हैं कि जीवित कोशिकाओं को ऑक्सीजन पोषण अन्य आवश्यक पदार्थ उपलब्ध होने चाहिए। ऊतकों के सुचारु कार्य हेतु अपशिष्ट या हानिकारक पदार्थ जैसे कार्बनडाइऑक्साइड (CO_2) का लगातार निष्कासन आवश्यक है। अतः इन पदार्थों के कोशिकाओं तक से चलन हेतु एक प्रभावी क्रियाविधि का होना आवश्यक था। विभिन्न प्राणियों में इस हेतु अभिगमन के विभिन्न तरीके विकसित हुए हैं। सरल प्राणी जैसे स्पंज व सिलेंट्रेट बाहर से अपने शरीर में पानी का संचरण शारीरिक गुहाओं में करते हैं, जिससे कोशिकाओं के द्वारा इन पदार्थों का आदान-प्रदान सरलता से हो सके। जटिल प्राणी इन पदार्थों के परिवहन के लिए विशेष तरल का उपयोग करते हैं। मनुष्य सहित उच्च प्राणियों में **रक्त** इस उद्देश्य में काम आने वाला सर्वाधिक सामान्य तरल है। एक अन्य शरीर द्रव **लसीका** भी कुछ विशिष्ट तत्वों के परिवहन में सहायता करता है। इस अध्याय में आप रुधिर एवं लसीका (ऊतक द्रव्य) के संघटन एवं गुणों के बारे में पढ़ेंगे। इसमें रुधिर के परिसंचरण को भी समझाया गया है।

18.1 रुधिर

रक्त एक विशेष प्रकार का ऊतक है, जिसमें द्रव्य आधात्री (मैट्रिक्स) प्लाज्मा (प्लैज्मा) तथा अन्य संगठित संरचनाएं पाई जाती हैं।

18.1.1 प्लाज्मा (प्लैज्मा)

प्रद्रव्य एक हल्के पीले रंग का गाढ़ा तरल पदार्थ है, जो रक्त के आयतन लगभग 55 प्रतिशत होता है। प्रद्रव्य में 90-92 प्रतिशत जल तथा 6-8 प्रतिशत प्रोटीन पदार्थ होते हैं। फाइब्रिनोजन, ग्लोबुलिन तथा एल्बूमिन प्लाज्मा में उपस्थित मुख्य प्रोटीन हैं। फाइब्रिनोजेन की आवश्यकता रक्त थक्का बनाने या स्कंदन में होती है। ग्लोबुलिन का उपयोग शरीर

के प्रतिरक्षा तंत्र तथा एल्बूमिन का उपयोग परासरणी संतुलन के लिए होता है। प्लाज्मा में अनेक खनिज आयन जैसे Na^+, Ca^{++}, Mg^{++},HCO_3, Cl^- इत्यादि भी पाए जाते हैं। शरीर में संक्रमण की अवस्था में होने के कारण ग्लूकोज, अमीनो अम्ल तथा लिपिड भी प्लाज्मा में पाए जाते हैं। रुधिर का थक्का बनाने अथवा स्कंदन के अनेक कारक प्रद्रव्य के साथ निष्क्रिय दशा में रहते हैं। बिना थक्का /स्कंदन कारकों के प्लाज्मा को सीरम कहते हैं।

18.1.2 संगठित पदार्थ

लाल रुधिर कणिका (इरिथ्रोसाइट),श्वेताणु (ल्युकोसाइट) तथा पट्टिकाणु (प्लेटलेट्स) को संयुक्त रूप से संगठित पदार्थ कहते हैं (चित्र 18.1) और ये रक्त के लगभग 45 प्रतिशत भाग बनाते हैं।

इरिथ्रोसाइट (रक्ताणु) या लाल रुधिर कणिकाएं अन्य सभी कोशिकाओं से संख्या में अधिक होती है। एक स्वस्थ मनुष्य में ये कणिकाएं लगभग 50 से 50 लाख प्रतिघन मिमी. रक्त (5 से 5.5 मिलियन प्रतिघन मिमी.) होती हैं। वयस्क अवस्था में लाल रुधिर कणिकाएं लाल अस्थि मज्जा में बनती हैं। अधिकतर स्तनधारियों की लाल रुधिर कणिकाओं में केंद्रक नहीं मिलते हैं तथा इनकी आकृति उभयावतल (बाईकोनकेव) होती है। इनका लाल रंग एक लौहयुक्त जटिल प्रोटीन हीमोग्लोबिन की उपस्थिति के कारण है। एक स्वस्थ मनुष्य में प्रति 100 मिली. रक्त में लगभग 12 से 16 ग्राम हीमोग्लोबिन पाया जाता है। इन पदार्थों की श्वसन गैसों के परिवहन में महत्वपूर्ण भूमिका है। लाल रक्त कणिकाओं की औसत आयु 120 दिन होती है। तत्पश्चात इनका विनाश प्लीहा (लाल रक्त कणिकाओं की कब्रिस्तान) में होता है।

ल्युकोसाइट को हीमोग्लोबिन के अभाव के कारण तथा रंगहीन होने से **श्वेत रुधिर कणिकाएं** भी कहते हैं। इसमें केंद्रक पाए जाते हैं तथा इनकी संख्या लाल रक्त कणिकाओं की अपेक्षा कम, औसतन 6000-8000 प्रति घन मिमी. रक्त होती है। सामान्यत: ये कम समय तक जीवित रहती हैं। इनको दो मुख्य श्रेणियों में बाँटा गया है-कणिकाणु (ग्रेन्यूलोसाइट) तथा अकण कोशिका (एग्रेन्यूलोसाइट)। न्यूट्रोफिल, इओसिनोफिल व बेसोफिल कणिकाणुओं के प्रकार हैं, जबकि लिंफोसाइट तथा मोनोसाइट अकणकोशिका के प्रकार हैं। श्वेत रुधिर कोशिकाओं में न्यूट्रोफिल संख्या में सबसे अधिक (लगभग 60-65 प्रतिशत) तथा बेसोफिल संख्या में सबसे कम (लगभग 0.5-1 प्रतिशत) होते हैं।

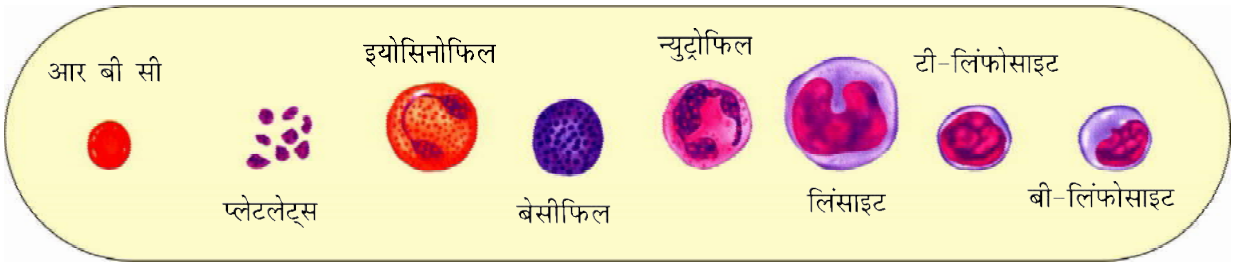

चित्र 18.1 रक्त में संगठित पदार्थ

न्यूट्रोफिल तथा मोनोसाइट (6-8 प्रतिशत) भक्षण कोशिका होती है जो अंदर प्रवेश करने वाले बाह्य जीवों को समाप्त करती है। बेसोफिल, हिस्टामिन, सिरोटोनिन, हिपैरिन आदि का स्राव करती है तथा शोथकारी क्रियाओं में सम्मिलित होती है। इओसिनोफिल (2-3 प्रतिशत) संक्रमण से बचाव करती है तथा एलर्जी प्रतिक्रिया में सम्मिलित रहती है। लिंफोसाइट (20-25 प्रतिशत) मुख्यतः दो प्रकार की हैं - बी तथा टी। बी और टी दोनों प्रकार की लिंफोसाइट शरीर की प्रतिरक्षा के लिए उत्तरदायी हैं।

पट्टिकाणु (प्लेटलेट्स) को **थ्रोम्बोसाइट** भी कहते हैं, ये मैगाकेरियो साइट (अस्थि मज्जा की विशेष कोशिका) के टुकड़ों में विखंडन से बनती हैं। रक्त में इनकी संख्या 1.5 से 3.5 लाख प्रति घन मिमी. होती हैं। प्लेटलेट्स कई प्रकार के पदार्थ स्रवित करती हैं जिनमें अधिकांश रुधिर का थक्का जमाने (स्कंदन) में सहायक हैं। प्लेटलेट्स की संख्या में कमी के कारण स्कंदन (जमाव) में विकृति हो जाती है तथा शरीर से अधिक रक्त स्राव हो जाता है।

18.1.3 रक्त समूह (ब्लड ग्रुप)

जैसा कि आप जानते हैं कि मनुष्य का रक्त एक जैसा दिखते हुए भी कुछ अर्थों में भिन्न होता है। रक्त का कई तरीके से समूहीकरण किया गया है। इनमें से दो मुख्य समूह ABO तथा Rh का उपयोग पूरे विश्व में होता है।

18.1.3.1 ABO समूह

ABO समूह मुख्यतः लाल रुधिर कणिकाओं की सतह पर दो प्रतिजन/एंटीजन की उपस्थिति या अनुपस्थित पर निर्भर होता है। ये ऐंटीजन A और B हैं जो प्रतिरक्षा अनुक्रिया को प्रेरित करते हैं। इसी प्रकार विभिन्न व्यक्तियों में दो प्रकार के प्राकृतिक प्रतिरक्षी/एंटीबोडी (शरीर प्रतिरोधी) मिलते हैं। प्रतिरक्षी वे प्रोटीन पदार्थ हैं जो प्रतिजन के विरुद्ध पैदा होते हैं। चार रक्त समूहों, **A, B, AB, और O** में प्रतिजन तथा प्रतिरक्षी की स्थिति को देखते हैं, जिसको तालिका 18.1 में दर्शाया गया है।

तालिका 18.1 रक्त समूह तथा रक्तदाता सुयोग्यता

रक्त समूह	लाल रुधिर कणिकाओं पर प्रतिजन	प्लाज्मा में प्रतिरक्षी (एंटिबोडीज)	रक्तदाता समूह
A	A	एंटी B	A, O
B	B	एंटी A	B, O
AB	AB	अनुपस्थित	AB, A, B,O
O	अनुपस्थित	एंटी A,B	O

दाता एवं ग्राही/आदाता के रक्त समूहों का रक्त चढाने से पहले सावधानीपूर्वक मिलान कर लेना चाहिए जिससे रक्त स्कंदन एवं RBC के नष्ट होने जैसी गंभीर परेशानियां न हों। दाता संयोज्यता (डोनर कंपेटिबिलिटी) तालिका 18.1 में दर्शायी गई है।

उपरोक्त तालिका से यह स्पष्ट है कि रक्त समूह O एक सर्वदाता है जो सभी समूहों को रक्त प्रदान कर सकता है। रक्त समूह AB सर्व आदाता (ग्राही) है जो सभी प्रकार के रक्त समूहों से रक्त ले सकता है।

18.1.3.2 Rh समूह

एक अन्य प्रतिजन/एंटीजन Rh है जो लगभग 80 प्रतिशत मनुष्यों में पाया जाता है तथा यह Rh एंटीजेन रीसेस बंदर में पाए जाने वाले एंटीजेन के समान है। ऐसे व्यक्ति को जिसमें Rh एंटीजेन होता है, को **Rh सहित** (Rh+ve) और जिसमें यह नहीं होता उसे **Rh हीन** (Rh-ve) कहते हैं। यदि Rh रहित (Rh-ve) के व्यक्ति के रक्त को आर एच सहित (Rh+ve) पॉजिटिव के साथ मिलाया जाता है तो व्यक्ति मे Rh प्रतिजन Rh-ve के विरूद्ध विशेष प्रतिरक्षी बन जाती हैं, अतः रक्त आदान-प्रदान के पहले Rh समूह को मिलना भी आवश्यक है। एक विशेष प्रकार की Rh अयोग्यता को एक गर्भवती (Rh-ve) माता एवं उसके गर्भ में पल रहे भ्रूण के Rh+ve के बीच पाई जाती है। अपरा द्वारा पृथक रहने के कारण भ्रूण का Rh एंटीजेन सगर्भता में माता के Rh-ve को प्रभावित नहीं कर पाता, लेकिन फिर भी पहले प्रसव के समय माता के Rh-ve रक्त से शिशु के Rh+ve रक्त के संपर्क में आने की संभावना रहती है। ऐसी दशा में माता के रक्त में Rh प्रतिरक्षी बनना प्रारंभ हो जाता है। ये प्रतिरोध में एंटीबोडीज बनाना शुरू कर देती है। यदि परवर्ती गर्भावस्था होती है तो रक्त से (Rh-ve) भ्रूण के रक्त (Rh+ve) में Rh प्रतिरक्षी का रिसाव हो सकता है और इससे भ्रूण की लाल रुधिर कणिकाएं नष्ट हो सकती हैं। यह भ्रूण के लिए जानलेवा हो सकती हैं या उसे रक्ताल्पता (खून की कमी) और पीलिया हो सकता है। ऐसी दशा को *इरिथ्रोब्लास्टोसिस फिटैलिस* (गर्भ रक्ताणु कोरकता) कहते हैं। इस स्थिति से बचने के लिए माता को प्रसव के तुरंत बाद Rh प्रतिरक्षी का उपयोग करना चाहिए।

18.1.4 रक्त-स्कंदन (रक्त का जमाव)

किसी चोट या घात की प्रतिक्रिया स्वरूप रक्त स्कंदन होता है। यह क्रिया शरीर से बाहर अत्यधिक रक्त को बहने से रोकती है। *क्या आप जानते हैं ऐसा क्यों होता है?* आपने किसी चोट घात या घाव पर कुछ समय बाद गहरे लाल व भूरे रंग का झाग सा अवश्य देखा होगा। यह रक्त का स्कंदन या थक्का है, जो मुख्यतः फाइब्रिन धागे के जाल से बनता है। इस जाल में मरे तथा क्षतिग्रस्त संगठित पदार्थ भी उलझे हुए होते हैं। फाइब्रिन रक्त प्लैज्मा में उपस्थित एंजाइम थ्रोम्बिन की सहायता से फाइब्रिनोजन से बनती है। थ्रोम्बिन की रचना प्लाज्मा में उपस्थित निष्क्रिय प्रोथोबिंन से होती है। इसके लिए थ्रोंबोकाइनेज एंजाइम समूह की आवश्यकता होती है। यह एंजाइम समूह रक्त प्लैज्मा में उपस्थित अनेक निष्क्रिय कारकों की सहायता से एक के बाद एक अनेक एंजाइमी प्रतिक्रिया की शृंखला (सोपानी प्रक्रम) से बनता है। एक चोट या घात रक्त में उपस्थित प्लेटलेट्स को विशेष कारकों को मुक्त करने के लिए प्रेरित करती है जिनसे स्कंदन की प्रक्रिया शुरू होती है। क्षतिग्रस्त ऊतकों द्वारा भी चोट की जगह पर कुछ कारक मुक्त होते हैं जो स्कंदन को प्रारंभ कर सकते हैं। इस प्रतिक्रिया में कैल्सियम आयन की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण होती है।

18.2 लसीका (ऊतक द्रव)

रक्त जब ऊतक की कोशिकाओं से होकर गुजरता है तब बड़े प्रोटीन अणु एवं संगठित पदार्थों को छोड़कर रक्त से जल एवं जल में घुलनशील पदार्थ कोशिकाओं से बाहर निकल जाते हैं। इस तरल को अंतराली द्रव या ऊतक द्रव कहते हैं। इसमें प्लैज्मा के समान ही खनिज लवण पाए जाते हैं। रक्त तथा कोशिकाओं के बीच पोषक पदार्थ एवं गैसों का आदान प्रदान इसी द्रव से होता है। वाहिकाओं का विस्तृत जाल जो लसीका तंत्र (लिंफैटिक सिस्टम) कहलाता है इस द्रव को एकत्र कर बड़ी शिराओं में वापस छोड़ता है। लसीका तंत्र में उपस्थित यह द्रव/तरल को लसीका कहते हैं।

लसीका एक रंगहीन द्रव है जिसमें विशिष्ट लिंफोसाइट मिलते हैं। लिंफोसाइट शरीर की प्रतिरक्षा अनुक्रिया के लिए उत्तरदायी है। लसीका पोषक पदार्थ, हार्मोन आदि के संवाहन के लिए महत्वपूर्ण होते हैं। आंत्र अकुंर में उपस्थित लैक्टियल वसा को लसीका द्वारा अवशोषित करते हैं।

18.3 परिसंचरण पथ

परिसंचरण दो तरह का होता है, जो खुला एवं बंद होता है। **खुला परिसंचरण तंत्र** आर्थोपोडा (संधिपाद) तथा मोलस्का में पाया जाता है। जिसमें हृदय द्वारा रक्त को रक्त वाहिकाओं में पंप किया जाता है, जो कि रक्त स्थान (कोटरों) में खुलता है। एक कोटर वस्तुतः देहगुहा होती है। ऐनेलिडा तथा कशेरुकी में **बंद प्रकार का परिसंचरण** तंत्र पाया जाता है, जिसमें हृदय से रक्त का प्रवाह एक दूसरे से जुड़ी रक्त वाहिनियों के जाल में होता है। इस तरह का रक्त परिसंचरण पथ ज्यादा लाभदायक होता है क्योंकि इसमें रक्त प्रवाह आसानी से नियमित किया जाता है।

सभी कशेरुकी में कक्षों से बना हुआ पेशी हृदय होता है। मछलियों में दो कक्षीय हृदय होता है, जिसमें एक अलिंद तथा एक निलय होता है। उभयचरों तथा सरीसृपों रेप्टाइल का (मगरमच्छ को छोड़कर) हृदय तीन कक्षों से बना होता है, जिसमें दो अलिंद तथा एक निलय होता है। जबकि मगरमच्छ, पक्षियों तथा स्तनधारियों में हृदय चार कक्षों का बना होता है जिसमें दो अलिंद तथा दो निलय होते हैं। मछलियों में हृदय विऑक्सीजनित रुधिर बाहर को पंप करता है जो क्लोम द्वारा ऑक्सीजनित होकर शरीर के विभिन्न भागों में पहुँचाया जाता है तथा वहाँ से विऑक्सीजनित रक्त हृदय में वापस आता है। इस क्रिया को एकलपरिसंचरण कहते हैं। उभयचरों व सरीसृपों में बांया अलिंद क्लोम / फेफड़ों / त्वचा से ऑक्सीजन युक्त रक्त प्राप्त करता है तथा दाहिना आलिंद शरीर के दूसरे भागों से विऑक्सीजनित रुधिर प्राप्त करता है, लेकिन वे रक्त को निलय में मिश्रित कर बाहर की ओर पंप करते हैं। इस क्रिया को अपूर्ण दोहरा परिसंचरण कहते हैं। पक्षियों एवं स्तनधारियों में ऑक्सीजनित विऑक्सीजनित रक्त क्रमशः बाएं व दाएं आलिंदों में आता है, जहाँ से वह उसी क्रम से बाएं दाएं एवं बाएं निलयों में जाता है। निलय बिना रक्त को मिलाए इन्हें पंप करता है अर्थात् दो तरह के परिसंचरण पथ इन प्राणियों में मिलते हैं। अतः इन प्राणियों में दोहरा परिसंचरण पाया जाता है। अब हम मानव के परिसंचरण तंत्र का अध्ययन करते हैं।

18.3.1 मानव परिसंचरण तंत्र

मानव परिसंचरण तंत्र जिसे रक्तवाहिनी तंत्र भी कहते हैं जिसमें कक्षों से बना पेशी हृदय, शाखित बंद रक्त वाहिनियों का एक जाल, रक्त एवं तरल समाहित होता हैं। (रक्त इनमें बहने वाला एक तरल है जिसके बारे में आप विस्तृत रूप से इस अध्याय के पूर्ववर्ती पृष्ठों में पढ़ चुके हैं)।

हृदय- की उत्पत्ति मध्यजन स्तर (मीसोडर्म) से होती है तथा यह दोनों फेफड़ों के मध्य, वक्ष गुहा में स्थित रहता है यह थोडा सा बाईं तरफ झुका रहता है। यह बंद मुट्ठी के आकार का होता है। यह एक दोहरी भित्ति के झिल्लीमय थैली, हृदयावरणी द्वारा सुरक्षित होता है जिसमें हृदयावरणी द्रव पाया जाता है। हमारे हृदय में चार कक्ष होते हैं जिसमें दो कक्ष अपेक्षाकृत छोटे तथा ऊपर को पाए जाते हैं जिन्हें **अलिंद** (आर्ट्रिया) कहते हैं तथा दो कक्ष अपेक्षाकृत बड़े होते हैं जिन्हें **निलय (वेंट्रिकल)** कहते हैं। एक पतली पेशीय भित्ति जिसे **अंतर अलिंदी** (पट) कहते हैं, दाएं एवं बाएं आलिंद को अलग करती है जबकि एक मोटी भित्ति, जिसे **अंतर निलयी (पट)** कहते हैं, जो बाएं एवं दाएं निलय को अलग करती है (चित्र 18.2)। अपनी-अपनी ओर के आलिंद एवं निलय एक मोटे रेशीय ऊतक जिसे अलिंदं निलय पट द्वारा पृथक रहते हैं। हालांकि; इन पटों में एक-एक छिद्र होता है, जो एक ओर के दोनों कक्षों को जोड़ता है। दाहिने आलिंद और दाहिने निलय के (रंध्र) पर तीन पेशी पल्लों या वलनों से (फ्लैप्स या कप्स) से युक्त एक वाल्व पाया जाता है। इसे ट्राइकसपिड (त्रिवलनी) कपाट या वाल्व कहते हैं। बाएं अलिंद तथा बाएं निलय के रंध्र (निकास) पर एक द्विवलनी कपाट / मिट्रल कपाट

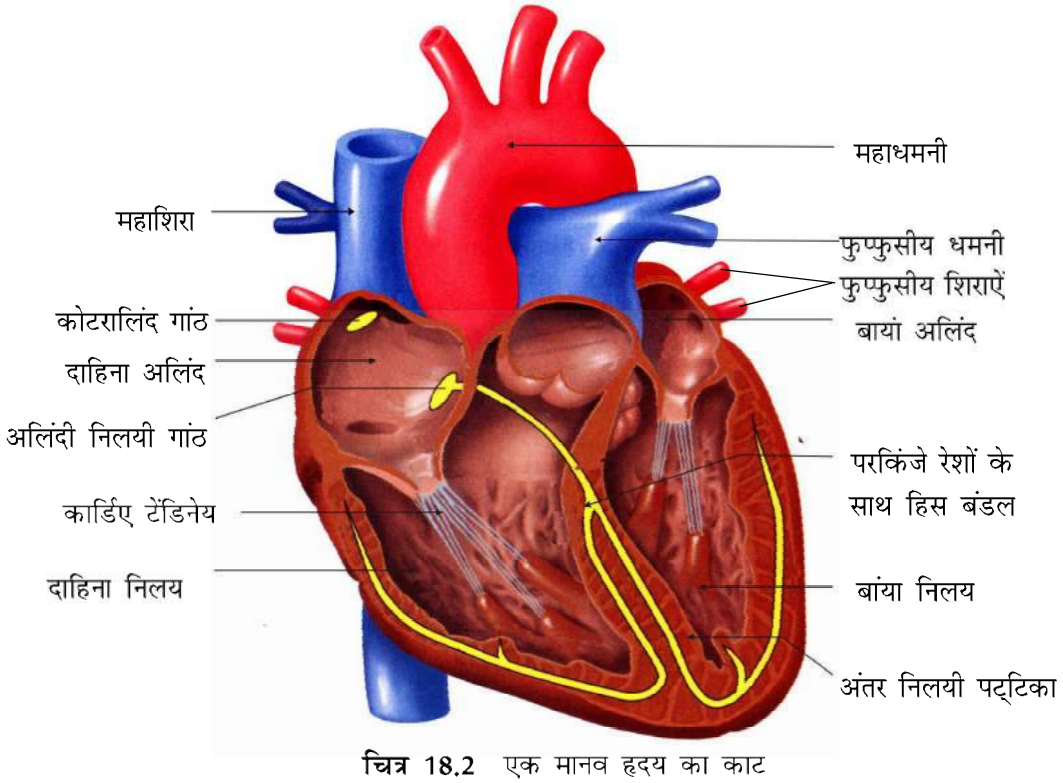

चित्र 18.2 एक मानव हृदय का काट

पाया जाता है। दाएं तथा बाएं निलयों से निकलने वाली क्रमशः फुप्फुसीय धमनी तथा महाधमनी का निकास द्वार अर्धचंद्र कपाटिकर (सेमील्युनर वाल्व) से युक्त रहता है। हृदय के कपाट रुधिर को एक दिशा में ही जाने देते हैं अर्थात् अलिंद से निलय और निलय से फुप्फुस धमनी या महाधमनी। कपाट वापसी या उल्टे प्रवाह को रोकते हैं।

यह हृद पेशीयों से बना है। निलयों की भित्ति अलिंदों की भित्ति से बहुत मोटी होती है। एक विशेष प्रकार की हृद पेशीन्यास, जिसे **नोडल ऊतक** कहते हैं, भी हृदय में पाया जाता है (चित्र 18.2)। इस ऊतक का एक धब्बा दाहिने अलिंद के दाहिने ऊपरी कोने पर स्थित रहता है, जिसे **शिराअलिंदपर्व** (साइनों-आट्रियल नॉड SAN) कहते हैं। इस ऊतक का दूसरा पिण्ड दाहिने अलिंद में नीचे के कोने पर अलिंद निलयी पट के पास में स्थित होता है जिसे **अलिंद निलय पर्व** (आट्रियो-वेटीकुलर नॉड/ AVN) कहते हैं। नोडल (ग्रंथिल) रेशों का एक बंडल, जिसे अलिंद निलय बंडल (AV बंडल) भी कहते हैं। अंतर निलय पट के ऊपरी भाग में अलिंद निलय पर्व से प्रारंभ होता है तथा शीघ्र ही दो दाईं एवं बाईं शाखाओं में विभाजित होकर अंतर निलय पट के साथ पश्च भाग में बढ़ता है। इन शाखाओं से संक्षिप्त रेशे निकलते हैं जो पूरे निलयी पेशीविन्यास में दोनों तरफ फैले रहते हैं, जिसे पुरकिंजे तंतु कहते हैं। दाईं एवं बाईं शाखाओं सहित ये तंतु हिज के बंडल (Bundle of His) कहलाते हैं। नोडल ऊतक बिना किसी बाह्य प्रेरणा के क्रियाविभव पैदा करने में सक्षम होते हैं। इसे स्वउत्तेजनशील (आटोएक्साइटेबल) कहते हैं। हालांकि; एक मिनट में उत्पन्न हुए क्रियाविभव की संख्या नोडल तंत्र के विभिन्न भागों में घट-बढ़ सकती है।

शिराअलिंदपर्व (गांठ) सबसे अधिक क्रियाविभव पैदा कर सकती है। यह एक मिनट में 70-75 क्रियाविभव पैदा करती है तथा हृदय का लयात्मक संकुचन (रिदमिक कांट्रेक्शन) को प्रारंभ करता है तथा बनाए रखता है। इसलिए इसे **गतिप्रेरक** (पेश मेकर) कहते हैं। इससे हमारी सामान्य हृदय स्पंदन दर 70-75 प्रति मिनट होती है। (औसतन 72 स्पंदन प्रति मिनट)।

18.3.2 हृद चक्र

हृदय काम कैसे करता है? आओ हम जानें। प्रारंभ में माना कि हृदय के चारों कक्ष शिथिल अवस्था में हैं अर्थात् हृदय अनुशिथिलन अवस्था में है। इस समय त्रिवलन या द्विवलन कपाट खुले रहते हैं, जिससे रक्त फुप्फुस शिरा तथा महाशिरा से क्रमशः बाएं तथा दाएं अलिंद से होता हुआ बाएं तथा दाएं निलय में पहुँचता है। अर्ध चंद्रकपाटिका इस अवस्था में बंद रहती है। अब शिराअलिंदपर्व (SAN) क्रियाविभव पैदा करता है, जो दोनों अलिंदों को प्रेरित कर अलिंद प्रकुंचन (atrial systole) पैदा करती है। इस क्रिया से रक्त का प्रवाह निलय में लगभग 30 प्रतिशत बढ़ जाता है। निलय में क्रियाविभव का संचालन अलिंद निलय (पर्व) तथा अलिंद निलय बंडल द्वारा होता है जहाँ से हिज के बंडल इसे निलयी पेशीन्यास (ventricular musculatire) तक पहुँचाता है। इसके कारण निलयी पेशियों में संकुचन होता है अर्थात् निलय प्रकुंचन इस समय अलिंद विश्राम अवस्था में जाते हैं। इसे अलिंद को अनुशिथिलन कहते हैं जो अलिंद प्रकुंचन के साथ-साथ होता है। निलयी प्रकुंचन, निलयी दाब बढ़ जाता है, जिससे त्रिवलनी व

द्विवलनी कपाट बंद हो जाते हैं, अतः रक्त विपरीत दिशा अर्थात् अलिंद में नहीं आता है। जैसे ही निलयी दबाव बढ़ता है अर्ध चंद्रकपाटिकाएं जो फुप्फुसीय धमनी (दाईं ओर) तथा महाधमनी (बाईं ओर) पर स्थित होते हैं, खुलने के लिए मजबूर हो जाते हैं जिसके रक्त इन धमनियों से होता हुआ परिसंचरण मार्ग में चला जाता है। निलय अब शिथिल हो जाते हैं तथा इसे निलयी अनुशिथिलन कहते हैं। इस तरह निलय का दाब कम हो जाता है जिससे अर्धचंद्रकपाटिका बंद हो जाती है, जिससे रक्त का विपरीत प्रवाह निलय में नहीं होता। निलयी दाब और कम होता है, अतः अलिंद में रक्त का दाब अधिक होने के कारण त्रिवलनी कपाट तथा द्विवलनी कपाट खुल जाते हैं। इस तरह शिराओं से आए हुए रक्त का प्रवाह अलिंद से पुनः निलय में शुरू हो जाता है। निलय तथा अलिंद एक बार पुनः (जैसा कि ऊपर लिखा गया है), शिथिलावस्था में चले जाते हैं। शिराआलिंदपर्व (कोटरालिंद गांठ) पुनः क्रियाविभव पैदा करती है तथा उपरोक्त वर्णित से सारी क्रिया को दोहराती है जिससे यह प्रक्रिया लगातार चलती रहती है।

एक हृदय स्पंदन के आरंभ से दूसरे स्पंदन के आरंभ (एक संपूर्ण हृदय स्पंदन) होने के बीच के घटनाक्रम को हृद चक्र (cardiac cycle) कहते हैं तथा इस क्रिया में दोनों अलिंदों तथा दोनों निलयों का प्रकुंचन एवं अनुशिथिलन सम्मिलित होता है। जैसा कि ऊपर वर्णन किया जा चुका है कि हृदय स्पंदन एक मिनट में 72 बार होता है अर्थात् एक मिनट में कई बार हृद चक्र होता है। इससे एक चक्र का समय 0.8 सेकेंड निकाला जा सकता है। प्रत्येक हृद चक्र में निलय 70 मिली. रक्त पंप करता है, जिसे प्रवाह आयतन कहते हैं। प्रवाह आयतन को हृदय दर से गुणा करने पर हृद निकास कहलाता है, इसलिए हृद निकास प्रत्येक निलय द्वारा रक्त की मात्रा को प्रति मिनट बाहर निकालने की क्षमता है, जो एक स्वस्थ मात्रा में औसतन 5 हजार मिली. या 5 लीटर होती है। हम प्रवाह आयतन तथा हृदय दर को बदलने की क्षमता रखते हैं इससे हृदनिकास भी बदलता है। उदाहरण के तौर पर खिलाड़ी/धावकों का हृद निकास सामान्य मनुष्य से अधिक होता है।

हृद चक्र के दौरान दो महत्वपूर्ण ध्वनियाँ स्टेथेस्कोप द्वारा सुनी जा सकती है। प्रथम ध्वनि (लब) त्रिवलनी तथा द्विवलनी कपाट के बंद होने से संबंधित है, जबकि दूसरी ध्वनि (डब) अर्ध चंद्रकपाट के बंद होने से संबंधित है। इन दोनों ध्वनियों का चिकित्सीय निदान में बहुत महत्व है।

18.3.3 विद्युत हृद लेख (इलैक्ट्रोकार्डियोग्राफ)

आप शायद अस्पताल के टेलीविजन के दृश्य से चिरपरिचित होंगे। जब कोई बीमार व्यक्ति हृदयाघात के कारण निगरानी मशीन (मोनीटरिंग मशीन) पर रखा जाता है तब आप पीप.. पीप... पीप और पीपीपी की आवाज सुन सकते हैं। इस तरह की मशीन (इलैक्ट्रोकार्डियोग्राफ) का उपयोग विद्युत हृद लेख (इलेक्ट्रोकार्डियोग्राम) (ईसीजी) प्राप्त करने के लिए किया जाता है (चित्र 18.3)।

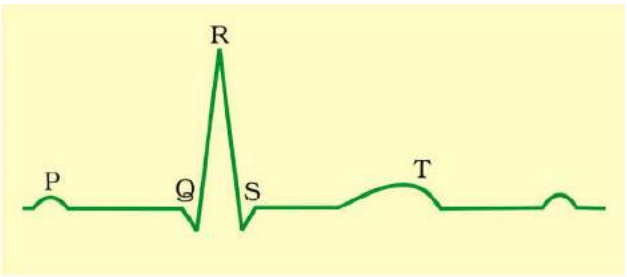

चित्र 18.3 मानव ईसीजी का रेखांकित चित्रण

ईसीजी हृदय के हृदयी चक्र की विद्युत क्रियाकलापों का आरेखीय प्रस्तुतीकरण है। बीमार व्यक्ति के मानक ईसीजी से प्राप्त करने के लिए मशीन से रोगी को तीन विद्युत लीड से (दोनों कलाईयाँ तथा बाईं ओर की एड़ी) जोड़कर लगातार निगरानी करके प्राप्त कर सकते हैं।

हृदय क्रियाओं के विस्तृत मूल्यांकन के लिए कई तारों (लीड्स) को सीने से जोड़ा जाता है। यहाँ हम केवल मानक ईसीजी के बारे में बताएंगे।

ईसीजी के प्रत्येक चर्मोत्कर्ष को P (पी) से T (टी) तक दर्शाया जाता है, जो हृदय की विशेष विद्युत क्रियाओं के प्रदर्शित करता है। पी तरंग को **आलिंद के उद्दीपन/विध्रुवण** के रूप में प्रस्तुत किया जाता है, जिससे दोनों अलिंदों का संकुचन होता है। QRS (क्यूआरएस) **सम्मिश्र निलय के अध्रुवण** को प्रस्तुत करता है जो निलय के संकुचन को शुरू करता है। संकुचन क्यू तरंग के तुरंत बाद शुरू होता है। जो प्रकुंचन (सिस्टोल) की शुरुआत का द्योतक है। 'टी' तरंग निलय का उत्तेजना से सामान्य अवस्था में वापिस आने की स्थिति को प्रदर्शित करता है। टी तरंग का अंत **प्रकुंचन** अवस्था की समाप्ति का द्योतक है।

स्पष्टतया, एक निश्चित समय में QRS सम्मिश्र की संख्या गिनने पर एक मनुष्य के हृदय स्पंदन दर भी निकाली जा सकती है। यद्यपि तरह-तरह के व्यक्तियों की ईसीजी संरचना एवं आकृति सामान्य होती है। इस आकृति में कोई परिवर्तन किसी संभावित असामान्यता अथवा बीमारी को इंगित करती हैं। अत: यह इसकी चिकित्सीय महत्ता बहुत ज्यादा है।

18.4 द्विसंचरण (डबल सरकुलेशन)[8]

जैसा कि पहले बताया जा चुका है कि दाहिने निलय द्वारा पंप किया गया रक्त फुप्फुसीय धमनियों में जाता है जबकि बाएं निलय से रक्त महाधमनी में जाता है। ऑक्सीजन रहित रक्त, फेफड़ों में ऑक्सीजन युक्त होकर फुप्फुस शिराओं से होता हुआ बाएं अलिंद में आता है। यह संचरण पथ फुप्फुस संचरण कहलाता है। ऑक्सीजनित रक्त महाधमनी से होता हुआ धमनी, धमनिकाओं तथा केशिकाओं (केपिलरीज) से होता हुआ ऊतकों तक जाता है। और वहाँ से ऑक्सीजन रहित होकर शिरा, शिराओं तथा महाशिरा से होता हुआ दाहिने अलिंद में आता है। यह एक क्रमबद्ध परिसंचरण है (चित्र 18.4)। यह क्रमबद्ध परिसंचरण पोषक पदार्थ, ऑक्सीजन तथा अन्य जरूरी पदार्थों को ऊतकों तक पहुँचाता है तथा वहाँ से कार्बनडाइऑक्साइड (CO_2) तथा अन्य हानिकारक पदार्थों को बाहर निकालने के लिए ऊतकों से दूर ले जाता है। एक अनूठी संवहनी संबद्धता आहार नाल तथा यकृत के बीच उपस्थित होती है जिसे **यकृत निवाहिका परिसंचरण तंत्र (हिपेटिकपोर्टल सिस्टम)** कहते हैं। यकृत निवाहिका शिरा रक्त को इसके पहले कि वह क्रमबद्ध परिसंचरण में आंत्र से यकृत तक पहुँचाती है। हमारे शरीर में एक विशेष हृद परिसंचरण तंत्र (कोरोनरी सिस्टम) पाया जाता है, जो रक्त सिर्फ को हृद पेशी न्यास तक ले जाता है तथा वापस लाता है।

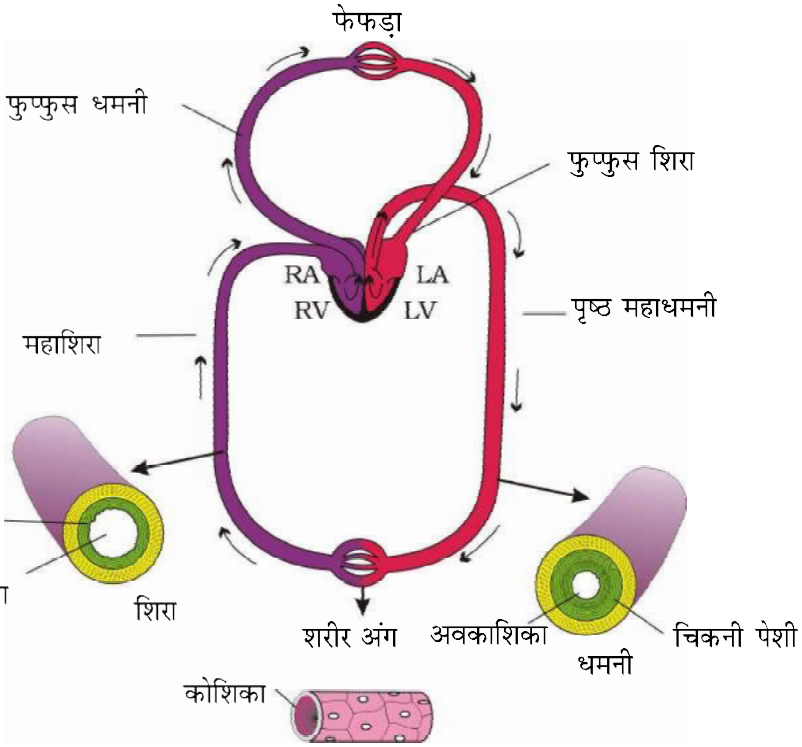

चित्र 18.4 मानव रक्त परिसंचरण का आरेखीय चित्र

18.5 हृद क्रिया का नियमन

हृदय की सामान्य क्रियाओं का नियमन अंतरिम होता है अर्थात् विशेष पेशी ऊतक (नोडल ऊतक) द्वारा स्व नियमित होते हैं, इसलिए हृदय को पेशीजनक (मायोजनिक) कहते हैं। मेड्यूला ओबलांगाटा के विशेष तंत्रिका केंद्र स्वायत्त तंत्रिका के द्वारा हृदय की क्रियाओं को संयमित कर सकता है। अनुकंपीय तंत्रिकाओं से प्राप्त तंत्रीय संकेत हृदय स्पंदन को बढ़ा देते हैं व निलयी संकुचन को सुदृढ़ बनाते हैं, अत: हृद निकास बढ़ जाता है। दूसरी तरफ परानुकंपी तंत्रिकय संकेत (जो स्वचालित तंत्रिका केंद्र का हिस्सा है) हृदय स्पंदन एवं क्रियाविभव की संवहन गति कम करते हैं। अत: यह हृद निकास को कम करते हैं। अधिवृक्क अंतस्था (एडीनल मेड्यूला) का हार्मोन भी हृद निकास को बढ़ा सकता है।

18.6 परिसंचरण की विकृतियाँ

उच्च रक्त दाब (अति तनाव) : अति तनाव रक्त दाब की वह अवस्था है, जिसमें रक्त चाप सामान्य (120/80) से अधिक होता है। इस मापदंड में 120 मिमी. एच जी (मिलीमीटर में मर्करी दबाव) को प्रकुंचन या पंपिंग दाब और 80 मिमी. एच जी को अनुशिथिलन या विराम काल (सहज) **रक्त दाब** कहते हैं। यदि किसी का रक्त दाब बार-बार मापने पर भी व्यक्ति 140/90 या इससे अधिक होता है तो वह अति तनाव प्रदर्शित करता है। उच्च रक्त चाप हृदय की बीमारियों को जन्म देता है तथा अन्य महत्वपूर्ण अंगों जैसे मस्तिष्क तथा वृक्क जैसे अंगों को प्रभावित करता है।

हृद धमनी रोग (CAD) : हृद धमनी बीमारी या रोग को प्रायः एथिरोकाठिंय (एथिरोस सक्लेरोसिस) के रूप में संदर्भित किया जाता है, जिसमें हृदय पेशी को रक्त की आपूर्ति करने वाली वाहिनियाँ प्रभावित होती हैं। यह बीमारी धमनियों के अंदर कैल्सियम, वसा तथा अन्य रेशीय ऊतकों के जमा होने से होता है, जिससे धमनी की अवकाशिका संकरी हो जाती है।

हृदशूल (एंजाइना) : इसको **एंजाइना पेक्टोरिस (हृदशूल पेक्टोरिस)** भी कहते हैं। हृद पेशी में जब पर्याप्त ऑक्सीजन नहीं पहुँचती है तब सीने में दर्द (वक्ष पीड़ा) होता है जो एंजाइना (हृदशूल) की पहचान है। हृदशूल स्त्री या पुरुष दोनों में किसी भी उम्र में हो सकता है, लेकिन मध्यावस्था तथा वृद्धावस्था में यह सामान्यतः होता है। यह अवस्था रक्त बहाव के प्रभावित होने से होती है।

हृदपात (हार्ट फेल्योर) : हृदपात वह अवस्था है जिसमें हृदय शरीर के विभिन्न भागों को आवश्यकतानुसार पर्याप्त आपूर्ति नहीं कर पाता है। इसको कभी-कभी **संकुलित हृदपात** भी कहते हैं, क्योंकि फुप्फुस का संकुलन हो जाना भी उस बीमारी का प्रमुख लक्षण है। हृदपात ठीक हृदघात की भाँति नहीं होता (जहाँ हृदघात में हृदय की धड़कन बंद हो जाती है जबकि, हृदपात में हृदयपेशी को रक्त आपूर्ति अचानक अपर्याप्त हो जाने से यकायक क्षति पहुँचती है।

सारांश

कशेरुकी रक्त (द्रव संयोजी ऊतक) को पूरे शरीर में संचारित करते हैं जिसके द्वारा आवश्यक पदार्थ कोशिकाओं तक पहुँचाते हैं तथा वहाँ से अवशिष्टों को शरीर से बाहर निकालते हैं। दूसरा द्रव, जिसे लसीका ऊतक द्रव कहते हैं, भी कुछ पदार्थों को अभिगमित करता है।

रक्त, द्रव आधात्री (मैट्रिक्स) प्लैज्मा (प्लाज्मा) तथा संगठित पदार्थों से बना होता है। लाल रुधिर कणिकाएं (RBcs/इरिथ्रोसाइट), श्वेत रुधिर कणिकाएं (ल्यूकोसाइट) और प्लेट्लेट्स (थ्रोम्बोसाइट), संगठित पदार्थों का हिस्सा है। मानव का रक्त चार समूहों A, B, AB, O में वर्गीकृत किया गया है। इस वर्गीकरण का आधार लाल रुधिर कणिकाओं की सतह पर दो एंटीजेन A अथवा B का उपस्थित अथवा अनुपस्थित होना है। दूसरा वर्गीकरण लाल रुधिर कणिकाओं की सतह पर Rh घटक की उपस्थिति अथवा अनुपस्थिति पर किया गया है। ऊतक की कोशिकाओं के मध्य एक द्रव पाया जाता है जिसे **ऊतक द्रव** कहते हैं। इस द्रव को लसीका भी कहते हैं जो रक्त के समान होता है, परंतु इसमें प्रोटीन कम होती है तथा संगठित पदार्थ नहीं होते हैं।

सभी कशेरुकियों तथा कुछ अकशेरुकियों में बंद परिसंचरण तंत्र होता है। हमारे परिसंचरण तंत्र के अंतर्गत पेशीय पंपिंग अवयव, हृदय, वाहिकाओं का जाल तंत्र तथा द्रव, रक्त आदि सम्मिलित होते हैं। हृदय में दो आलिंद) तथा दो निलय होते हैं। हृद पेशीन्यास स्व-उत्तेजनीय होता है। शिराअलिंद पर्व (कोटरालिंद गाँठ SAN अधिकतम संख्या में प्रति मिनट (70/75 मिनट) क्रियविभव को उत्पन्न करती है और इस कारण यह हृदय की गतिविधियों की गति निर्धारित करती है। इसलिए इसे **पेश मेकर (गति प्रेरक)** कहते हैं। आलिंद द्वारा पैदा किया विभव और इसके बाद निलयों की आकुंचन (प्रकुंचन) का अनुकरण अनुशिथिलन द्वारा होता है। यह प्रकुंचन रक्त के अलिंद से निलयों की ओर बहाव के लिए दबाव डालता है और वहाँ से फुप्फुसीय धमनी और महाधमनी तक ले जाता है। हृदय की इस क्रमिक घटना को एक चक्र के रूप में बार-बार दोहराया जाता है जिसे **हृद चक्र** कहते हैं। एक स्वस्थ व्यक्ति प्रति मिनट ऐसे 72 चक्रों को प्रदर्शित करता है। एक हृद चक्र के दौरान प्रत्येक निलय द्वारा लगभग 70 मिली रक्त हर बार पंप किया जाता है। इसे **स्ट्रोक या विस्पंदन आयतन** कहते हैं। हृदय के निलय द्वारा प्रति मिनट पंप किए गए रक्त आयतन को **हृद निकास** कहते

हैं और यह स्ट्रोक आयतन तथा स्पंदन दर के गुणक बराबर होता है। यह प्रवाह आयतन प्रति मिनट हृदय दर (लगभग 5 लीटर) के बराबर होता है। हृदय में विद्युत क्रिया का आलेख इलैक्ट्रोकार्डियोग्राफ (विद्युत हृद आलेख मशीन) के द्वारा किया जा सकता है तथा विद्युत हृद आलेख को ECG कहते हैं, जिसका चिकित्सीय महत्व है।

हम पूर्ण दोहरा संचरण रखते हैं अर्थात् दो परिसंचरण पथ मुख्यत: फुप्फुसीय तथा दैहिक होते हैं। फुप्फुसीय परिसंचरण में ऑक्सीजनरहित रक्त को दाहिने निलय से फेफड़ों में पहुँचाया जाता है, जहाँ पर यह रक्त ऑक्सीजनित होता है तथा, फुप्फुसीय शिरा द्वारा बांए अलिंद में पहुँचता है। दैहिक परिसंचरण में बाएं निलय से ऑक्सीजन युक्त रक्त को महाधमनी द्वारा शरीर के ऊतकों तक पहुँचाया जाता है तथा वहाँ से ऑक्सीजन रहित रक्त को ऊतकों से शिराओं के द्वारा दाहिने अलिंद में वापस पहुँचाया जाता है। यद्यपि हृदय स्व उत्तेज्य होता है, लेकिन इसकी क्रियाशीलता को तंत्रिकीय तथा होर्मोन की क्रियाओं से नियमित किया जा सकता है।

अभ्यास

1. रक्त के संगठित पदार्थों के अवयवों का वर्णन करें तथा प्रत्येक अवयव के एक प्रमुख कार्य के बारे में लिखें।
2. प्लाज्मा (प्लैज्मा) प्रोटीन का क्या महत्व है?
3. स्तंभ I का स्तंभ II से मिलान करें

स्तंभ I	**स्तंभ II**
(i) इयोसिनोफिल्स	(क) रक्त जमाव (स्कंदन)
(ii) लाल रुधिर कणिकाएं	(ख) सर्व आदाता
(iii) AB रक्त समूह	(ग) संक्रमण प्रतिरोधन
(iv) पट्टिकाणु प्लेट्लेट्स	(घ) हृदय सकुंचन
(v) प्रकुंचन (सिस्टोल)	(च) गैस परिवहन (अभिगमन)

4. रक्त को एक संयोजी ऊतक क्यों मानते हैं?
5. लसीका एवं रुधिर में अंतर बताएं?
6. दोहरे परिसंचरण से क्या तात्पर्य है? इसकी क्या महत्ता है?
7. भेद स्पष्ट करें-
   (क) रक्त एवं लसीका
   (ख) खुला व बंद परिसंचरण तंत्र
   (ग) प्रकुंचन तथा अनुशिथिलन
   (घ) P तरंग तथा T तरंग
8. कशेरुकी के हृदयों में विकासीय परिवर्तनों का वर्णन करें?
9. हम अपने हृदय को पेशीजनक (मायोजेनिक) क्यों कहते हैं?
10. शिरा अलिंद पर्व (कोटरालिंद गाँठ SAN) को हृदय का गति प्रेरक (पेशमेकर) क्यों कहा जाता है?
11. अलिंद निलय गाँठ (AVN) तथा आलिंद निलय बंडल (AVB) का हृदय के कार्य में क्या महत्व है।
12. हृद चक्र तथा हृदनिकास को पारिभाषित करें?
13. हृदय ध्वनियों की व्याख्या करें।
14. एक मानक ईसीजी को दर्शाएं तथा उसके विभिन्न खंडों का वर्णन करें।

अध्याय 19

उत्सर्जी उत्पाद एवं उनका निष्कासन

19.1 *मानव उत्सर्जन तंत्र*

19.2 *मूत्र निर्माण*

19.3 *वृक्क नलिका के विभिन्न भागों के कार्य*

19.4 *निस्यंद का सांद्रण करने की क्रियाविधि*

19.5 *वृक्क क्रियाओं का नियमन*

19.6 *मूत्रण*

19.7 *उत्सर्जन में अन्य अंगों की भूमिका*

19.8 *वृक्क-विकृतियाँ*

प्राणी उपापचयी अथवा अत्यधिक अंत:ग्रहण जैसी क्रियाओं द्वारा अमोनिया, यूरिया, यूरिक अम्ल, कार्बनडाइऑक्साइड, जल और अन्य आयन जैसे सोडियम, पोटैसियम, क्लोरीन, फॉस्फेट, सल्फेट आदि का संचय करते हैं। प्राणियों द्वारा इन पदार्थों का पूर्णतया या आंशिक रूप से निष्कासन आवश्यक है। इस अध्याय में आप इन पदार्थों, साथ ही विशेष रूप से साधारण नाइट्रोजनी अपशिष्टों के निष्कासन का अध्ययन करेंगे।

प्राणियों द्वारा उत्सर्जित होने वाले नाइट्रोजनी अपशिष्टों में मुख्य रूप से अमोनिया, यूरिया और यूरिक हैं। इनमें अमोनिया सर्वाधिक आविष (टॉक्सिक) है और इसके निष्कासन के लिए अत्यधिक जल की आवश्यकता होती है। यूरिक अम्ल कम आविष है और जल की कम मात्रा के साथ निष्कासित किया जा सकता है।

अमोनिया के उत्सर्जन की प्रक्रिया को *अमोनियोत्सर्ग* प्रक्रिया कहते हैं। अनेक अस्थिल मछलियाँ, उभयचर और जलीय कीट अमोनिया उत्सर्जी प्रकृति के हैं। अमोनिया सरलता से घुलनशील है, इसलिए आसानी से अमोनियम आयनों के रूप में शरीर की सतह या मछलियों के क्लोम (गिल) की सतह से विसरण द्वारा उत्सर्जित हो जाते हैं। इस उत्सर्जन में वृक्क की कोई अहम भूमिका नहीं होती है। इन प्राणियों को **अमोनियाउत्सर्जी** (अमोनोटैलिक) कहते हैं।

स्थलीय आवास में अनुकूलन हेतु, जल की हानि से बचने के लिए प्राणी कम आविष नाइट्रोजनी अपशिष्टों जैसे यूरिया और यूरिक अम्ल का उत्सर्जन करते हैं। स्तनधारी, कई स्थली उभयचर और समुद्री मछलियाँ मुख्यत: यूरिया का उत्सर्जन करते हैं और **यूरियाउत्सर्जी** (यूरियोटेलिक) कहलाते हैं। इन प्राणियों में उपापचयी क्रियाओं द्वारा निर्मित अमोनिया को यकृत द्वारा यूरिया में परिवर्तित कर रक्त में मुक्त कर दिया जाता है, जिसे वृक्कों द्वारा निस्यंदन के पश्चात उत्सर्जित कर दिया जाता है। कुछ प्राणियों

के वृक्कों की आधात्री (मैट्रिक्स) में अपेक्षित परासरणता को बनाए रखने के लिए यूरिया की कुछ मात्रा रह जाती है।

सरीसृपों, पक्षियों, स्थलीय घोंघों तथा कीटों में नाइट्रोजनी अपशिष्ट यूरिक अम्ल का उत्सर्जन, जल की कम मात्रा के साथ गोलिकाओं या पेस्ट के रूप में होता है और ये **यूरिकअम्लउत्सर्जी** (यूरिकोटेलिक) कहलाते हैं। प्राणी जगत में कई प्रकार के उत्सर्जी अंग पाए जाते हैं। अधिकांश अकशेरुकियों में यह संरचना सरल नलिकाकार रूप में होती है, जबकि कशेरुकियों में जटिल नलिकाकार अंग होते हैं, जिन्हें वृक्क कहते हैं। इन संरचनाओं के प्रमुख रूप नीचे दिए गए हैं-

आदिवृक्कक (प्रोटोनेफ्रिडिआ) या ज्वाला कोशिकाएं, प्लेटिहेल्मिंथ (चपटे कृमि जैसे *प्लैनेरिया*), रॉटीफर कुछ एनेलिड, सिफेलोकॉर्डेट (*एम्फीऑक्सस*) आदि में उत्सर्जी संरचना के रूप में पाए जाते हैं। आदिवृक्कक प्राथमिक रूप से आयनों व द्रव के आयतन-नियमन जैसे परासरणनियमन से संबंधित हैं।

केंचुए व अन्य एनेलिड में नलिकाकार उत्सर्जी अंग वृक्कक पाए जाते हैं। वृक्कक नाइट्रोजनी अपशिष्टों को उत्सर्जित करने तथा द्रव और आयनों का संतुलन बनाए रखने में सहायता करते हैं।

तिलचट्टों (कॉकरोच) सहित अधिकांश कीटों में उत्सर्जी अंग के रूप में मैलपीगी नलिकाएं पाई जाती हैं। मैलपीगी नलिकाएं नाइट्रोजनी अपशिष्टों के उत्सर्जन और परासरणनियमन में मदद करती हैं।

झींगा (प्रॉन) जैसे क्रस्टेशियाई प्राणियों में शृंगिक ग्रंथियाँ (एंटिनलग्लांड) या हरित ग्रंथियाँ उत्सर्जन का कार्य करती हैं।

19.1 मानव उत्सर्जन तंत्र

मनुष्यों में उत्सर्जी तंत्र एक जोड़ी वृक्क, एक जोड़ी मूत्र नलिका, एक मूत्राशय और एक मूत्र मार्ग का बना होता है (चित्र 19.1)। वृक्क सेम के बीज की आकृति के गहरे भूरे लाल रंग के होते हैं तथा ये अंतिम वक्षीय और तीसरी कटि कशेरुका के समीप उदर गुहा में आंतरिक पृष्ठ सतह पर स्थित होते हैं। वयस्क मनुष्य के प्रत्येक वृक्क की लम्बाई 10-12 सेमी., चौड़ाई 5-7 सेमी., मोटाई 2-3 सेमी. तथा भार लगभग 120-170 ग्राम होता है। वृक्क के केंद्रीय भाग की भीतरी अवतल (कॉन्केव) सतह के मध्य में एक खांच होती है, जिसे हाइलम कहते हैं। इसे होकर मूत्र-नलिका, रक्त वाहिनियाँ और तंत्रिकाएं प्रवेश करती हैं। हाइलम के भीतरी ओर कीप के आकार का रचना होती है जिसे वृक्कीय श्रोणि (पेल्विस) कहते हैं तथा इससे निकलने वाले प्रक्षेपों

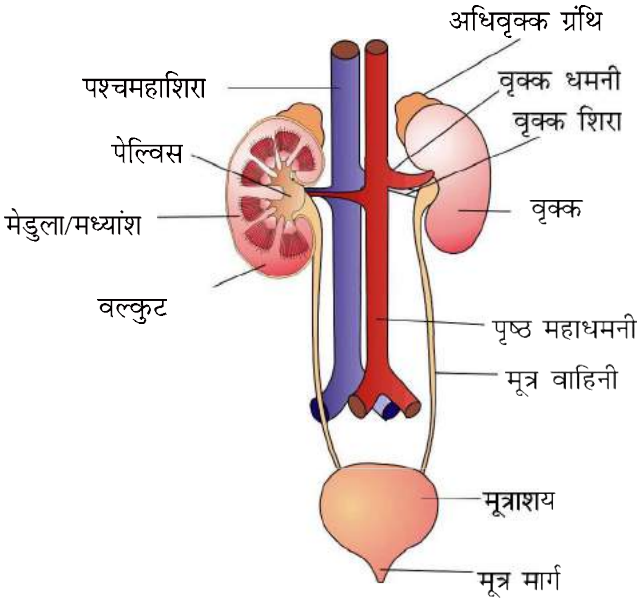

चित्र 19.1 मानव का उत्सर्जन तंत्र

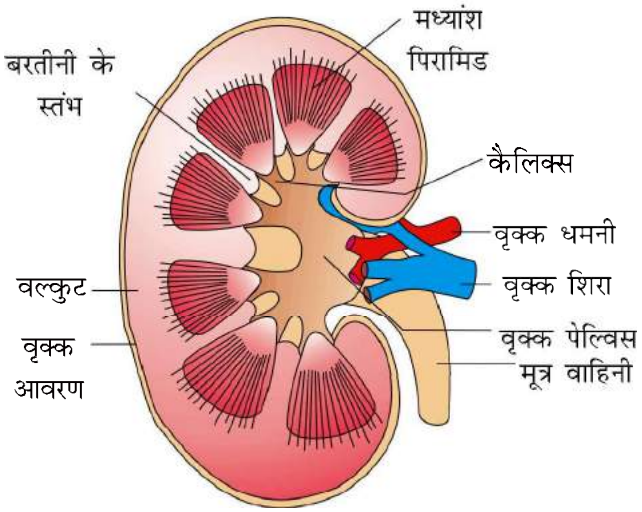

चित्र 19.2 वृक्क का भाग

(प्रोजेक्शन) को चषक (कैलिक्स) कहते हैं। वृक्क की बाहरी सतह पर दृढ़ संपुट होता है। वृक्क में दो भाग होते हैं - बाहरी *वल्कुट* (कॉर्टेक्स) और *भीतरी मध्यांश* (मेडुला)। मध्यांश कुछ शंक्वाकार पिरामिड (मध्यांश पिरामिड)में बँटा होता है जो कि चषकों में फैले रहते हैं। वल्कुट मध्यांश पिरामिड (पिंडों) के बीच फैलकर वृक्क स्तंभ बनाते हैं, जिन्हें **बरतीनी-स्तंभ** (Columns of Bertini) कहते हैं (चित्र 19.2)।

प्रत्येक वृक्क में लगभग 10 लाख जटिल नलिकाकार संरचना **वृक्काणु (नेफ्रोन)** पाई जाती हैं जो क्रियात्मक इकाइयाँ हैं (चित्र 19.3)। प्रत्येक वृक्काणु के दो भाग होते हैं। जिन्हें गुच्छ (ग्लोमेरूलस) और वृक्क नलिका कहते हैं। गुच्छा वृक्कीय धमनी की शाखा अभिवाही धमनिकाओं (afferent arteriole) से बनी केशिकाओं (कैपिलरी) का एक गुच्छ है। ग्लोमेरूलस से रक्त अपवाही धमनिका (efferent arteriole) द्वारा ले जाया जाता है।

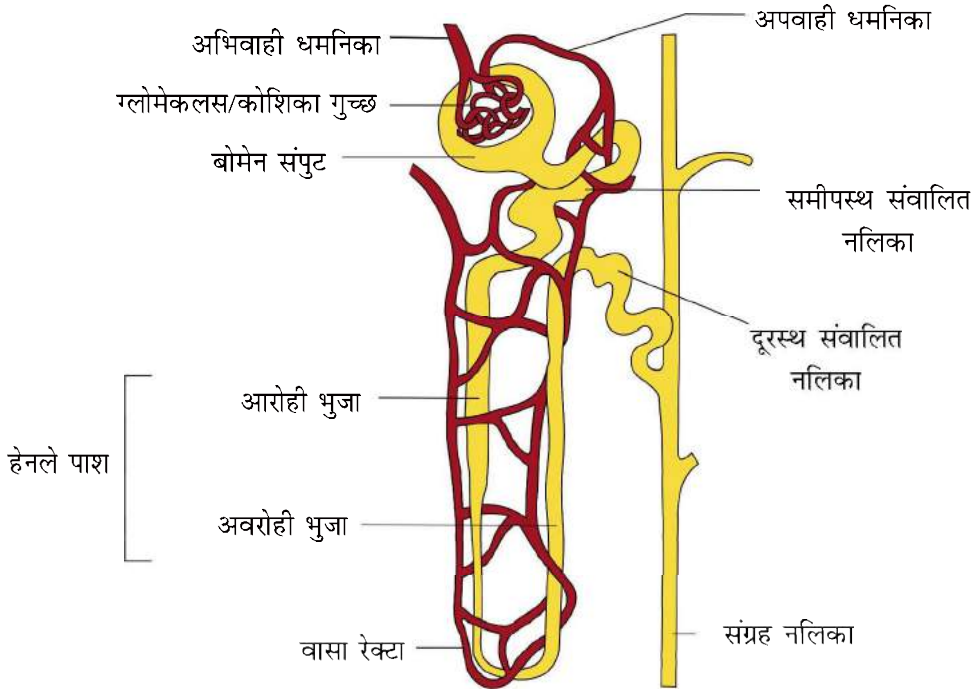

चित्र 19.3 रक्त वाहिनयाँ, वाहिनियाँ तथा नलिकाएं प्रदर्शित करता हुआ एक नेफ्रोन

वृक्क नलिका दोहरी झिल्ली युक्त प्यालेनुमा बोमेन संपुट से प्रारंभ होती है, जिसके भीतर गुच्छ होता है। गुच्छ और बोमेन संपुट मिलकर *मेल्पीगीकाय* अथवा *वृक्क कणिका (कार्पसल)* बनाते हैं (चित्र 19.4)। **बोमेन संपुट** से एक अति कुंडलित **समीपस्थ संवलित नलिका** (पीसीटी) प्रारंभ होती है, इसके बाद वृक्काणु में हेयर पिन के आकार का **हेनले-लूप** (Henle's loop) पाया जाता है, जिसमें आरोही व अवरोही भुजा होती है। आरोही भुजा से एक ओर अति कुंडलित नलिका, **दूरस्थ संवलित नलिका** (डीसीटी) प्रारंभ होती है।

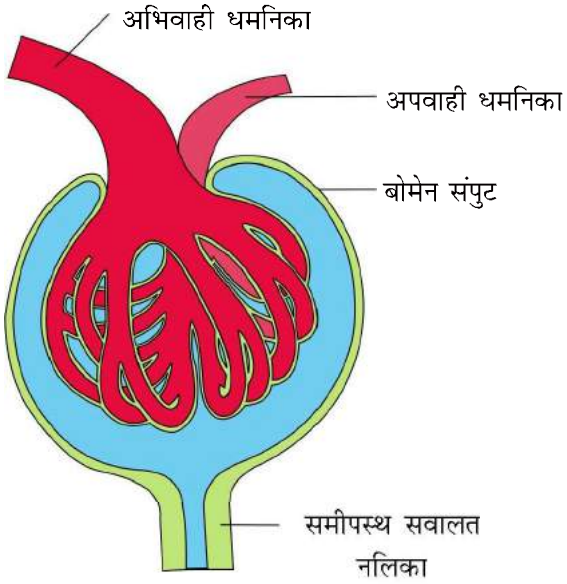

चित्र 19.4 बोमेन सम्पुट/मैलपीगी काय/वृक्क कार्पसल

अनेक वृक्काणुओं की दूरस्थ संवलित नलिकाएं एक सीधी संग्रह नलिका में खुलती हैं। अनेक संग्रह नलिकाएं मिलकर चषकों के बीच स्थित मध्यांश पिरामिड से गुजरती हुई वृक्कीय श्रोणि में खुलती हैं।

वृक्काणु की वृक्क कणिका, समीपस्थ संवलित नलिका, दूरस्थ संवलित नलिका आदि वृक्क के वल्कुट भाग में, जबकि हेनले-लूप मध्यांश में, स्थित होते हैं।

अधिकांश वृक्काणु के हेनले-लूप बहुत छोटे होते हैं और मध्यांश में बहुत कम धँसे रहते हैं ऐसे वृक्काणुओं को वल्कुटीय वृक्कक कहते हैं। कुछ वृक्काणुओं के हेनले-लूप बहुत लंबे होते हैं तथा मध्यांश में काफी गहराई तक धंसे रहते हैं। इन्हें *सान्निध्य मध्यांश वृक्काणु* (जक्सटा मेडुलरी नेफ्रोन) कहते हैं (चित्र 19.5)।

गुच्छ से निकलने वाली अपवाही धमनिका, वृक्कीय नलिका के चारों ओर सूक्ष्म केशिकाओं का जाल बनाती हैं, जिसे परिनालिका केशिका जाल कहते हैं। इस जाल से निकलने वाली एक एक सूक्ष्म वाहिका हेनले-लूप के समानांतार चलते हुए 'यू' ('U') आकार की संरचना *वासा रेक्टा* बनाती है। वल्कुटीय वृक्काणु में वासा रेक्टा या तो अनुपस्थित या अत्यधिक ह्रासित होती है।

19.2 मूत्र निर्माण

मूत्र निर्माण में 3 मुख्य प्रक्रियाएं सम्मिलित हैं - गुच्छीय निस्यंदन, पुन:अवशोषण, स्रवण जो वृक्काणु के विभिन्न भागों में होता है।

मूत्र निर्माण के प्रथम चरण में केशिकागुच्छ द्वारा रक्त का निस्यंदन होता है जिसे **गुच्छ या गुच्छीय निस्यंदन** कहते हैं। वृक्कों द्वारा प्रति मिनट औसतन 1100-1200 मिली. रक्त का निस्यंदन किया जाता है जो कि हृदय द्वारा एक मिनट में निकाले गए रक्त के 1/5 वें भाग के बराबर होता है। गुच्छ की केशिकाओं का रक्त-दाब रुधिर का 3 परतों में से निस्यंदन करता है। ये तीन परते हैं गुच्छ की रक्त केशिका की आंतरिक उपकला, बोमेन संपुट की उपकला तथा इन दोनों पर्तों के बीच पाई जाने वाली आधार झिल्ली। बोमेन संपुट की उपकला कोशिकाएं *पदाणु (पोडोसाइट्स)* कहलाती हैं, जो विशेष प्रकार

से विन्यसित होती हैं, जिससे कुछ छोटे-छोटे अवकाश बीच में रह जाते हैं। इन्हें निस्यंदन खांच या खांच छिद्र (स्लिटपोर) कहते हैं। इन झिल्लियों से रुधिर इतनी अच्छी तरह छनता है कि जिससे रुधिर के प्लाज्मा की प्रोटीन को छोड़कर प्लाज्मा का शेषभाग छन कर संपुट की गुहा में इकट्ठा हो जाता है। इसलिए इसे **परा-निस्यंदन** (अल्ट्रा फिल्ट्रेशन) कहते हैं। वृक्कों द्वारा प्रति मिनट निस्यंदित की गई मात्रा **गुच्छीय निस्यंदन दर** (GFR) कहलाती है। एक स्वस्थ व्यक्ति में यह दर 125 मिली. प्रति मिनट अर्थात् 180 लीटर प्रति दिन है।

गुच्छ निस्यंदन की दर के नियमन के लिए वृक्कों द्वारा क्रिया विधि अपनाई जाती है। गुच्छीय आसन्न उपकरण द्वारा एक अति सूक्ष्म क्रियाविधि संपन्न की जाती है। यह विशेष संवेदी उपकरण अभिवाही तथा अपवाही धमनिकाओं के संपर्क स्थल पर दूरस्थ संवलित नलिका की केशिकाओं के रूपांतरण से बनता है। गुच्छ निस्यंदन दर में गिरावट इन आसन गुच्छ केशिकाओं को रेनिन के स्रवण के सक्रिय करती है जो वृक्कीय रुधिर का प्रवाह बढ़ाकर गुच्छ निस्यंदन दर को पुनः सामान्य कर देती है।

प्रतिदिन बनने वाले निस्यंद के आयतन (180 लीटर प्रति दिन) की उत्सर्जित मूत्र (1.5 लीटर) से तुलना की जाए तो यह समझा जा सकता है कि 99 प्रतिशत निस्यंद को वृक्क नलिकाओं द्वारा पुनः अवशोषित किया जाता है जिसे **पुनःअवशोषण** कहते हैं। यह कार्य वृक्क नलिका की उपकला कोशिकाएं अलग-अलग खंडों में सक्रिय अथवा निष्क्रिय क्रियाविधि द्वारा करती हैं। उदाहरणार्थ निस्यंद पदार्थ जैसे ग्लूकोज, एमीनो अम्ल, Na^+ इत्यादि सक्रिय रूप से परिवहन से पुनरावशोषित कर लिए जाते हैं; जबकि नाइट्रोजनी निष्क्रिय रूप से अवशोषित होते हैं। वृक्काणु के प्रारंभिक भाग में जल का पुनरावशोषण निष्क्रिय क्रिया द्वारा होता है (चित्र 19.5)। मूत्र निर्माण के दौरान नलिकाकार कोशिकाएं निस्यंद में H^+, K^+ और अमोनिया जैसे पदार्थों को स्रवित करती हैं। नलिकाकार स्रवण भी मूत्र निर्माण का एक मुख्य चरण है; क्योंकि यह शारीरिक तरल आयनी व अम्ल-क्षार संतुलन को बनाए रखता है।

19.3 वृक्क नलिका के विभिन्न भागों के कार्य

समीपस्थ संवलित नलिका : यह नलिका सरल घनाकार ब्रुश बार्डर उपकला से बनी होती है जो पुनरावशोषण के लिए सतह क्षेत्र को बढ़ाती है। लगभग सभी आवश्यक पोषक तत्व, 70-80 प्रतिशत वैद्युत-अपघट्य और जल का पुनः अवशोषण इसी भाग द्वारा होता है। समीपस्थ संवलित नलिका शारीरिक तरलों के पीएच तथा आयनी संतुलन को इससे बनाए रखने के लिए H^+, अमोनिया और K^+ आयनों का निस्यंद में स्रवण और HCO_3^- का पुनरावशोषण करती हैं।

हेनले-लूप : आरोही भुजा में न्यूनतम पुनरावशोषण होता है। यह भाग मंध्यांश में उच्च अंतराकाशी तरल की परासणता के नियमन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। हेनले-लूप की अवरोही भुजा जल के लिए अपारगम्य होती है, परंतु वैद्युत अपघट्य के लिए सक्रियता से या धीरे-धीरे पारगम्य होती है। यह नीचे की ओर जाते हुए निस्यंद को सांद्र करती है। आरोही भुजा जल के लिए अपारगम्य होती है; लेकिन वैद्युत अपघट्य का अवशोषण सक्रिय या निष्क्रिय रूप से करती है। जैसे-जैसे सांद्र निस्यंद ऊपर की ओर जाता है, वैसे-वैसे वैद्युत अपघट्य के मध्यांश तरल में जाने से निस्यंद तनु (dilute) होता जाता है।

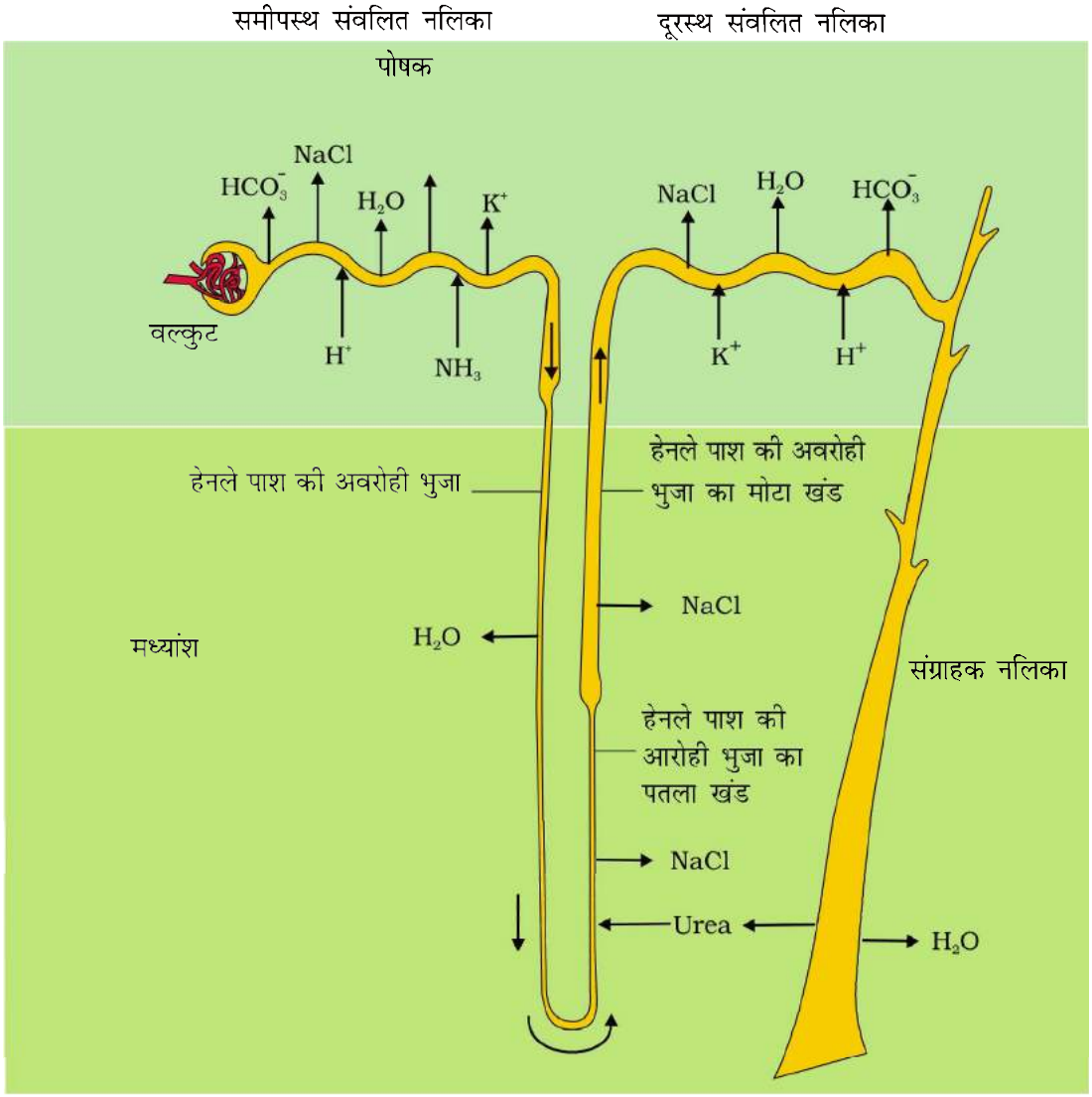

चित्र 19.5 नेफ्रोन के विभिन्न भागों द्वारा प्रमुख पदार्थों का पुनरावशोषण एवं स्रवण (→ गमन की दिशा को प्रदर्शित करता है)

दूरस्थ संवलित नलिका (DCT) : विशिष्ट परिस्थितियों में Na^+ और जल का कुछ पुनरावशोषण इस भाग में होता है। दूरस्थ संवलित नलिका रक्त में सोडियम-पोटैसियम का संतुलन तथा pH बनाए रखने के लिए बाइकार्बोनेटस का पुनरावशोषण एवं H^+, K^+ और अमोनिया का चयनात्मक स्रवण करती है।

संग्रह नलिका : यह लंबी नलिका वृक्क के वल्कुट से मध्यांश के आंतरिक भाग तक फैली रहती है। मूत्र को आवश्यकतानुसार सांद्र करने के लिए जल का बड़ा हिस्सा इस भाग में अवशोषित किया जाता है। यह भाग मध्यांश की अंतरकाशी की परासरणता को बनाए रखने के लिए यूरिया के कुछ भाग को वृक्क मध्यांश तक ले जाता है। यह pH के नियमन तथा H^+ और K^+ आयनों के चयनात्मक स्रवण द्वारा रक्त में आयनों का संतुलन बनाए रखने में भी भूमिका निभाता है (चित्र 19.5)।

19.4 निस्यंद (छनित) को सांद्रण करने की क्रियाविधि

स्तनधारी सांद्रित मूत्र का उत्पादन करते हैं। इस कार्य में हेनले-लूप और वासा रेक्टा महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। हेनले-लूप की दोनों भुजाओं में निस्यंद का विपरीत दिशाओं में प्रवाह होता है, जिससे प्रतिधारा उत्पन्न होती है। वासा रेक्टा की दोनों भुजाओं में रक्त का बहाव भी प्रतिधारा प्रतिरूप (पैटर्न) में होता है। हेनले-लूप व वासा रेक्टा के बीच की नजदीकी तथा उनमें प्रतिधारा मध्यांशी अंतराकाश (मेडुलरी इंटरटिशियम) के परासरण दाब को विशेष प्रकार से नियमित करती है। परासरण दाब मध्यांश के बाहरी भाग से भीतरी भाग की ओर लगातार बढ़ता जाता है, जैसे कि वल्कुट की ओर 300 mOsm/लीटर से आंतरिक मध्यांश में लगभग 1200 mOsm / लीटर। यह प्रवणता सोडियम क्लोराइड तथा यूरिया के कारण बनती है। NaCl का परिवहन हेनले-लूप की

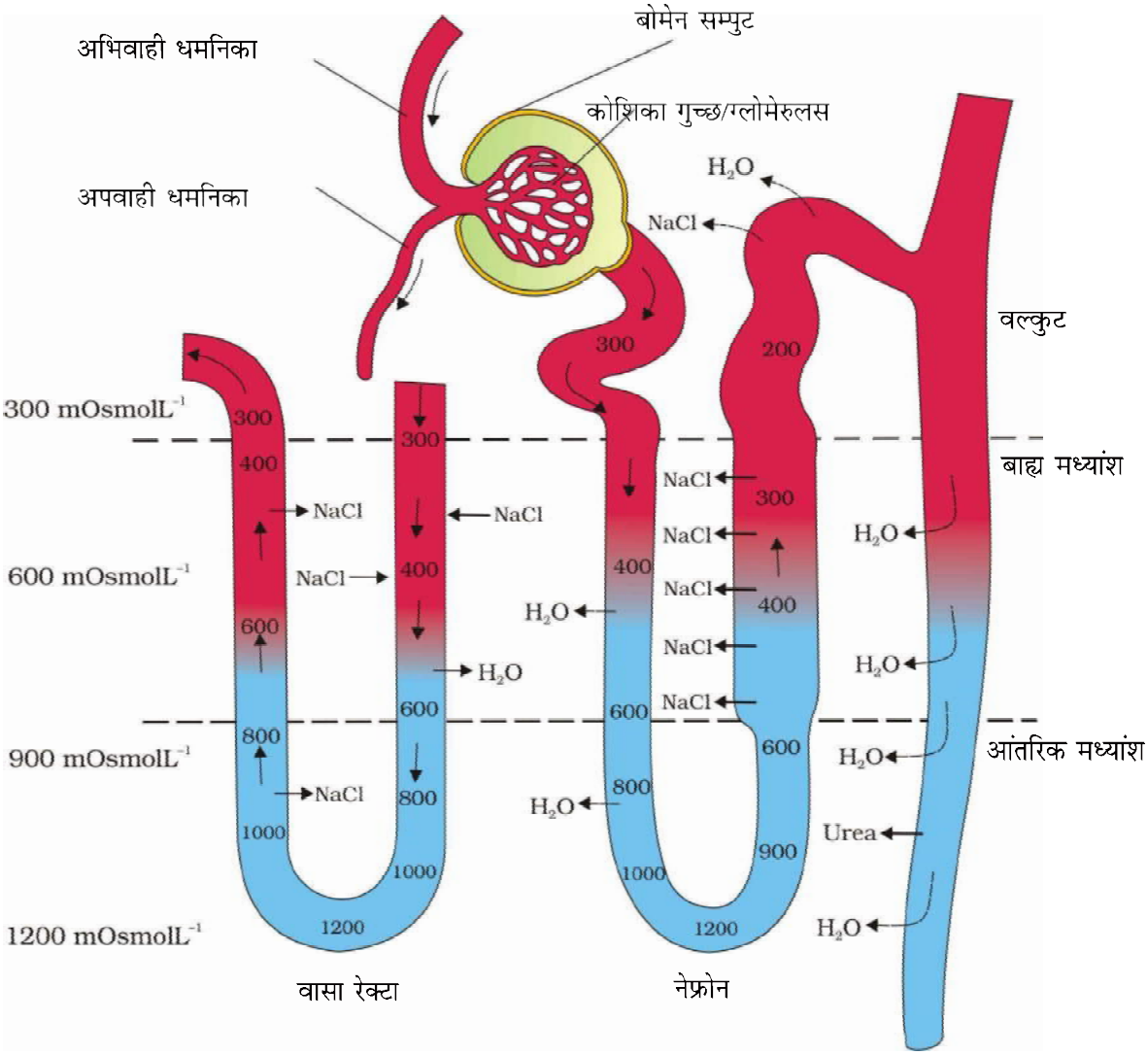

चित्र 19.6 नेफ्रोन तथा वासा रेक्टा द्वारा निर्मित प्रतिधारा प्रवाह क्रियाविधि

आरोही भुजा द्वारा होता है। जिसे हेनले-लूप की अवरोही भुजा के साथ विनमित किया है। सोडियम क्लोराइड, अंतराकाश को वासा रेक्टा की आरोही भुजा द्वारा लौटा दिया जाता है। इसी प्रकार यूरिया की कुछ मात्रा हेनले-लूप के पतले आरोही भाग में विसरण द्वारा प्रविष्ट होती है जो संग्रह नलिका द्वारा अंतराकाशी को पुनः लौटा दी जाती है। ऊपर वर्णित पदार्थों का परिवहन, हेनले-लूप तथा वासा रेक्टा की विशेष व्यवस्था द्वारा सुगम बनाया जाता है जिसे **प्रतिधारा क्रियाविधि** कहते हैं। यह क्रियाविधि मध्यांश के अंतराकाशी की प्रवणता को बनाए रखती है। इस प्रकार की अंतराकाशीय प्रवणता संग्रह नलिका द्वारा जल के सहज अवशोषण में योगदान करती है और निस्यंद का सांद्रण करती है (चित्र 19.6)। हमारे वृक्क प्रारंभिक निस्यंद की अपेक्षा लगभग चार गुना अधिक सांद्र मूत्र उत्सर्जित करते हैं। यह निश्चित ही जल के ह्रास को रोकने की मुख्य क्रियाविधि है।

19.5 वृक्क क्रियाओं का नियमन

वृक्कों की क्रियाविधि का नियंत्रण और नियमन हाइपोथैलेमस के हार्मोन की पुनर्भरण क्रियाविधि, (सान्निध्य गुच्छ उपकरण), (जेजीए) और कुछ सीमा तक हृदय द्वारा होता है।

शरीर में उपस्थित परासरण ग्राहियाँ रक्त आयतन/शरीर तरल आयतन और आयनी सांद्रण में बदलाव द्वारा सक्रिय होती हैं। शरीर से मूत्र द्वारा जल का अत्यधिक ह्रास (मूत्रलता/डाइयूरेसिस) इन ग्राहियों को सक्रिय करता है, जिससे हाइपोथैलेमस प्रतिमूत्रल हार्मोन (एंटीडाइयूरेटि हार्मोन) (एडीएच) और न्यूरोहाइपोफाइसिस को वैसोप्रेसिन के स्राव हेतु प्रेरित करता है। एडीएच नलिका के अंतिम भाग में जल के पुनरावशोषण को सुगम बनाता है और मूत्रलता को रोकता है। शरीर तरल के आयतन में वृद्धि परासण ग्रहियों को निष्क्रिय कर देती है और पुनर्भरण को पूरा करने के लिए एडीएच के स्रवण का निरोध करती है। एडीएच वृक्क के कार्यों को रक्त वाहिनियों पर सकुचनी प्रभावों द्वारा भी प्रभावित करता है। इससे रक्त दाब बढ़ जाता है। रक्तदाब बढ़ जाने से गुच्छ प्रवाह बढ़ जाता है और इससे जीएफआर बढ़ जाता है।

जेजीए की जटिल नियमनकारी भूमिका है। गुच्छीय रक्त प्रवाह/गुच्छीय रक्त दाब/जीएफआर में गिरावट से जेजी कोशिकाएं सक्रिय होकर **रेनिन** को मुक्त करती है। रेनिन रक्त में उपस्थित ऐंजिओटेंसिनोजन को एंजियोटेंसिन-I और बाद में एंजियोटेंसिन-द्वितीय में बदल देती है। एंजियोटेंसिन द्वितीय एक प्रभावकारी वाहिका संकीर्णक (वेसोकेंसट्रिक्टर) है जो गुच्छीय रुधिर दाब तथा जीएफआर को बढ़ा देता है। एंजोयोटेंसिन द्वितीय अधिवृक्क वल्कुट को एल्डोस्टीरोन हार्मोन स्रवण के लिए प्रेरित करता है। एल्डोस्टीरोन के कारण नलिका के दूरस्थ भाग में Na^+ तथा जल का पुनरावशोषण होता है। इससे भी रक्त दाब तथा जीएफआर में वृद्वि होती है। यह जटिल क्रियाविधि **रेनिन एंजियोटेंसिन** क्रियाविधि कहलाती है।

हृदय के अलिंदों में अधिक रुधिर के बहाव से **अलिंदीय नेट्रियेरेटिक कारक** (एएनएफ) स्रवित होता है। एएनएफ से वाहिकाविस्फारण (रक्त वाहिकाओं का विस्फारण)

होता है जिससे रक्त दाब कम हो जाता है। इस प्रकार से एएनएफ क्रियाविधि रेनिन-एंजियोटेंसिन क्रियाविधि पर नियंत्रक का काम करता है।

19.6 मूत्रण

वृक्क द्वारा निर्मित मूत्र अंत में मूत्राशय में जाता है और केंद्रीय तंत्रिका तंत्र द्वारा ऐच्छिक संकेत दिए जाने तक संग्रहित रहता है। मूत्राशय में मूत्र भर जाने पर उसके फैलने के फलस्वरूप यह संकेत उत्पन्न होता है। मूत्राशय भित्ति से इन आवेगों को केंद्रीय तंत्रिका तंत्र में भेजा जाता है। केंद्रीय तंत्रिका तंत्र से मूत्राशय की चिकनी पेशियों के संकुचन तथा मूत्राशयी-अवरोधिनी के शिथिलन हेतु एक प्रेरक संदेश जाता है, जिससे मूत्र का उत्सर्जन होता है। मूत्र उत्सर्जन की क्रिया मूत्रण कहलाती है और इसे संपन्न करने वाली तंत्रिका क्रियाविधि मूत्रण-प्रतिवर्त कहलाती है।

एक वयस्क मनुष्य प्रतिदिन औसतन 1-1.5 लीटर मूत्र उत्सर्जित करता है। मूत्र एक विशेष गंध युक्त जलीव तरल है, जो रंग में हल्का पीला तथा थोड़ा अम्लीय (pH-6) होता है (pH-6)। औसतन प्रतिदिन 25-30 ग्राम यूरिया का उत्सर्जन होता है। विभिन्न अवस्थाएं मूत्र की विशेषताओं को प्रभावित करती हैं। मूत्र का विश्लेषण वृक्कों के कई उपापचयी विकारों और उनके ठीक से कार्य न करने को कुसंक्रिया जैसे रोग निदान में मदद करता है। उदाहरण के लिए मूत्र में ग्लूकोस की उपस्थिति (ग्लाइकोसूरिया) तथा कीटोन काय की उपस्थिति (कीटोनयूरिया) मधुमेह (डाइबिटीज मेलीटस) के लक्षण है।

19.7 उत्सर्जन में अन्य अंगों की भूमिका

वृक्कों के अलावा फुप्फुस यकृत और त्वचा भी उत्सर्जी अपशिष्टों को बाहर निकालने में मदद करते हैं।

हमारे फेफड़े प्रतिदिन भारी मात्रा में CO_2 (लगभग 200ml/मिनट) और जल की पर्याप्त मात्रा का निष्कासन करते हैं। हमारे शरीर की सबसे बड़ी ग्रंथि यकृत 'पित्त' का स्राव करती है जिसमें बिलिरूबिन, बिलीविरडिन, कॉलेस्ट्रॉल, निम्नीकृत स्टीरॉयड हार्मोन, विटामिन तथा औषध आदि होते हैं। इन अधिकांश पदार्थों को अंततः मल के साथ बाहर निकाल दिया जाता है।

त्वचा में उपस्थित स्वेद ग्रंथियाँ तथा तैल-ग्रंथियाँ भी स्राव द्वारा कुछ पदार्थों का निष्कासन करती हैं। स्वेद ग्रंथि द्वारा निकलने वाला पसीना एक जलीय द्रव है, जिसमें नमक, कुछ मात्रा में यूरिया, लैक्टिक अम्ल इत्यादि होते हैं। हालाकि पसीने का मुख्य कार्य वाष्पीकरण द्वारा शरीर सतह को ठंडा रखना है; लेकिन यह ऊपर बताए गए कुछ पदार्थों के उत्सर्जन में भी सहायता करता है।

तैल-ग्रंथियाँ सीबम द्वारा कुछ स्टेरोल, हाइड्रोकार्बन एवं मोम जैसे पदार्थों का निष्कासन करती हैं। ये स्राव त्वचा को सुरक्षात्मक तैलीय कवच प्रदान करते हैं। क्या आप जानते हैं कि कुछ नाइट्रोजनी अपशिष्टों का निष्कासन लार द्वारा भी होता है?

19.8 वृक्क-विकृतियाँ

वृक्कों की कुसंक्रिया के फलस्वरूप रक्त में यूरिया एकत्रित हो जाता है। जिसे **यूरिमिया** कहते हैं जो कि अत्यंत हानिकारक है। यह वृक्क-पात के लिए मुख्यरूप से उत्तरदायी है। इसके मरीजों में यूरिया का निष्कासन हीमोडायलिसिस (**रक्त अपोहन**) द्वारा होता है। रोगी की धमनी से रक्त निकालकर उसमें हिपेरिन जैसा कोई थक्का रोधी मिलाकर अपोहनकारी इकाई में भेजा जाता है। इस इकाई में कुंडलित सेलोफेन नली होती है और यह ऐस द्रव से घिरी रहती है, जिसका संगठन नाइट्रोजनी अपशिष्टों को छोड़कर प्लाज्मा के समान होता है। छिद्रयुक्त सेलोफेन झिल्ली से अपोहनी द्रव में अणुओं का आवागमन सांद्र प्रवणता के अनुसार होता है। अपोहनी द्रव में नाइट्रोजनी अपशिष्ट अनुपस्थित होते हैं, अत: ये पदार्थ बाहर की ओर गमन करते हैं और रक्त को शुद्ध करते हैं। शुद्ध रक्त में हीपेरिन विरोधी डालकर, उसे रोगी की शिराओं द्वारा पुन: शरीर में भेज दिया जाता है। यह विधि संसार में यूरेमिक व्याधि से हजारों पीड़ितों के लिए एक वरदान है।

वृक्क की क्रियाहीनता को दूर करने का अंतिम उपाय वृक्क प्रत्यारोपण है। प्रत्यारोपण में मुख्यतया निकट संबंधी दाता के क्रियाशील वृक्क का उपयोग किया जाता है, जिससे प्राप्तकर्ता का प्रतिरक्षा तंत्र उसे अस्वीकार नहीं करे। आधुनिक क्लीनिकल विधियाँ इस प्रकार की जटिल तकनीक सफलता की दर को बढ़ाती है।

रीनल केलकलाई: वृक्क में बनी पथरी या अघुलनशील क्रिस्टलित लवण के पिंड (जैसे ऑक्सलेट आदि)।

ग्लोमेलोनेफ्राइटिस (गुच्छ शोथ): वृक्क के गुच्छ-शोथ की प्रदाहकता।

सारांश

शरीर में विभिन्न क्रियाओं द्वारा कई नाइट्रोजनी पदार्थ, आयन, CO_2 जल आदि इकट्ठे हो जाते हैं, जिसमें से अधिकांश शरीर को समस्थापन में रखने के लिए विभिन्न विधियों द्वारा निष्कासित किए जाते हैं।

भिन्न-भिन्न प्राणियों में नाइट्रोजनी अपशिष्टों की प्रकृति, उनका निर्माण और उत्सर्जन विभिन्न प्रकार से होता है जो मुख्यत जल की उपलब्धता पर निर्भर करता है। उत्सर्जित किए जाने वाले मुख्य नाइट्रोजनी अपशिष्ट – अमोनिया, यूरिया, यूरिक अम्ल हैं।

आदिवृक्ककी (प्रोटोनेफ्रीडिया), वृक्कक, मैलपीगी नलिकाएं, हरित ग्रंथियाँ और वृक्क प्राणियों के मुख्य उत्सर्जी अंग हैं। ये न केवल नाइट्रोजनी अपशिष्टों को शरीर से बाहर निकालते हैं; बल्कि शरीर द्रवों में आयनी और अम्ल क्षार संतुलन भी बनाए रखते हैं।

मानव के उत्सर्जी तंत्र में एक जोड़ी वृक्क, एक जोड़ी मूत्रवाहिनी, एक मूत्राशय और मूत्र मार्ग सम्मिलित हैं। प्रत्येक वृक्क में एक मिलियन नलिकाकार संरचनाएं वृक्काणु होते हैं। वृक्काणु वृक्क की क्रियात्मक इकाई है और उसके दो भाग होते हैं – गुच्छ और वृक्क नलिका। गुच्छ अभिवाही धमनिकायों से बना केशिकाओं का गुच्छ है जो कि वृक्क धमनी की सूक्ष्म शाखाएं होती है। वृक्क नलिका का प्रारंभ दोहरी भित्ति युक्त बोमन संपुट से होता है जो आगे समीपस्थ संवलित नलिका (पीसीटी) हेनले-लूप और दूरस्थ संचलित (डीसीटी) नलिका में विभेदित होती है। कई वृक्काणु की दूरस्थ संवलित नलिकाएं एकत्रित होकर संग्रह नलिका बनाती

हैं जो अंत में मध्यांश पिरामिड में से होकर वृक्कीय श्रोणि में खुलती हैं। बोमन-संपुट एवं गुच्छ मिलकर मेलपीगी काय या वृक्क कणिका (कापर्सल) बनाते हैं।

मूत्र निर्माण में 3 मुख्य प्रक्रियाएं होती है - निस्यंदन, पुनरावशोषण और स्रवण।

निस्यंदन, गुच्छ द्वारा केशिकाओं के रक्त दाब का उपयोग कर संपादित की जाने वाली अचयनात्मक प्रक्रिया है। गुच्छ द्वारा बोमेन-संपुट में प्रति मिनट 125 मिली. निस्यंद बनाने के लिए प्रति मिनट 1200 मिली. रक्त का निस्यंदन होता है (जीएफआर)। वृक्काणु के विशेष भाग जेजीए की जीएफआर के नियमन में महत्वपूर्ण भूमिका है। निस्यंद के 99 प्रतिशत भाग का वृक्काणु के विभिन्न भागों द्वारा पुनरावशोषण किया जाता है। समीपस्थ संवलित नलिका पीसीटी पुनरावशोषण और चयनात्मक स्रवण का मुख्य स्थान है। वृक्क मध्यांश अंतराकाशी में हेनले-लूप परासरण प्रवणता (300 mOsm/L से 1200 mOsm/लीटर) को नियमित करने में सहायता करता है। दूरस्थ संवलित नलिका (डीसीटी) और संग्रह नलिका जल और विद्युत अपघट्यों का पुनरावशोषण करती हैं, जो परासरण नियमन में सहायक है। शरीर-तरल के आयनी साम्य और उसके pH को बनाए रखने के लिए नलिकाओं द्वारा H^+, K^+ और NH_3 निस्यंद स्रवित होते हैं। अमोनिया का नलिकाओं द्वारा स्राव भी होता है।

प्रतिधारा क्रियाविधि हेनले-लूप की दो भुजाओं और वासा-रेक्टा के बीच कार्य करती है। निस्यंद जैसे-जैसे अवरोही भुजा में नीचे उतरता है, वैसे-वैसे सांद्र होता जाता है, लेकिन आरोही भुजा में यह पुनः तनु हो जाता है। इस व्यवस्था के द्वारा वैद्युत अपघट्य और कुछ यूरिया, अंतराकाशी स्थल में बचे रह जाते हैं। डी. सी.टी. और संग्रह नलिका निस्यंद को 4 गुना अधिक सांद्र कर देते हैं - अर्थात् 300 mOsm/लीटर से 1200 mOsm/लीटर तक यह जल संरक्षण की उत्तम क्रियाविधि है। मूत्राशय में मूत्र का संग्रह केंद्रीय तंत्रिका तंत्र द्वारा ऐच्छिक संकेत प्राप्त होने तक किया जाता है। संकेत प्राप्त होने पर मूत्र मार्ग द्वारा इसका निष्कासन मूत्रण कहलाता है। त्वचा, फेफड़े और यकृत भी उत्सर्जन में सहयोग करते हैं।

अभ्यास

1. गुच्छीय निस्यंद दर (GFR) को पारिभाषित कीजिए।
2. गुच्छीय निस्यंद दर (GFR) की स्वनियमन क्रियाविधि को समझाइए।
3. निम्नलिखित कथनों को सही अथवा गलत में इंगित कीजिए।
   (अ) मूत्रण प्रतिवर्ती क्रिया द्वारा होता है।
   (ब) एडीएच मूत्र को अल्पपरासरणी बनाते हुए जल के निष्कासन में सहायक होता है।
   (स) बोमेन-संपुट में रक्तप्लाज्मा से प्रोटीन रहित तरल निस्यंदित होता है।
   (द) हेनले-लूप मूत्र के सांद्रण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।
   (य) समीपस्थ संवलित नलिका (PCT) में ग्लूकोस सक्रिय रूप से पुनः अवशोषित होता है।
4. प्रतिधारा क्रियाविधि का संक्षेप में वर्णन कीजिए।
5. उत्सर्जन में यकृत, फुप्फुस तथा त्वचा का महत्व बताइए।
6. मूत्रण की व्याख्या कीजिए।

7. स्तंभ I के बिंदुओं का खंड स्तंभ II से मिलान करें।

स्तंभ I	**स्तंभ II**
(i) अमोनियोत्सर्जन	(अ) पक्षी
(ii) बोमेन-संपुट	(ब) जल का पुन: अवशोषण
(iii) मूत्रण	(स) अस्थिल मछलियाँ
(iv) यूरिकाअम्ल उत्सर्जन	(द) मूत्राशय
(v) एडीएच	(य) वृक्क नलिका

8. परासरण नियमन का अर्थ बताइए।

9. स्थलीय प्राणी सामान्यतया यूरिया उत्सर्जी या यूरिक अम्ल उत्सर्जी होते हैं तथा अमोनिया उत्सर्जी नहीं होते हैं, क्यों?

10. वृक्क के कार्य में जक्सटागुच्छउपकरण (JGA) का क्या महत्व है?

11. नाम का उल्लेख कीजिए:
    (अ) एक कशेरुकी जिसमें ज्वाला कोशिकाओं द्वारा उत्सर्जन होता है।
    (ब) मनुष्य के वृक्क के वल्कुट के भाग जो मध्यांश के पिरामिड के बीच धँसे रहते हैं।
    (स) हेनले-लूप के समानांतर उपस्थित केशिका का लूप।

12. रिक्त स्थानों की पूर्ति करें :-
    (अ) हेनले-लूप की आरोही भुजा जल के लिए _____ जबकि अवरोही भुजा इसके लिए _____ है।
    (ब) वृक्क नलिका के दूरस्थ भाग द्वारा जल का पुनरावशोषण _____ हार्मोन द्वारा होता है।
    (स) अपोहन द्रव में _____ पदार्थ के अलावा रक्त प्लाज्मा के अन्य सभी पदार्थ उपस्थित होते हैं।
    (द) एक स्वस्थ व्यस्क मनुष्य द्वारा औसतन _____ ग्राम यूरिया का प्रतिदिन उत्सर्जन होता है।

अध्याय 20

गमन एवं संचलन

20.1 *गति के प्रकार*
20.2 *पेशी*
20.3 *कंकाल तंत्र*
20.4 *संधियाँ या जोड़*
20.5 *पेशीय और कंकाल तंत्र के विकार*

संचलन जीवों की एक महत्वपूर्ण विशेषता है। जंतुओं एवं पादपों में अनेकों तरह के संचलन होते हैं। अमीबा सदृश एक कोशिक जीव में जीवद्रव्य का प्रवाही संचलन इसका एक साधारण रूप है। कई जीव पक्ष्माभ, कशाभ और स्पर्शक द्वारा संचलन दर्शाते हैं। मनुष्य अपने पाद, जबड़े, पलक, जिह्वा आदि को गतिशील कर सकता है। कुछ संचलनों में स्थान या अवस्थिति परिवर्तन होता है। ऐसे ऐच्छिक संचलनों को **गमन** कहते हैं। टहलना, दौड़ना, चढ़ना, उड़ना, तैरना आदि सभी गमन या संचलन के ही कुछ रूप हैं। चलन संरचनाओं का अन्य प्रकार की गति में संलग्न संरचनाओं से भिन्न होना आवश्यक नहीं है। उदाहरण के लिए, *पैरामिशियम* में पक्ष्माभ भोजन की कोशिका-ग्रसनी में प्रवाह और चलन दोनों कार्य होते हैं। *हाइड्रा* अपने स्पर्शक शिकार पकड़ने और चलन दोनों के लिए प्रयोग कर सकता है। हम अपने पाद शरीर की मुद्रा बदलने के लिए प्रयोग में लाते हैं और चलन के लिए भी। उपर्युक्त प्रेक्षणों से संकेत मिलता है कि गति और चलन का पृथक् रूप से अध्ययन नहीं किया जा सकता है। दोनों के संबंध को इस उक्ति में समाहित किया जा सकता है कि सभी चलन गति होते हैं; लेकिन सभी गति चलन नहीं हैं। जंतुओं के चलन के तरीके परिस्थिति की माँग और आवास के अनुरूप बदलते हैं। फिर भी चलन की क्रिया प्रायः भोजन, आश्रय, साथी, अनुकूल प्रजनन स्थल, अनुकूल प्राकृतिक स्थिति की तलाश या शत्रुओं/भक्षियों से पलायन के लिए की जाती है।

20.1 गति के प्रकार

मानव शरीर की कोशिकाएं मुख्यतः तीन प्रकार की गति दर्शाती हैं, यथा-अमीबीय, पक्ष्माभी और पेशीय।[10]

हमारे शरीर में कुछ विशिष्ट कोशिकाएं, जैसे - महाभक्षकाणु (macrophages) और श्वेताणु (leucocytes) रुधिर में अमीबीय गति प्रदर्शित करती हैं। यह क्रिया जीवद्रव्य की प्रवाही गति द्वारा कूकूट पाद बनाकर की जाती है (अमीबा सदृश)। कोशिका कंकाल तंत्र जैसे - सूक्ष्मतंतु भी अमीबीय गति में सहयोगी होते हैं।

हमारे अधिकांश नलिकाकार अंगों में, जो पक्ष्माभ उपभित्ति से आस्तारित होते हैं, पक्ष्माभ गति होती है। श्वास नली में पक्ष्माभों की समन्वित गति से वायुमंडलीय वायु के साथ प्रवेश करने वाले धूल कणों एवं बाह्य पदार्थों को हटाने में मदद मिलती है। मादा प्रजनन मार्ग में डिंब का परिवहन पक्ष्माभ गति की सहायता से ही होता है।

हमारे पादों, जबड़ों, जिह्वा, आदि की गति के लिए पेशीय गति आवश्यक है। पेशियों के संकुचन के गुण का प्रभावी उपयोग मनुष्य और अधिकांश बहुकोशिकीय जीवों के चलन और अन्य प्रकार की गतियों में होता है। चलन के लिए पेशीय, कंकाल और तंत्रिका तंत्र की पूर्ण समन्वित क्रिया की आवश्यकता होती है। इस अध्याय में आप पेशियों के प्रकार, उनकी संरचना, उनके संकुचन की क्रियाविधि और कंकाल तंत्र के महत्वपूर्ण पहलू के बारे में जानेंगे।

20.2 पेशी

पेशी एक विशेष प्रकार का ऊतक है जिसकी उत्पत्ति अध्यजनस्तर से होती है। एक वयस्क मनुष्य के शरीर के भार का 40-50 प्रतिशत हिस्सा पेशियों का होता है। इनके कई विशेष गुण होते हैं, जैसे- उत्तेजनशीलता, संकुचनशीलता, प्रसार्य एंव प्रत्यास्थता। पेशियों को भिन्न-भिन्न आधारों पर वर्गीकृत किया गया है, जैसे-स्थापन, रंग-रूप और उनकी क्रिया की नियमन पद्धति। स्थापन के आधार पर, तीन प्रकार की पेशियाँ पाई जाती हैं - (i) कंकाल (ii) अंतरंग और (iii) हृद।

कंकाल पेशियाँ शारीरिक कंकाल अवयवों के निकट संपर्क में होती हैं। सूक्ष्मदर्शी द्वारा देखने पर इनमें धारियाँ दिखती हैं, अतः इन्हें रेखित पेशी कहते हैं। चूँकि इनकी क्रियाओं का तंत्रिका तंत्र द्वारा ऐच्छिक नियंत्रण होता है, अतः इन्हें **ऐच्छिक पेशी** भी कहते हैं। ये मुख्य रूप से चलन क्रिया और शारीरिक मुद्रा बदलने में सहायक होती हैं।

अंतरंग पेशियाँ शरीर के खोखले अंतरंग अगों; जैसे- आहार नाल, जनन मार्ग आदि की भीतरी भित्ति में स्थित होती हैं। ये अरेखित और चिकनी दिखती हैं। अतः इन्हें **चिकनी पेशियाँ (अरेखित पेशी)** कहते हैं। इनकी क्रिया तंत्रिका तंत्र के ऐच्छिक नियंत्रण में नहीं होती, इसलिए ये अनैच्छिक पेशियाँ कही जाती हैं। ये पाचन मार्ग द्वारा भोजन और जनन मार्ग द्वारा युग्मक (gamete) के अभिगमन (परिवहन) में सहायता करती हैं।

जैसा कि नाम से विदित है, **हृद पेशियाँ** हृदय की पेशियाँ हैं। कई हृद पेशी कोशिकाएं हृद पेशी के गठन के लिए शाश्वत रचना में एकत्रित होती हैं। रंग रूप के आधार पर, हृद पेशियाँ रेखित होती हैं। ये अनैच्छिक स्वभाव की होती हैं; क्योंकि तंत्रिका तंत्र इनकी क्रियाओं को सीधे नियंत्रित नहीं करता।

कंकाल पेशी की संरचना और संकुचन क्रियाविधि को समझने के लिए हम इसका विस्तार से परीक्षण करेंगें। हमारे शरीर में, प्रत्येक संगठित कंकाल पेशी कई **पेशी बंडलों**

या **पूलिकाओं** (fascicles) की बनी होती है, जो संयुक्त रूप से कोलैजनी संयोजी ऊतक स्तर से घिरे रहती हैं जिसे **संपट्ट** (fascia) कहते हैं। प्रत्येक पेशी बंडल में कई पेशी रेशे होते हैं (चित्र 20.1)। प्रत्येक पेशी रेशा प्लाज्मा झिल्ली से आस्तारित होता है

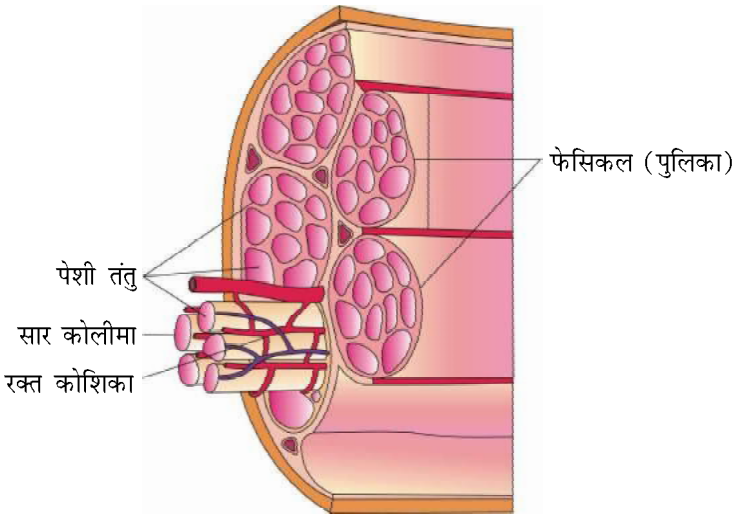

चित्र 20.1 पेशी समूह तथा पेशी तंतु को दर्शाते हुए पेशी का अनुप्रस्थ काट

जिसे सार्कोलेमा कहते हैं। पेशी रेशा एक संकोशिका है क्योंकि पेशीद्रव्य (sarcoplasm) में कई केंद्रक होते हैं। अंत:द्रव्य जालिका अर्थात् पेशी रेशों के पेशीद्रव्य जालिका (सारकोप्लाज्मिक रेटीक्यूलम) कैल्सियम आयनों का भंडार गृह है; पेशी रेशा की एक विशेषता पेशीद्रव्य में समांतर रूप से व्यस्थित अनेक तंतुओं की उपस्थिति है जिसे पेशीतंतु (मायोफिलामेंट) **पेशीतंतुक** (मायोफाईब्रिल) कहते हैं। प्रत्येक पेशी तंतुक में क्रमवार गहरे एवं हल्के पट्ट (बैंड) होते हैं। पेशी रेशक के विस्तृत अध्ययन ने यह स्थापित कर दिया है कि इनका रेखित रूप दो प्रमुख प्रोटीन - **एक्टिन** और **मायोसिन** के विशेष प्रकार के वितरण के कारण होता है। हल्के बैंडों में एक्टिन होता है जिसे I - बैंड या समदैशिक बैंड कहते हैं जबकि गहरे बैंडों को 'A' बैंड या विषम दैशिक बैंड कहते हैं जिसमें मायोसिन होता है। दोनों प्रोटीन छड़नुमा संरचनाओं में परस्पर समानांतर पेशी रेशक के अनुदैर्ध्य अक्ष के भी समानांतर व्यवस्थित होते हैं एक्टिन तंतु मायोसिन तंतुओं की तुलना में पतले होते हैं, अत: इन्हें क्रमश: पतले एवं मोटे तंतु कहते हैं। प्रत्येक I-बैंड के मध्य में इसे द्विविभाजित करने वाली एक प्रत्यास्थ रेखा होती है, जिसे 'Z'-रेखा कहते हैं। पतले तंतु 'Z'-रेखा से दृढ़ता से जुड़े होते हैं। 'A' बैंड के मोटे तंतु, 'A' बैंड के मध्य में एक पतली रेशेदार झिल्ली, जिसे 'M'-रेखा कहते हैं, द्वारा जुड़े होते हैं। **पेशी रेशों** की पूरी लंबाई में 'A' और 'I' बैंड एकांतर क्रम में व्यवस्थित होते हैं। दो अनक्रमित 'Z'-रेखाओं के बीच स्थित पेशी रेशक का भाग एक संकुचन कार्य इकाई बनाता है जिसे सार्कोमियर कहते हैं (चित्र 20.2)। विश्राम की अवस्था में, पतले तंतुओं के सिरे दोनों ओर के मोटे तंतुओं के बीच के भाग को छोड़कर स्वतंत्र सिरों पर अतिच्छादित होते हैं।

(पतले तंतुओं के सिरे मोटे तंतुओं के सिरों के बीच में पाए जाते हैं) मोटे तंतुओं का केंद्रीय भाग जो पतले तंतुओं से अतिच्छादित नहीं होता, 'H'-क्षेत्र कहलाता है।

20.2.1 संकुचनशील प्रोटीन की संरचना

प्रत्येक एक्टिन (पतले) तंतु एक दूसरे से सर्पिल रूप में कुंडलित दो 'F' (तंतुमय) एक्टिनों का बना होता है। प्रत्येक 'F' एक्टिन 'G' (गोलाकार) एक्टिन इकाइयों का बहुलक है। एक दूसरे प्रोटीन, ट्रोपोमायोसिन के दो तंतु 'F' एक्टिन के निकट पूरी लंबाई में जाते हैं। एक जटिल ट्रोपोनिन प्रोटीन अणु ट्रोपोमायोसिन पर नियत अंतरालों पर पाई जाती है। विश्राम की अवस्था में ट्रोपोनिन की एक उप-इकाई एक्टिन तंतुओं के मायोसिन के बंध बनाने वाले सक्रिय स्थानों को ढक कर रखती है (चित्र 20.3 अ)।

प्रत्येक मायोसिन (मोटे) तंतु भी एक बहुलक प्रोटीन है। कई एकलकी प्रोटीन जिसे मेरोमायोसिन कहते हैं (चित्र 20.3 ब) एक मोटा तंतु बनाती हैं। प्रत्येक मेरोमायोसिन के दो महत्वपूर्ण भाग होते हैं- एक छोटी भुजा सहित गोलाकार सिर तथा एक पूँछ। सिर को

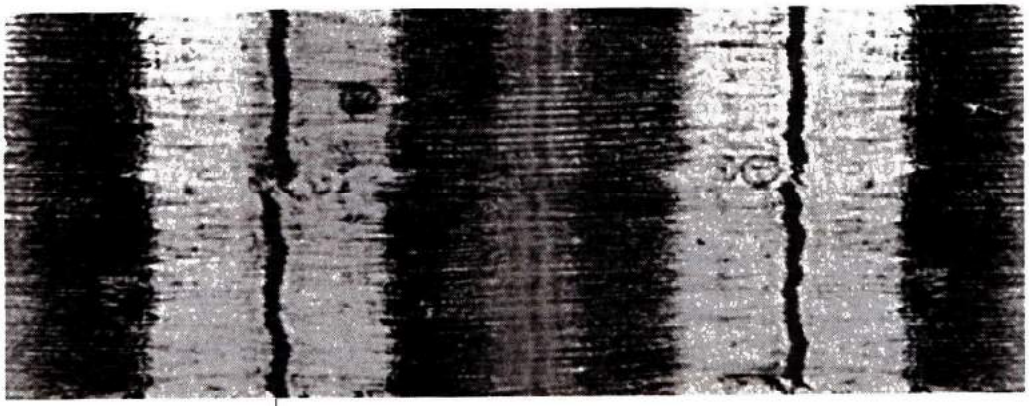

(अ)

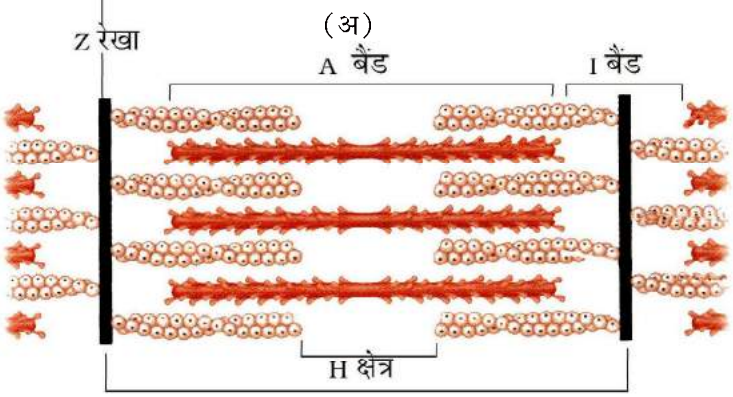

(ब)

चित्र 20.2 (अ) सार्कोमियर को दर्शाते हुए एक पेशी तंतु की संरचना (ब) एक सार्कोमियर का आरेख

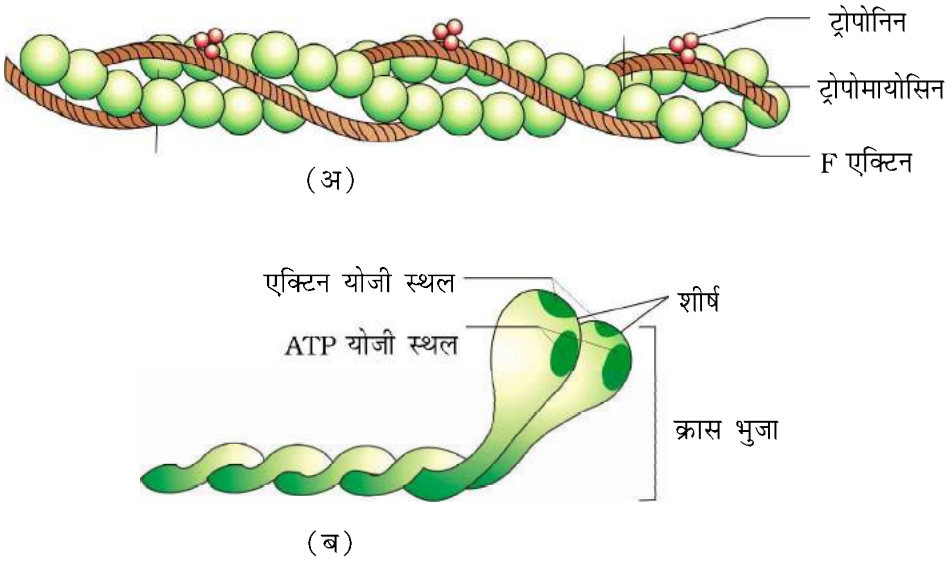

चित्र 20.3 (अ) एक एक्टिन (पतला) तंतु (ब) एकल मायोसिन (मिरोमायोसिन)

भारी मेरोमायोसिन (HMM) और पूँछ को हल्का मेरोमायोसिन (LMM) कहते हैं। मेरोमायोसिन अवयव अर्थात् सिर एवं छोटी भुजा पर नियत दूरी तथा आपस में एक नियत दूरी नियत कोण पर A तंतु पर बाहर की तरफ उभरे होते हैं। जिसे क्रास भुजा (कॉस-आर्म) कहते हैं। गोलाकार सिर एक सक्रिय एटिपीऐज एंजाइम है जिसमें एटीपी के बंधन स्थान तथा एक्टिन के लिए सक्रिय स्थान होते हैं।

20.2.2 पेशी संकुचन की क्रियाविधि

पेशी संकुचन की क्रियाविधि को सर्पीतंतु सिद्धांत द्वारा अच्छी तरह समझाया जा सकता है जिसके अनुसार पेशीय रेशों का संकुचन पतले तंतुओं के मोटे तंतुओं के ऊपर सरकने से होता है।

केंद्रीय तंत्रिका तंत्र की प्रेरक तंत्रिका द्वारा एक संकेत प्रेषण से पेशी संकुचन का आरंभ होता है। एक प्रेरक न्यूरोन तथा इससे पेशीय रेशे एक प्रेरक इकाई का गठन करते हैं। प्रेरक तंत्रिएक और पेशीय रेशा के सार्कोलेमा की संधि को तंत्रिका-पेशीय संगम या प्रेरक अंत्य पट्टिका कहते हैं। इस संगम पर एक तंत्रिक संकेत पहुँचने से एक तंत्रिका संचारी (एसिटिल कोलिन) मुक्त होता है जो सार्कोलेमा में एक क्रिया विभव (action potential) उत्पन्न करता है। यह समस्त पेशीय रेशे पर फैल जाता है जिससे सार्कोप्लाज्म में कैल्सियम आयन मुक्त होते हैं। कैल्सियम आयन स्तर में वृद्धि से एक्टिन तंतु पर ट्रोपोनिन की उप इकाई से कैल्सियम बंध बनाकर एक्टिन के ढके हुए सक्रिय स्थानों को खोल देता है। ATP के जल अपघटन से प्राप्त ऊर्जा का उपयोग कर मायोसिन शीर्ष एक्टिन के खुले सक्रिय स्थानों से क्रास सेतु बनाने के लिए बँध जाते हैं (चित्र 20.4)। इस बंध से जुड़े हुए एक्टिन तंतुओं 'A' बैंड के केंद्र की तरफ खिंचते हैं इन एक्टिनों से जुड़ी हुई 'A' रेखा भी अंदर की तरफ खिंच जाती है जिससे सार्कोमियर

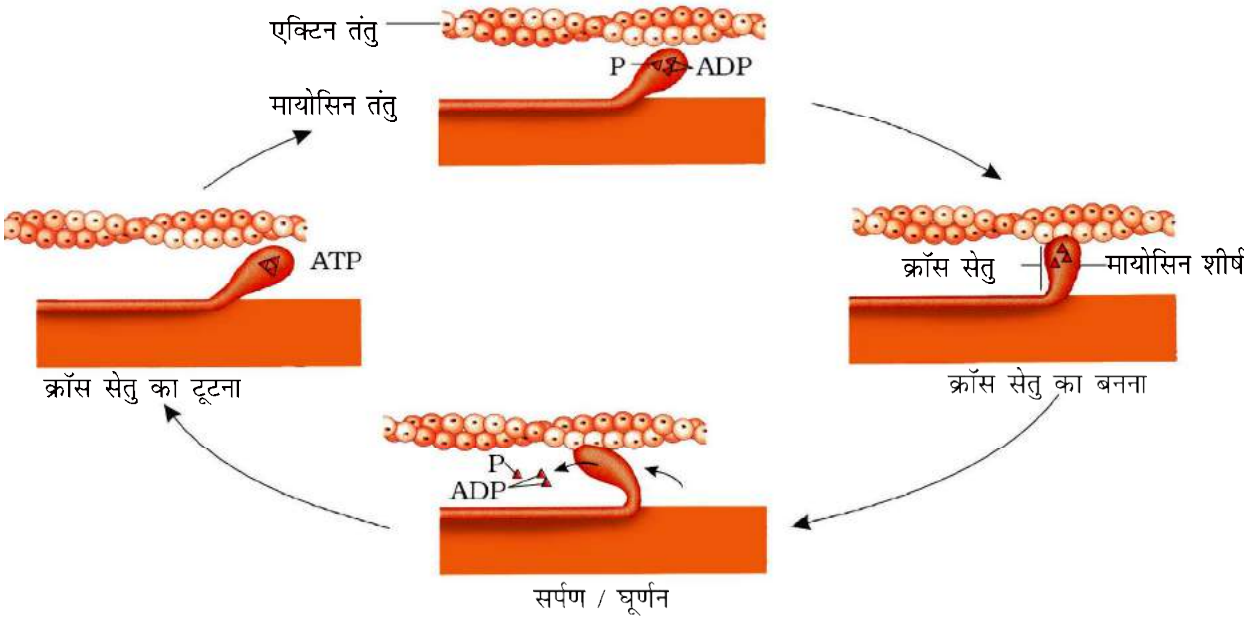

चित्र 20.4 क्रॉस सेतु के बनने की अवस्थाएं/शीर्ष का घूर्णन तथा क्रॉस सेतु का टूटना

छोटा हो जाता है अर्थात् संकुचित हो जाता है। ऊपर के चरणों से स्पष्ट है कि पेशी के छोटा होते समय अर्थात् संकुचन के समय 'I'-बैंडों की लंबाई कम हो जाती है जबकि 'A'-बैंडों की लंबाई ज्यों कि त्यों रहती है (चित्र 20.5)। ADP और P_2 मुक्तकर, मायोसिन विश्राम अवस्था में वापस चला जाता है। एक नए ATP के बंधने से क्रास-सेतु टूटते हैं (चित्र 20.4)। मायोसिन शीर्ष ATP को अपघटित कर पेशी के ओर संकुचन के लिए क्रिया दोहराते हैं किंतु तंत्रिका संवेगी के समाप्त हो जाने पर सार्कोप्लाज्मिक रेटीक्यूलम द्वारा Ca^{+1} के अवशोषण से एक्टिन स्थल पुनः ढक जाते हैं। इसके फलस्वरूप 'Z'-रेखाएं अपने मूल स्थान पर वापस हो जाती हैं; अर्थात् शिथिलन हो जाता है। विभिन्न पेशियों में रेशों की प्रतिक्रिया अवधि में अंतर हो सकता है। पेशियों के बार-बार उत्तेजित होने पर उनमें ग्लाइकोजन के अवायवी विखंडन से लैक्टिक अम्ल का जमाव होने लगता है जिससे थकान (श्रांति) होती है। पेशी में ऑक्सीजन भंडारित करने वाला लाल रंग का एक मायोग्लोबिन होता है। कुछ पेशियों में मायोग्लोबिन की मात्रा ज्यादा होती है जिससे वे लाल रंग के दिखते हैं। ऐसी पेशियों को लाल पेशियाँ कहते हैं। ऐसी पेशियों में माइट्रोकोंड्रिया अधिक होती हैं जो ATP के निर्माण हेतु उनमें भंडारित ऑक्सीजन की बड़ी मात्रा का उपयोग कर सकती हैं। इसलिए, इन पेशियों को वायुजीवी पेशियाँ भी कह सकते हैं। दूसरी तरफ, कुछ पेशियों में मायोग्लोबिन की बहुत कम मात्रा पाई जाती है जिससे वे हल्के रंग की अथवा श्वेत प्रतीत होती हैं। ये श्वेत पेशियाँ हैं। इनमें माइटोकोंड्रिया तो अल्पसंख्यक होती है, लेकिन पेशीद्रव्य जालिका अत्यधिक मात्रा में होती हैं। ये अवायवीय विधि द्वारा ऊर्जा प्राप्त करती हैं।

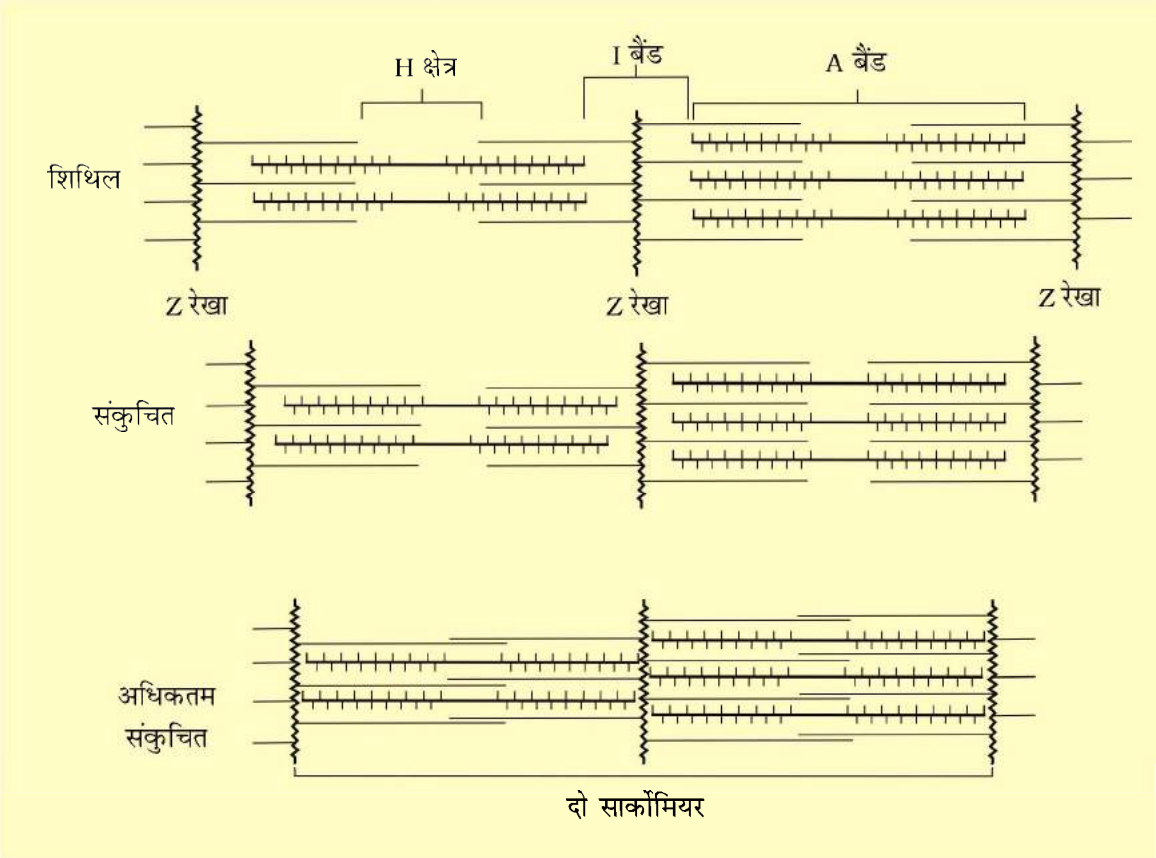

चित्र 20.5 पेशी संकुचन का सर्पी तंतु सिद्धांत (पतले तंतु की गति एवं I बैंड तथा H क्षेत्र की तुलनात्मक आकार)

20.3 कंकाल तंत्र

कंकाल तंत्र में अस्थियों का एक ढांचा और उपास्थियां होती हैं। शरीर की गति में इस तंत्र की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। कल्पना कीजिए; जब बिना जबड़ों के भोजन चर्वण करना पड़े और बिना पाद अस्थियों के टहलना हो। अस्थि एवं उपास्थि विशेष प्रकार के संयोजी ऊतक हैं। मैट्रिक्स में लवणों की उपस्थिति से अस्थियाँ कठोर होती हैं जबकि कोंड्रोइटिन (chondroitin) लवण उपास्थियों के मैट्रिक्स को आनन्य (pliable) बनाते हैं। मनुष्य में, यह तंत्र 206 अस्थियों और कुछ उपास्थियों का बना होता है। इसे दो मुख्य समूहों में बाँटा गया है- अक्षीय कंकाल एवं उपांगीय कंकाल।

अक्षीय कंकाल में 80 अस्थियाँ होती हैं जो शरीर की मुख्य अक्ष पर वितरित होती हैं। करोटि, मेरुदंड, उरोस्थि (स्टर्नम) और पसलियाँ अक्षीय कंकाल का गठन करती हैं। **करोटि** (चित्र 20.6) अस्थियों के दो समुच्चय- कपालीय (cranial) और आननी (facial) से बना है जिनका योग 22 है। कपालीय अस्थियों की संख्या 8 होती है। ये मस्तिष्क के लिए कठोर रक्षक बाह्य आवरण- कपाल को बनाती हैं। आननी भाग में 14 कंकाली अवयव (skeletal elements) होते हैं जो करोटि के सामने का भाग बनाते हैं।

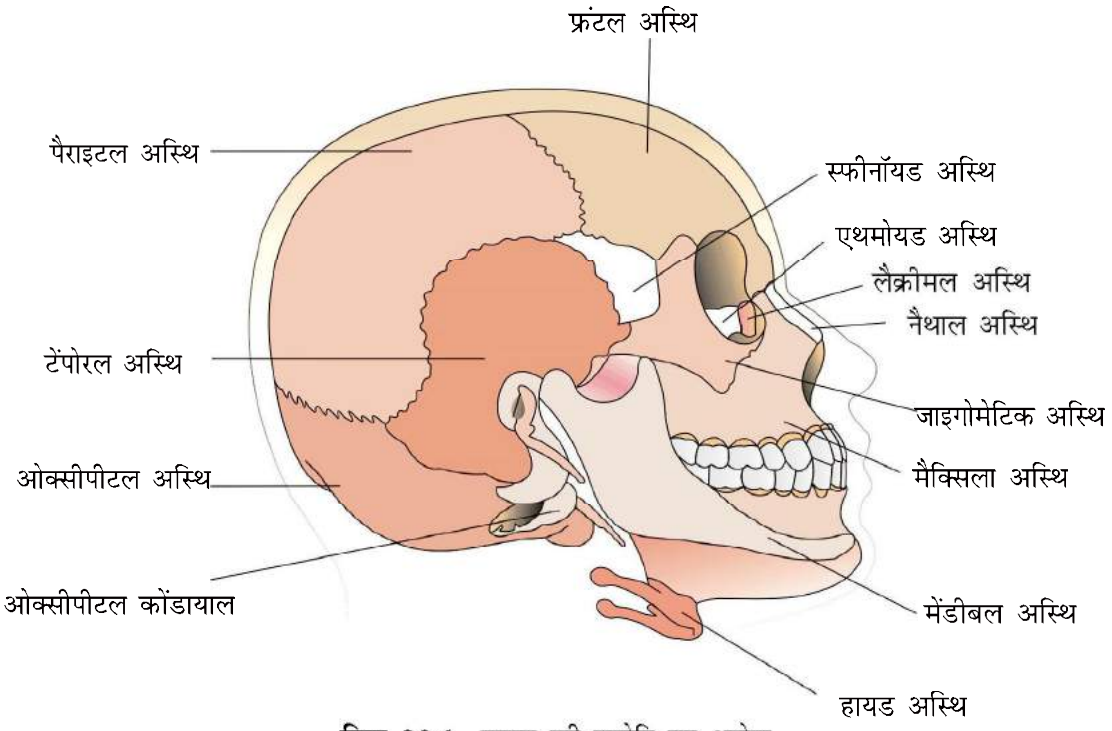

चित्र 20.6 मनुष्य की करोटि का आरेख

एक U - आकार की एकल अस्थि हाइऑइड (hyoid) मुख गुहा के नीचे स्थित होती है, यह भी कपाल में ही सन्निहित है। प्रत्येक मध्यकर्ण में तीन छोटी अस्थियाँ होती हैं-मैलियस, इनकस एवं स्टेपीज। इन्हें सामूहिक रूप से **कर्ण अस्थिकाएं** कहते हैं। कपाल भाग कशेरूक दंड के अग्र भाग के साथ दो अनुकपाल अस्थिकंदों (occipital condyles) की सहायता से संधियोजन करता है (द्विकंदीय करोटिया डाइकोंडाइलिक स्कल)।

हमारा **कशेरुक दंड** (चित्र 20.7) क्रम में व्यस्थित पृष्ठ भाग में स्थित 26 इकाइयों का बना है जिन्हें कशेरुक कहते हैं। यह कपाल के आधार से निकलता और धड़ भाग का मुख्य ढांचा तैयार करता है। प्रत्येक कशेरुक के बीच का भाग खोखला (तंत्रकीय नाल) होता है जिससे होकर मेरुरज्जु (spinal cord) गुजरती है। प्रथम कशेरुक एटलस है और यह अनुकपाल अस्थिकंदों के साथ संधियोजन करता है। कशेरुक दंड, कपाल की ओर से प्रारंभ करने पर, ग्रीवा (7), वक्षीय (12), कटि (5), त्रिक सेक्रमी (1-संयोजित) और अनुत्रिक (1-संयोजित) कशेरुकों में विभेदित होता है। ग्रीवा कशेरुकों की संख्या मनुष्य सहित लगभग सभी स्तनधारियों में

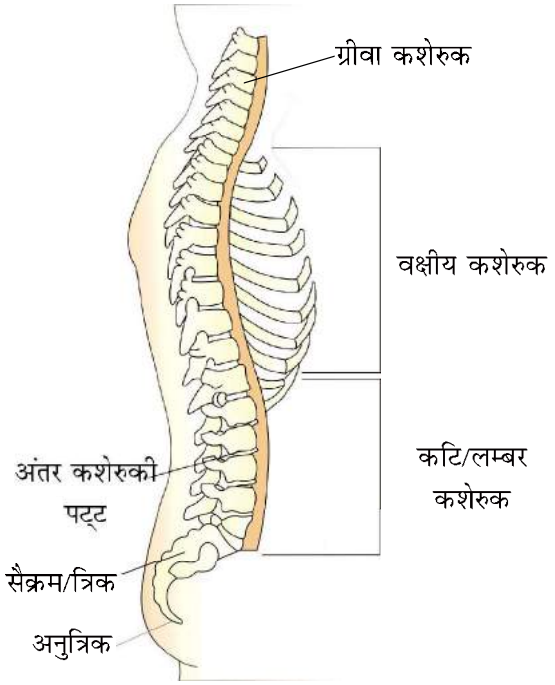

चित्र 20.7 मेरुदंड (दायाँ पार्श्व दृश्य)

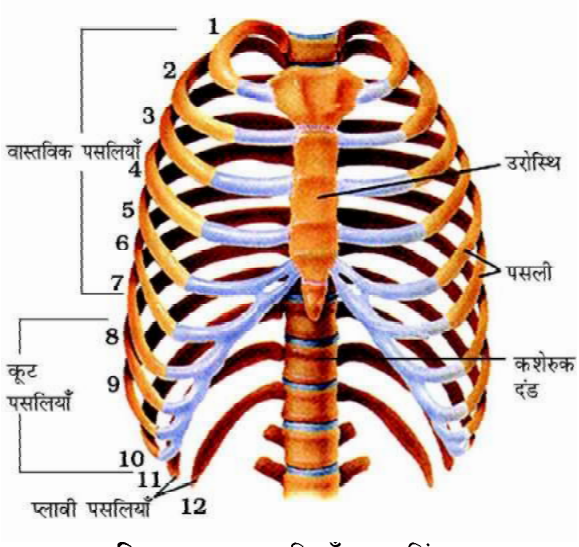

चित्र 20.8 पसलियाँ तथा पिंजर

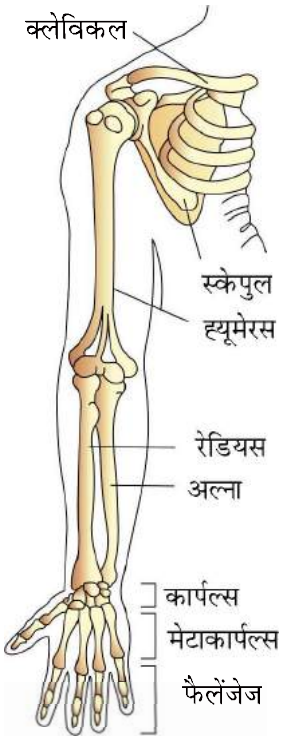

चित्र 20.9 दाँयी अंस मेखला तथा अग्रपाद अस्थियां (सामने से अभिदर्शित)

7 (सात) होती है। कशेरुक दंड मेरुरज्जु (spinal cord) की रक्षा करता है, सिर का आधार बनाते हैं और पसलियों तथा पीठ की पेशियों के संधि स्थल का निर्माण करते हैं। **उरोस्थि** (sternum) वक्ष की मध्य अधर रेखा पर स्थित एक चपटी अस्थि है।

पसलियों (Ribs) की 12 जोड़ियाँ होती हैं। प्रत्येक पसली एक पतली चपटी अस्थि है जो पृष्ठ भाग में कशेरुक दंड और अधर भाग में उरोस्थि के साथ जुड़ी होती हैं। इसके पृष्ठ सिरे पर दो संधियोजन सतहें होती हैं जिसके कारण इसे द्विशिरस्थ (bicephalic) भी कहते हैं। प्रथम सात जोड़ी पसलियों को वास्तविक पसलियाँ कहते हैं। पृष्ठ में ये वक्षीय कशेरुकों और अधरीय भाग में उरोस्थि से काचाभ उपास्थि (hyaline cartilage) की सहायता से जुड़ी होती हैं। 8वीं, 9वीं और 10वीं जोड़ी-पसलियाँ उरोस्थि के साथ सीधे संधियोजित नहीं होतीं, बल्कि काचाभ उपास्थि के सहयोग से सातवीं पसली से जुड़ती हैं। इन्हें वर्टिब्रोकांड्रल (कूट) पसलियाँ कहते हैं। पसलियों की अंतिम दो जोड़ियाँ (11वीं और 12वीं) अधर में जुड़ी हुई नहीं होतीं, इसलिए उन्हें प्लावी पसलियाँ (floating ribs) कहते हैं। वक्षीय कशेरुक, पसलियाँ और उरोस्थि मिलकर पसली पंजर (rib cage) की संरचना करते हैं (चित्र 20.8)।

पादों की अस्थियाँ अपनी मेखला के साथ **उपांगीय कंकाल** बनाती हैं। प्रत्येक **पाद** में 30 अस्थियाँ पाई जाती हैं अग्रपाद (भुजा) की अस्थियाँ हैं- ह्यूमेरस, रेडियस और अल्ना, कार्पल्स (कलाई की अस्थियाँ - संख्या में 8), मेटा कार्पल्स (हथेली की अस्थियाँ- संख्या में 5) और फैलेंजेज (अंगुलियों की अस्थियाँ -संख्या में 14) (चित्र 20.9)। फीमर (उरु अस्थि - सबसे लम्बी अस्थि), टिबिया और फिबुला, टार्सल (टखनों की अस्थियाँ - संख्या में 7), मेटाटार्सल (संख्या में 5) और अंगुलि अस्थियाँ फैलेंजेज (चित्र 20.10)। कप के आकार की एक अस्थि जिसे पटेल्ला (Patella) कहते हैं। घुटने को अधर की ओर से ढकती है (घुटना फलक)।

अंस और **श्रोणि मेखला** अस्थियाँ अक्षीय कंकाल तथा क्रमशः अग्र एवं पश्च पादों के बीच संधियोजन में सहायता करती हैं। प्रत्येक मेखला के दो अर्ध भाग होते हैं। अंस मेखला के प्रत्येक अर्ध भाग में एक क्लेविकल एवं एक स्कैपुला होती है (चित्र 20.9)। स्कैपुला वक्ष के पृष्ठ भाग

में दूसरे एवं सातवीं पसली के बीच स्थित एक बड़ी चपटी, त्रिभुजाकार अस्थि है। स्कैपुला के पश्च चपटे त्रिभुजाकार भाग में एक उभार (कंटक) एक विस्तृत चपटे प्रबंध के रूप में होता है जिसे **एक्रोमिन** कहते हैं। क्लैविकिल इसके साथ संधियोजन करती हैं। एक्रोमिन के नीचे एक अवनमन जिसे ग्लीनॉयड गुहा कहते हैं ह्युमूरस के शीर्ष के साथ कंधों की जोड़ बनाने के लिए संधियोजन करती है। प्रत्येक क्लैविकल एक लंबी पतली अस्थि है, जिसमें दो वक्र पाए जाते हैं। इस अस्थि को सामान्यतः जत्रुक (collar bone) कहते हैं।

श्रोणि मेखला (Pelvic girdle) में दो श्रोणि अस्थियाँ होती हैं (चित्र 20.10)। प्रत्येक श्रोणि अस्थि तीन अस्थियों के संलयन से बनी होती है- इलियम, इस्चियम और प्युबिस। इन अस्थियों के संयोजन स्थल पर एक गुहा एसिटैबुलम होती है जिससे उरु अस्थि संधियोजन करती है। अधर भाग में श्रोणि मेखला के दोनों भाग मिलकर प्युबिक संलयन (Pubic symphysis) बनाते हैं जिसमें रेशेदार उपास्थि होती है।

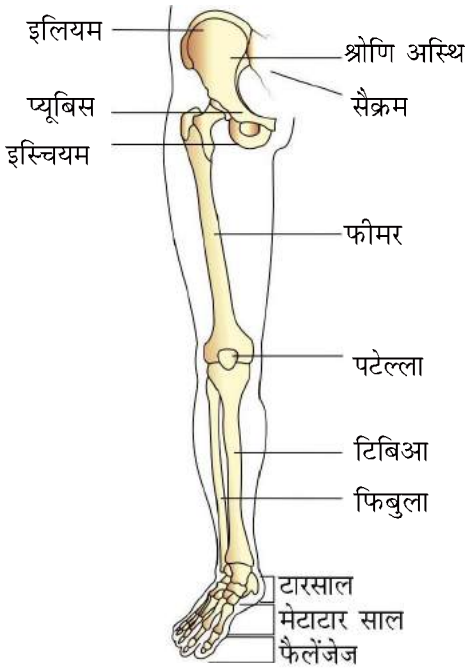

चित्र 20.10 दाईं श्रोणि अस्थि एवं पश्च पाद अस्थियाँ (सामने से अभिदर्शित)

20.4 संधियाँ या जोड़

संधियाँ या जोड़ हर प्रकार की गति के लिए आवश्यक है जिनमें शरीर की अस्थियाँ सहयोगी होती हैं चलन गति भी इसका अपवाद नहीं है। जोड़ अस्थियों अथवा एक अस्थि एवं एक उपास्थि के बीच का संधिस्थल है। जोड़ों द्वारा गति के लिए पेशी जनित बल का उपयोग किया जाता है। यहाँ जोड़ आलंब (fulcrum) का कार्य करते हैं। इन जोड़ों पर गति विभिन्न कारकों पर निर्भरता के कारण बदलती हैं। जोड़ों को मुख्यतः तीन संरचनात्मक रूपों में वर्गीकृत किया गया है, जैसे- रेशीय, उपास्थियुक्त और साइनोवियल (स्राव)।

रेशीय जोड़ किसी प्रकार की गति नहीं होने देते। इस तरह के जोड़ द्वारा कपाल की चपटी अस्थियाँ, जो घने रेशीय संयोजी ऊतक की सहायता से सीवन (sutures) के रूप में कपाल बनाने के लिए संयोजित होती हैं।

उपास्थि युक्त जोड़ों में, अस्थियाँ आपस में उपास्थियों द्वारा जुड़ी होती हैं। कशेरुक दंड में दो निकटवर्ती कशेरुकों के बीच इसी प्रकार के जोड़ हैं जो सीमित गति होने देते हैं।

साइनोवियल जोड़ों की विशेषता दो अस्थियों की संधियोजन सतहों के बीच तरल से भी साईनोवियल गुहा की उपस्थिति है। इस तरह की व्यवस्था में पर्याप्त गति संभव है। ये जोड़ चलन सहित कई तरह की गति में सहायता करते हैं। कंदुक खल्लिका संधि (ह्युमूरस और अंस मेखला के बीच), कब्जा संधि (घुटना संधि), धुराग्र संधि (पाइवट

संधी - एटलस और अक्ष के बीच), विसर्पी संधि (ग्लाइडिंग संधि कार्पल्स के बीच) और सैडल जोड़ (अंगूठे के कार्पल और मेटा कार्पल के बीच) इनके कुछ उदाहरण हैं।

20.5 पेशीय और कंकाल तंत्र के विकार

माइस्थेनिया ग्रेविस (Myasthenia gravis): एक स्वप्रतिरक्षा विकार जो तंत्रिका- पेशी संधि को प्रभावित करता है। इससे कमजोरी और कंकाली पेशियों का पक्षघात होता है।

पेशीय दुष्पोषण (Muscular dystrophy): विकारों के कारण कंकाल पेशी का अनुक्रमित अपह्रासन।

अपतानिका : शरीर में कैल्सियम आयनों की कमी से पेशी में तीव्र ऐंठन।

संधि शोथ (Arthritis): जोड़ों की शोथ।

अस्थि सुषिरता (Osteoporosis) : यह उम्र संबंधित विकार है जिसमें अस्थि के पदार्थों में कमी से अस्थि भंग की प्रबल संभावना हैं। एस्ट्रोजन स्तर में कमी इसका सामान्य कारक है।

गाउट (Gout): जोड़ों में यूरिक अम्ल कणों के जमा होने के कारण जोड़ों की शोथ।

सारांश

गति सजीवों की एक आवश्यक विशेषता है। जीवद्रव्य की प्रवाही गति, पक्ष्माभी गति, पख, पादों, पंखों, आदि की गति प्राणियों द्वारा दर्शित गतियों के कुछ रूप हैं। ऐच्छिक गति जिनसे प्राणियों में स्थान परिवर्तित होता है, चलन कहलाती है। प्राणी प्राय: भोजन, आश्रय, साथी, प्रजनन स्थल, अनुकूल प्राकृतिक स्थिति की तलाश या अपनी रक्षा के लिए चलते हैं।

मनुष्य शरीर की कोशिकाएं अमीबीय, पक्ष्माभी और पेशीय गति दर्शाती हैं। चलन और अन्य प्रकार की गतियों के लिए समन्वित पेशीय क्रियायों की आवश्यकता होती है। हमारे शरीर में तीन प्रकार की पेशियाँ होती हैं। कंकाल पेशियाँ कंकाल अवयवों से जुड़ी होती हैं। वे रेखित एवं ऐच्छिक स्वभाव की होती हैं। अंतरंग अंगों की भीतरी भित्ति में स्थित अंतरंग पेशियाँ अरेखित एवं अनैच्छिक होती हैं। हृद पेशियाँ हृदय की पेशियाँ हैं। वे रेखित, शाखित और अनैच्छिक होती हैं। पेशियों में उत्तेजनशीलता, संकुचनशीलता, प्रसार्य और प्रत्यास्थता जैसे गुण होते हैं।

पेशीरेशा, पेशी की शारीरीय इकाई है। प्रत्येक पेशीरेशे में कई सामानांतर रूप से व्यवस्थित पेशीतंतुक (मायोफाईब्रिल) होते हैं। प्रत्येक पेशीतंतुक में कई क्रमवार व्यवस्थित क्रियात्मक इकाइयाँ, सार्कोमियर होते हैं। प्रत्येक सार्कोमियर के केंद्र में घने मायोसिन तंतुओं से बना A-बैंड, और Z-रेखा के दोनों तरफ पतले एक्टिन तंतुओं से बने दो अर्द्ध I-बैंड होते हैं। एक्टिन और मायोसिन संकुचनशील बहुलक प्रोटीन हैं। विश्राम की अवस्था में, एक्टिन तंतु पर मायोसिन के लिए सक्रिय स्थान ट्रोपोनिन (प्रोटीन) से ढके होते हैं। मायोसिन शीर्ष पर एटिपेज, एटीपी बंध स्थल और एक्टिन के लिए सक्रिय स्थान होते हैं। पेशीरेशे में प्रेरक तंत्रिका के संकेत से क्रिया विभव उत्पन्न होती है। इससे सार्कोप्लाजमिक जालिका कैल्सियम आयन (Ca^{++}) मुक्त करती है। कैल्सियम आयन एक्टिन को मायोसिन के शीर्ष से कॉस-सेतु निर्माण हेतु सक्रिय करते हैं। ये

क्रास-सेतु एक्टिन तंतुओं को खींचते हैं जिससे एक्टिन तंतु मायोसिन तंतुओं पर सरकने लगते हैं और संकुचन होता है। तत्पश्चात् कैल्सियम आयन सार्कोप्लाजमिक जालिका में वापस चले जाते हैं, जिससे एक्टिन निष्क्रिय हो जाते हैं। कॉस-सेतु टूट जाता है और पेशियाँ शिथिलित हो जाती हैं।

बार-बार उत्तेजित करने से पेशी में थकान (श्रांति) हो जाती है। लाल रंग के मायोग्लोबिन वर्णक की मात्रा की उपस्थिति के आधार पर पेशियाँ लाल और श्वेत पेशी रेशों में वर्गीकृत की गई हैं।

अस्थियाँ एवं उपास्थियाँ कंकाल तंत्र बनाते हैं। कंकाल तंत्र को अक्षीय और उपांगीय प्रकारों में विभाजित किया गया है। करोटि, कशेरुक दंड, पसलियाँ और उरोस्थि अक्षीय कंकाल बनाते हैं। पाद अस्थियाँ और मेखला उपांगीय कंकाल का गठन करते हैं। अस्थियों या अस्थि और उपास्थि के बीच तीन प्रकार के जोड़ (संधि) पाए जाते हैं- रेशीय, उपास्थियुक्त और साइनोवियल। साइनोवियल जोड़ों में पर्याप्त गति संभव है और इसलिए ये चलन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

अभ्यास

1. कंकाल पेशी के एक सार्कोमियर का चित्र बनाएं और विभिन्न भागों को चिंह्नित करें।
2. पेशी संकुचन के सर्पी तंतु सिद्धांत को पारिभाषित करें।
3. पेशी संकुचन के प्रमुख चरणों का वर्णन करें।
4. 'सही' या 'गलत' लिखें:
   (क) एक्टिन पतले तंतु में स्थित होता है।
   (ख) रेखित पेशीरेशे का H-क्षेत्र मोटे और पतले, दोनों तंतुओं को प्रदर्शित करता है।
   (ग) मानव कंकाल में 206 अस्थियाँ होती हैं।
   (घ) मनुष्य में 11 जोड़ी पसलियाँ होती हैं।
   (च) उरोस्थि शरीर के अधर भाग में स्थित होती है।
5. इनके बीच अंतर बताएं:
   (क) एक्टिन और मायोसिन
   (ख) लाल और श्वेत पेशियाँ
   (ग) अंस एवं श्रोणि मेखला
6. स्तंभ I का स्तंभ II से मिलान करे:

स्तंभ I	**स्तंभ II**
(i) चिकनी पेशी	(क) मायोग्लोबिन
(ii) ट्रोपोमायोसिन	(ख) पतले तंतु
(iii) लाल पेशी	(ग) सीवन (suture)
(iv) कपाल	(घ) अनैच्छिक

7. मानव शरीर की कोशिकाओं द्वारा प्रदिर्शित विभिन्न गतियाँ कौन सी हैं?
8. आप किस प्रकार से एक कंकाल पेशी और हृद पेशी में विभेद करेंगे?

9. निम्नलिखित जोड़ों के प्रकार बताएं:
   (क) एटलस/अक्ष (एक्सिस)
   (ख) अंगूठे के कार्पल/मेटाकार्पल
   (ग) फैलेंजेज की बीच
   (घ) फीमर/एसिटैबुलम
   (च) कपालीय अस्थियों के बीच
   (छ) श्रोणि मेखला की प्युबिक अस्थियों के बीच
10. रिक्त स्थानों में उचित शब्दों को भरें:
   (क) सभी स्तनधारियों में (कुछ को छोड़कर) _____ ग्रीवा कशेरुक होते हैं।
   (ख) प्रत्येक मानव पाद में फैलेंजेज की संख्या _____ है।
   (ग) मायोफाइब्रिल के पतले तंतुओं में 2 'F' एक्टिन और दो अन्य दूसरे प्रोटीन, जैसे _____ और _____ होते हैं।
   (घ) पेशी रेशा में कैल्सियम _____ में भंडारित रहता है।
   (च) _____ और _____ पसलियों की जोड़ियों को प्लानी पसलियाँ कहते हैं।
   (ज) मनुष्य का कपाल _____ अस्थियों से बना होता है।

अध्याय 21

तंत्रिकीय नियंत्रण एवं समन्वय

21.1 *तंत्रिकीय तंत्र*

21.2 *मानव का तंत्रिकीय तंत्र*

21.3 *तंत्रि कोशिका तंत्रिका तंत्र की संरचनात्मक एवं क्रियात्मक इकाई*

21.4 *केंद्रीय तंत्रिका तंत्र*

21.5 *प्रतिवर्ती क्रिया एक प्रतिवर्ती चाप*

21.6 *संवेदिक अभिग्रहण एवं प्रसंसाधन*

जैसा कि तुम जानते हो मानव शरीर में बहुत से अंग एवं अंग तंत्र पाए जाते हैं जो कि स्वतंत्र रूप से कार्य करने में असमर्थ होते हैं। जैव स्थिरता (समअवस्था) बनने हेतु इन अंगों के कार्यों में समन्वय अत्यधिक आवश्यक है। समन्वयता एक ऐसी क्रियाविधि है, जिसके द्वारा दो या अधिक अंगों में क्रियाशीलता बढ़ती है व एक-दूसरे अंगों के कार्यों में मदद मिलती है। उदाहरणार्थ, जब हम शारीरिक व्यायाम करते हैं तो पेशियों के संचालन हेतु ऊर्जा की आवश्यकता भी बढ़ जाती है। ऑक्सीजन की आवश्यकता में भी वृद्धि हो जाती है। ऑक्सीजन की अधिक आपूर्ति के लिए श्वसन दर, हृदय स्पंदन, दर एवं वृक्क वाहिनियों में रक्त प्रवाह की दर बढ़ना स्वाभाविक हो जाता है। जब शारीरिक व्यायाम बंद कर देते हैं तो तंत्रिकीय क्रियाएं, फुप्फुस, हृदय रुधिर वाहिनियों, वृक्क व अन्य अंगों के कार्यों में समन्वय स्थापित हो जाता है। हमारे शरीर में तंत्रिका तंत्र एवं अंत:स्रावी तंत्र सम्मिलित रूप से अन्य अंगों की क्रियाओं में समन्वय करते हैं तथा उन्हें एकीकृत करते हैं, जिससे सभी क्रियाएं एक साथ संचालित होती रहती हैं।

तंत्रिकीय तंत्र ऐसे व्यवस्थित जाल तंत्र गठित करता है, जो त्वरित समन्वय हेतु बिंदु दर बिंदु जुड़ा रहता है। अंत:स्रावी तंत्र हार्मोन द्वारा रासायनिक समन्वय बनाता है। इस अध्याय में आप मनुष्य के तंत्रिकीय तंत्र एवं तंत्रिकीय समन्वय की क्रियाविधि जैसे तंत्रिकीय आवेग का संचरण, आवेगों का सिनेप्स से संचरण तथा प्रतिवर्ती क्रियाओं की कार्यिकी का अध्ययन करेंगे।

21.1 तंत्रिकीय तंत्र

सभी प्राणियों का तंत्रिका तंत्र अति विशिष्ट प्रकार की कोशिकाओं से बनता है, जिन्हें **तंत्रिकोशिका** कहते हैं। ये विभिन्न उद्दीपनों को पहचान कर ग्रहण करती हैं तथा इनका संचरण करती हैं।

निम्न अकशेरुकी प्राणियों में तंत्रिकीय संगठन बहुत ही सरल प्रकार का होता है। उदाहरणार्थ *हाइड्रा* में यह तंत्रिकीय जाल के रूप में होता है। कीटों का तंत्रिका तंत्र अधिक व्यवस्थित होता है। यह मस्तिष्क अनेक गुच्छिकाओं एवं तंत्रिकीय ऊतकों का बना होता है। कशेरुकी प्राणियों में अधिक विकसित तंत्रिका तंत्र पाया जाता है।

21.2 मानव का तंत्रिकीय तंत्र

मानव का तंत्रिका तंत्र दो भागों में विभाजित होता है (क) **केंद्रीय तंत्रिका तंत्र** तथा (ख) **परिधीय तंत्रिका तंत्र**। केंद्रीय तंत्रिका तंत्र में **मस्तिष्क** तथा **मेरूरज्जु** सम्मिलित है, जहाँ सूचनाओं का संसाधन एवं नियंत्रण होता है। मस्तिष्क एवं परिधीय तंत्रिका तंत्र सभी तंत्रिकाओं से मिलकर बनता है, जो केंद्रीय तंत्रिका तंत्र (मस्तिष्क व मेरूरज्जू) से जुड़ी होती हैं। परिधीय तंत्रिका तंत्र में दो प्रकार की तंत्रिकाएं होती हैं (अ) **संवेदी या अभिवाही** एवं (ब) **चालक/प्रेरक या अपवाही**। संवेदी या अभिवाही तंत्रिकाएं उद्दीपनों को ऊतकों/अंगों से केंद्रीय तंत्रिका तंत्र तक तथा चालक/अभिवाही तंत्रिकाएं नियामक उद्दीपनों को केंद्रीय तंत्रिका तंत्र से संबंधित परिधीय ऊतक/अंगों तक पहुँचाती हैं।

परिधीय तंत्रिका तंत्र दो भागों में विभाजित होता है **कायिक तंत्रिका तंत्र** तथा **स्वायत्त तंत्रिका तंत्र**। कायिक तंत्रिका तंत्र उद्दीपनों को केंद्रीय तंत्रिका तंत्र से शरीर के अनैच्छिक अंगों व चिकनी पेशियों में पहुँचाता है। स्वायत्त तंत्रिका तंत्र पुनः दो भागों – (अ) **अनुकंपी तंत्रिका तंत्र** व (ब) **परानुकंपी तंत्रिका तंत्र** में वर्गीकृत किया गया है।[11]

21.3 तंत्रिकोशिका (न्यूरॉन) तंत्रिका तंत्र की संरचनात्मक एवं क्रियात्मक इकाई

न्यूरॉन एक सूक्ष्मदर्शीय संरचना है जो तीन भागों से मिलकर बनती है – **कोशिका काय**, **दुम्राक्ष्य** व **तंत्रिकाक्ष** (चित्र 21.1)। कोशिका काय में कोशिका द्रव्य व प्रारूपिक कोशिकांग व विशेष दानेदार अंगक **निसेल ग्रेन्यूल** पाए जाते हैं। छोटे तंतु जो कोशिका काय से प्रवर्धित होकर लगातार विभाजित होते हैं तथा जिनमें निसेल ग्रेन्यूल भी पाए जाते हैं, दुम्राक्ष्य कहलाते हैं। ये तंतु उद्दीपनों को कोशिका काय की ओर भेजते हैं। एक तंत्रिकोशिका में एक तंत्रिकाक्ष निकलता है। इसका दूरस्थ भाग शाखित व प्रत्येक शाखित भाग का अंतिम छोर लड़ीनुमा संरचना सिनेप्टिक नोब जिसमें **सिनेप्टी पुटिकाएं** होती हैं, इसमें रसायन **न्यूरोट्रांसमीटर्स** पाए जाते हैं। तंत्रिकाक्ष तांत्रिकीय आवेगों को कोशिका काय से दूर सिनेप्स पर अथवा तांत्रिकीयपेशी संधि पर पहुँचाते हैं। तंत्रिकाक्ष तथा दुम्राक्ष की संख्या के आधार पर न्यूरोंस को तीन समूहों में बाँटते हैं। जैसे **बहुध्रुवीय** (एक तंत्रिकाक्ष व दो या अधिक दुम्राक्ष्य युक्त जो प्रमस्तिष्क वल्कुट में पाए जाते हैं।) तथा **द्विध्रुवीय** (एक तंत्रिकाक्ष एवं एक द्रुमाक्ष्य जो दृष्टि पटल में पाए जाते हैं।) तंत्रिकाक्ष दो प्रकार के होते हैं: **आच्छदी** व **आच्छदहीन**। आच्छदी तंत्रिका तंतु **श्वान कोशिका** से ढके रहते हैं, जो तंत्रिकाक्ष के चारो ओर माइलिन आवरण बनाती है। माइलिन आवरणों के बीच

अंतराल पाए जाते हैं, जिन्हें **रेनवीयर के नोड** कहते हैं। आच्छदी तंत्रिका तंतु मेरू व कपाल तंत्रिकाओं में पाए जाते हैं। आच्छदहीन तंत्रिका तंतु भी श्वान कोशिका से घिरे रहते हैं; लेकिन वे ऐक्सोन के चारों ओर माइलीन आवरण नहीं बनाते हैं। सामान्यतया स्वायत्त तथा कायिक तंत्रिका तंत्र में मिलते हैं।

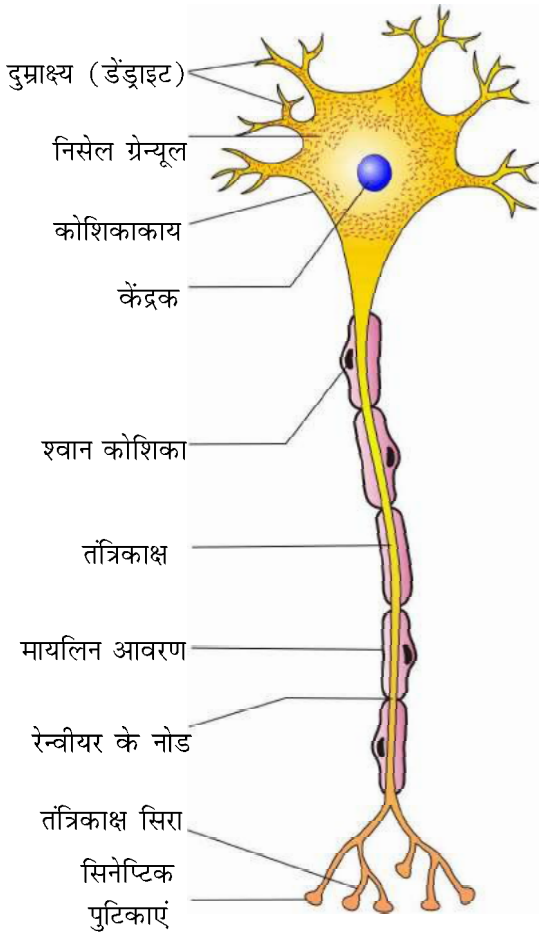

चित्र 21.1 तंत्रिकोशिका की संरचना

21.3.1 तंत्रिका आवेगों की उत्पत्ति व संचरण

तंत्रिकोशिकाएं (न्यूरोंस)उद्दीपनशील कोशिकाएं हैं; क्योंकि उनकी झिल्ली ध्रुवीय अवस्था में रहती है। *क्या आप जानते हैं, यह झिल्ली ध्रुवीय अवस्था में क्यों रहती है?* विभिन्न प्रकार के आयन पथ (चैनल) तंत्रिका झिल्ली पर पाए जाते हैं। ये आयन पथ विभिन्न आयनों के लिए चयनात्मक पारगम्य हैं। जब कोई न्यूरॉन आवेगों का संचरण नहीं करते हैं जैसे कि विराम अवस्था में तंत्रिकाक्ष झिल्ली सोडियम आयंस की तुलना में पोटैसियम आयंस तथा क्लोराइड आयंस के लिए अधिक पारगम्य होती है। इसी प्रकार से झिल्ली, तंत्रिकाक्ष द्रव्य में उपस्थित ऋण आवेषित प्रोटिकाल में भी अपारगम्य होती है। धीरे-धीरे तंत्रिकाक्ष के तंत्रिका द्रव्य में K^+ तथा ऋणात्मक आवेषित प्रोटीन की उच्च सांद्रता तथा Na^+ की निम्न सांद्रता होती है। इस भिन्नता के कारण सान्द्रता प्रवणता बनती है। झिल्ली पर पाई जाने वाली इस आयनिक प्रवणता को सोडियम पोटैसियम पंप द्वारा नियमित किया जाता है। इस पंप द्वारा प्रतिचक्र $3Na^+$ बाहर की ओर व $2K^+$ कोशिका में प्रवेश करते हैं। परिणामस्वरूप तंत्रिकाक्ष झिल्ली की बाहरी सतह धन आवेशित; जबकि आंतरिक सतह ऋण आवेशित हो जाती है; इसलिए यह ध्रुवित हो जाती है। विराम स्थिति में प्लाज्मा झिल्ली पर इस विभवांतर को **विरामकला विभव** कहते हैं।

आप यह जानने के लिए उत्सुक होंगे कि तंत्रिकाक्ष पर तंत्रिका आवेग की उत्पत्ति एवं उसका संचरण किस प्रकार होता है? जब किसी एक स्थान पर ध्रुवित झिल्ली पर आवेग होता है (चित्र 21.2 का उदाहरण) तब A स्थल की ओर स्थित झिल्ली Na^+ के लिए मुक्त पारगमी हो जाती है। जिसके फलस्वरूप Na^+ तीव्र गति से अंदर जाते हैं और एक सतह पर विपरीत ध्रुवता हो जाती है अर्थात् झिल्ली की बाहरी सतह ऋणात्मक आवेशित तथा आंतरिक सतह धनात्मक आवेशित हो जाती है। A स्थल पर झिल्ली की विपरीत ध्रुवता होने से विध्रुवीकरण हो जाता है। A झिल्ली की सतह पर विद्युत विभवांतर **क्रियात्मक विभव** कहलाता है, जिसे तथ्यात्मक रूप से **तंत्रिका आवेग** कहा जाता है।

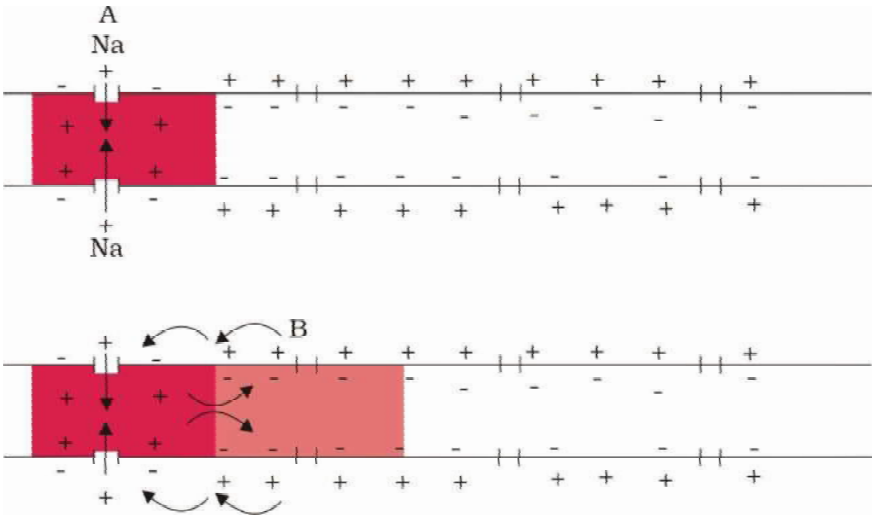

चित्र 21.2 एक तंत्रिकाक्ष में तंत्रिका आवेग का संचरण प्रदर्शित करते हुए आरेख

तंत्रिकाक्ष से कुछ आगे (जैसे स्थान B) झिल्ली की बाहरी सतह पर धनात्मक आवेश तथा आंतरिक सतह पर ऋणात्मक आवेश होता है। परिणामस्वरूप A स्थल से B स्थल की ओर झिल्ली की आंतरिक सतह पर **आवेग विभव** का संचरण होता है। अत: स्थान A पर **आवेग** क्रियात्मक विभव उत्पन्न होता है। तंत्रिकाक्ष की लंबाई के समांतर क्रम का पुनरावर्तन होता है और आवेग का संचरण होता है। उद्दीपन द्वारा प्रेरित Na^+ के लिए बढ़ी पारगम्यता क्षणिक होती है उसके तुरंत पश्चात K^+ की प्रति पारगम्यता बढ़ जाती है। कुछ ही क्षणों के भीतर K^+ झिल्ली के बाहरी ओर परासरित होता है और उद्दीपन के स्थान पर (विराम विभव का) पुन: संग्रह करता है तथा तंतु आगे के उद्दीपनों के लिए एक बार फिर उत्तरदायी हो जाते हैं।

21.3.2 आवेगों का संचरण

तंत्रिका आवेगों का एक न्यूरॉन से दूसरे न्यूरॉन तक संचरण सिनेप्सिस द्वारा होता है। एक **सिनेप्स** का निर्माण पूर्व सिनैप्टिक न्यूरॉन तथा पश्च सिनेप्टिन न्यूरॉन की झिल्ली द्वारा होता है, जो कि **सिनेप्टिक दरार** द्वारा विभक्त हो भी सकती है या नहीं भी। सिनेप्स दो प्रकार के होते हैं, विद्युत सिनेप्स एवं रासायनिक सिनेप्स। विद्युत सिनेप्सिस पर, पूर्व और पश्च सिनेप्टिक न्यूरॉन की झिल्लियाँ एक दूसरे के समीप होती है। एक न्यूरॉन से दूसरे न्यूरॉन तक विद्युत धारा का प्रवाह सिनेप्सिस से होता है। विद्युतीय सिनेप्सिस से आवेग का संचरण, एक तंत्रिकाक्ष से आवेग के संचरण के समान होता है। विद्युतीय-सिनेप्सिस से आवेग का संचरण, रासायनिक सिनेप्सिस से संचरण की तुलना में अधिक तीव्र होता है। हमारे तंत्र में विद्युतीय सिनेप्सिस बहुत कम होते हैं।

रासायनिक सिनेप्स पर, पूर्व एवं पश्च सिनेप्टिक न्यूरोंस की झिल्लियाँ द्रव से भरे अवकाश द्वारा पृथक होती है जिसे सिनेप्टिक दरार कहते हैं (चित्र 21.3)। *क्या आप*

जानते हैं किस प्रकार पूर्व सिनेप्टिक आवेग (सक्रिय विभव) का संचरण सिनेप्टिक दरार से पश्च सिनेप्टिक न्यूरॉन तक करते हैं? सिनेप्सिस द्वारा आवेगों के संचरण में न्यूरोट्रॉसमीटर (तंत्रिका संचारी) कहलाने वाले रसायन सम्मिलित होते हैं। तंत्रिकाक्ष के छोर पर स्थित (आश्रय पुटिकाऐं) तंत्रिका संचारी अणुओं से भरी होती हैं। जब तक आवेग तंत्रिकाक्ष के छोर तक पहुँचता है। यह सिनेप्टिक पुटिका की गति को झिल्ली की ओर उत्तेजित करता है, जहाँ वे प्लाज्मा झिल्ली के साथ जुड़कर तंत्रिका संचारी अणुओं को सिनेप्टिक दरार में मुक्त कर देते हैं। मुक्त किए गए तंत्रिका संचारी अणु पश्च सिनेप्टिक झिल्ली पर स्थित विशिष्ट **ग्राहियों** से जुड़ जाते हैं। इस जुड़ाव के फलस्वरूप आयन चैनल खुल जाते हैं और उसमें आयनों के आगमन से पश्च सिनेप्टिक झिल्ली पर नया विभव उत्पन्न हो जाता है। उत्पन्न हुआ नया विभव उत्तेजक या अवरोधक हो सकता है।

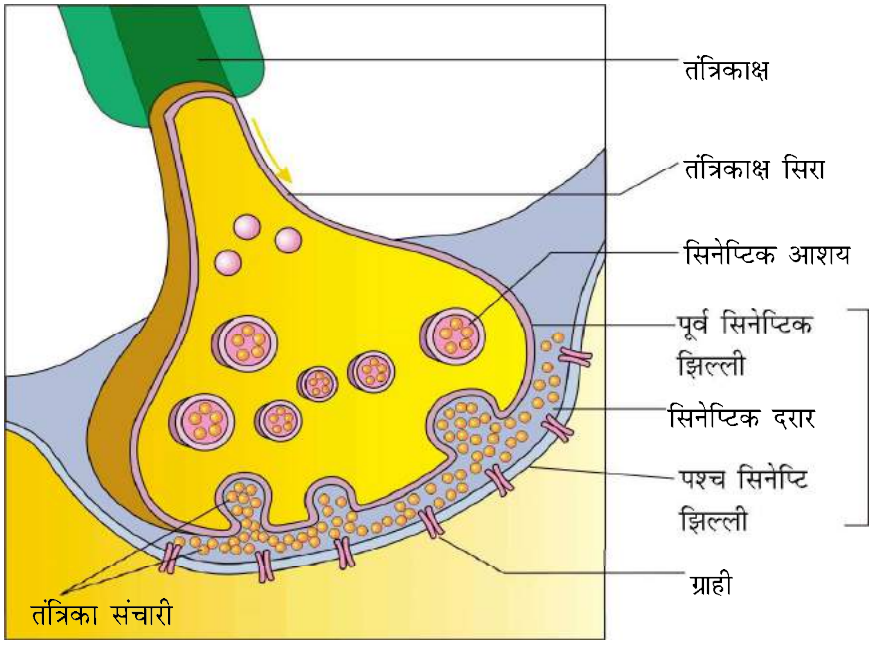

चित्र 21.3 तंत्रिकाक्ष सिरा एवं सिनेप्स को प्रदर्शित करते हुए

21.4 केंद्रीय तंत्रिका तंत्र - मानव मस्तिष्क

मस्तिष्क हमारे शरीर का केंद्रीय सूचना प्रसारण अंग है और यह 'आदेश व नियंत्रण तंत्र' की तरह कार्य करता है। यह ऐच्छिक गमन शरीर के संतुलन, प्रमुख अनेच्छिक अंगों के कार्य (जैसे फेफड़े, हृदय, वृक्क आदि), तापमान नियंत्रण, भूख एवं प्यास, परिवहन, लय, अनेकों अंत:स्रावी ग्रंथियों की क्रियाएं और मानव व्यवहार का नियंत्रण करता है। यह देखने, सुनने, बोलने की प्रक्रिया, याददाश्त, कुशाग्रता, भावनाओं और विचारों का भी स्थल है।

मानव मस्तिष्क खोपड़ी के द्वारा अच्छी तरह सुरक्षित रहता है। खोपड़ी के भीतर **कपालीय मेनिंजेज** से घिरा होता है, जिसकी बाहरी परत **ड्यूरा मैटर**, बहुत पतली मध्य परत **एरेक्नॉइड** और एक आंतरिक परत **पाया मैटर** (जो कि मस्तिष्क ऊतकों के संपर्क में होती है) कहलाती है। मस्तिष्क को 3 मुख्य भागों में विभक्त किया जा सकता है: (i) **अग्र मस्तिष्क**, (ii) **मध्य मस्तिष्क,** और (iii) **पश्च मस्तिष्क** (चित्र 21.4)।

21.4.1 अग्र मस्तिष्क

अग्र मस्तिष्क **सेरीब्रम, थेलेमस** और **हाइपोथेलेमस** का बना होता हैं सेरीब्रम (प्रमस्तिष्क) मानव मस्तिष्क का एक बड़ा भाग बनाता है। एक गहरी लंबवत विदर प्रमस्तिष्क को दो भागों, दाएं व बाएं **प्रमस्तिष्क गोलार्द्धों** में विभक्त करती है। ये गोलार्द्ध तंत्रिका तंतुओं की पट्टी **कार्पस कैलोसम** द्वारा जुड़े होते हैं (चित्र 21.4)

प्रमस्तिष्क गोलार्द्ध को कोशिकाओं की एक परत आवरित करती है, जिसे प्रमस्तिष्क वल्कुट कहते हैं तथा यह निश्चित गर्तो में बदल जाती है। प्रमस्तिष्क वल्कुट को इसके धूसर रंग के कारण धूसर द्रव्य कहा जाता है। तंत्रिका कोशिका काय सांद्रित होकर इसे रंग प्रदान करती है। प्रमस्तिष्क वल्कुट में प्रेरक क्षेत्र, संवेदी भाग और बड़े भाग होते हैं, जो स्पष्टतया न तो प्रेरक क्षेत्र होते हैं न ही संवेदी। ये भाग **सहभागी क्षेत्र** कहलाते हैं तथा जटिल क्रियाओं जैसे अंतर संवेदी सहभागिता, स्मरण, संपर्क सूत्र आदि के लिए उत्तरदायी होते हैं। इस पथ के रेशे माइलिन आच्छद से आवरित रहते हैं जो कि प्रमस्तिष्क गोलार्द्ध का आंतरिक भाग बनाते हैं। ये इस परत को सफेद अपारदर्शी रूप प्रदान करते

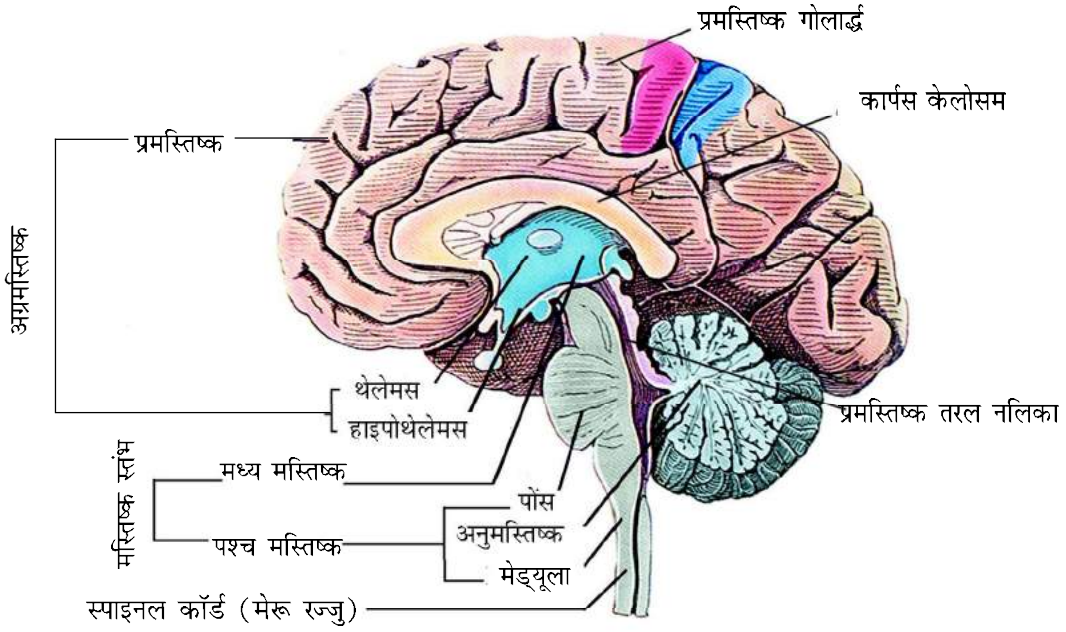

चित्र 21.4 मानव मस्तिष्क का सममितार्धी (सेजीटल) काट

हैं, जिसे श्वेत द्रव्य कहते हैं। प्रमस्तिष्क थेलेमस नामक संरचना के चारों ओर लिपटा होता है, जो कि संवेदी और प्रेरक संकेतों का मुख्य संपर्क स्थल है। थेलेमस के आधार पर स्थित मस्तिष्क का दूसरा मुख्य भाग **हाइपोथेलेमस** स्थित होता है। हाइपोथेलेमस में कई केंद्र होते हैं, जो शरीर के तापमान, खाने और पीने का नियंत्रण करते हैं। इसमें कई तंत्रिका स्रावी कोशिकाएं भी होती हैं जो हाइपोथेलेमिक हार्मोन का स्रवण करती हैं। प्रमस्तिष्क गोलार्द्ध का आंतरिक भाग और अंदरूनी अंगों जैसे एमिगडाला, हिप्पोकैंपस आदि का समूह मिलकर एक जटिल संरचना का निर्माण करता है, जिसे लिंबिकलोब या **लिंबिक तंत्र** कहते हैं। यह हाइपोथेलेमस के साथ मिलकर लैंगिक व्यवहार, मनोभावनाओं की अभिव्यक्ति (जैसे उत्तेजना, खुशी, गुस्सा और भय) आदि का नियंत्रण करता है।

21.4.2 मध्य मस्तिष्क

मध्य मस्तिष्क अग्र मस्तिष्क के थेलेमस/हाइपोथेलेमस तथा पश्च मस्तिष्क के पोंस के बीच स्थित होता है। एक नाल **प्रमस्तिष्क तरल नलिका** मध्य मस्तिष्क से गुजरती है। मध्य मस्तिष्क का ऊपरी भाग चार लोबनुमा उभारों का बना होता है जिन्हें **कॉर्पोरा क्वाड्रीजेमीन** कहते हैं। मध्य मस्तिष्क और पश्च मस्तिष्क, मस्तिष्क स्तंभ बनाते हैं।

21.4.3 पश्च मस्तिष्क

पश्च मस्तिष्क **पोंस, अनुमस्तिष्क** और **मध्यांश** (मेड्यूला ओबलोगेंटा) का बना होता है। पोंस रेशेनुमा पथ का बना होता है जो कि मस्तिष्क के विभिन्न भागों को आपस में जोड़ते हैं। अनुमस्तिष्क की सतह विलगित होती है जो न्यूरोंस को अतिरिक्त स्थान प्रदान करती है। मस्तिष्क का मध्यांश मेरूरज्जु से जुड़ा होता है। मध्यांश में श्वसन, हृदय परिसंचारी प्रतिवर्तन और पाचक रसों के स्राव के नियंत्रण केंद्र होते हैं।

21.5 प्रतिवर्ती क्रिया और प्रतिवर्ती चाप

जब हमारे शरीर का कोई अंग अत्यधिक गर्म, ठंडी, नुकीली वस्तु या जहरीले अथवा डरावने जानवर के संपर्क में आता है तो उस अंग को अचानक हटा लिए जाने को आपने अनुभव किया होगा। अनुभव की संपूर्ण क्रियाविधि एक अनैच्छिक क्रिया है जो कि परिधीय तंत्रिकीय उद्दीपन के फलस्वरूप केंद्रीय तंत्रिका तंत्र के भाग विशेष की अनुपस्थिति में होती है, **प्रतिवर्ती क्रिया** कहलाती है। प्रतिवर्ती क्रिया पथ अभिवाही न्यूरॉन (ग्राही) और अपवाही न्यूरॉन (प्रभावक/उत्तेजक), जो कि निश्चित क्रम में लगे होते हैं, से बना होता है (चित्र 21.5)। अभिवाही न्यूरॉन संवेदी अंगों से संकेत ग्रहण करके पृष्ठ तंत्रिकीय मूल के द्वारा केंद्रीय तंत्रिका तंत्र में आवेगों का संप्रेषण करता है। प्रभावक/प्रेरक न्यूरॉन तब संकेतों को प्रभावी अंगों तक पहुँचाती है। इस प्रकार उद्दीपन एवं प्रतिवर्ती क्रिया मिलकर प्रतिवर्ती चाप का निर्माण करते हैं, जैसाकि दी गई रिफलेक्स में प्रदर्शित किया गया है। नी जर्क रिफलेक्स (Knee jerk reflex) क्रियाविधि का अध्ययन करने के लिए चित्र 21.5 का सावधानीपूर्वक अध्ययन कीजिए।

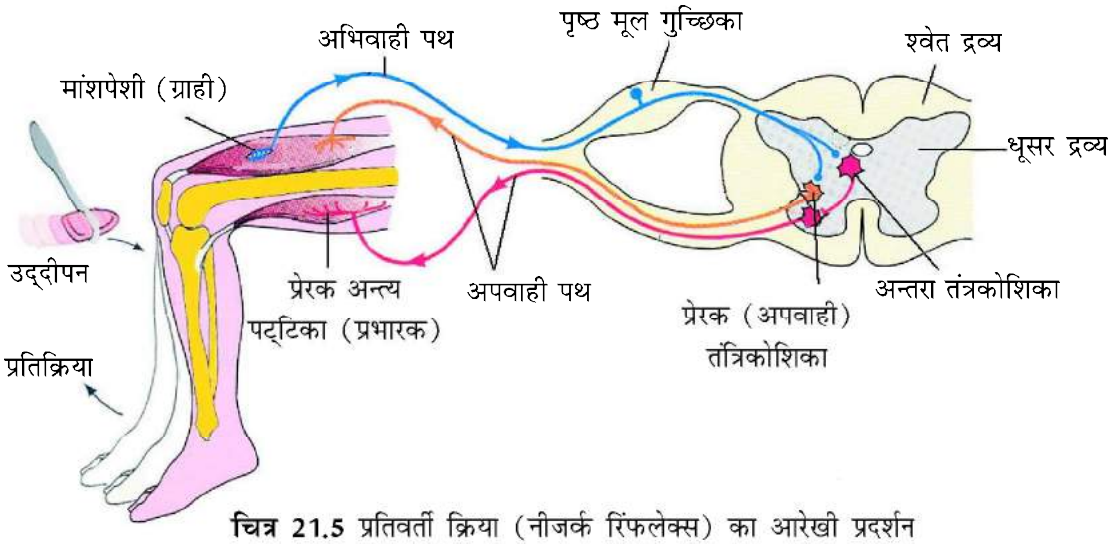

चित्र 21.5 प्रतिवर्ती क्रिया (नीजर्क रिंफलेक्स) का आरेखी प्रदर्शन

21.6 संवेदिक अभिग्रहण एवं संसाधन

क्या आपने कभी सोचा है कि आपको वातावरण के परिवर्तन की पहचान किस प्रकार होती है? आप किस प्रकार किसी वस्तु एवं उसके रंग को देख पाते हैं? कैसे आप ध्वनि को सुनते हैं? संवेदी अंग सभी प्रकार की वातावरणीय बदलावों का पता लगाकर समुचित संदेशों को केंद्रीय तंत्रिका तंत्र को भेजते हैं जहाँ सभी अंतर क्रियाएं संचालित व विश्लेषित की जाती हैं। इसके बाद संदेशों को मस्तिष्क के विभिन्न भागों या केंद्रों तक भेजा जाता है। इस प्रकार आप वातावरणीय बदलावों को अनुभव करते हैं।[12] नीचे दिए गए भागों में आँख (देखने हेतु संवेदी अंग) और कान (सुनने हेतु संवेदी अंग) की संरचना और क्रियाविधि से आपका परिचय करवाया जाएगा।

21.6.1 नेत्र

हमारे एक जोड़ी नेत्र खोपड़ी में स्थित अस्थि गर्तिक, जिसे **नेत्र कोटर** कहते हैं, में स्थित होते हैं। मानव नेत्र की संरचना और कार्य का संक्षिप्त विवरण अगले भाग में दिया गया है।

21.6.1.1 नेत्र के भाग

वयस्क मनुष्य के नेत्र लगभग गोलाकार संरचना है। नेत्र की दीवारें तीन परतों की बनी होती हैं। बाहरी परत घने संयोजी ऊतकों की बनी होती हैं जिसे **स्क्लेरा** (श्वेत पटल) कहते हैं (चित्र 21.6)। अग्र भाग **कॉर्निया** कहलता है। मध्य परत, **कोरॉइड** (रक्त पटल) में अनेक रक्त वाहिनियाँ होती हैं और यह हल्के नीले रंग की दिखती हैं। नेत्र गोलक के पिछले दो-तीहाई भाग पर कोरॉइड की परत पतली होती है, लेकिन यह अग्र भाग में मोटी होकर **पक्ष्माभ** काय बनाती है।

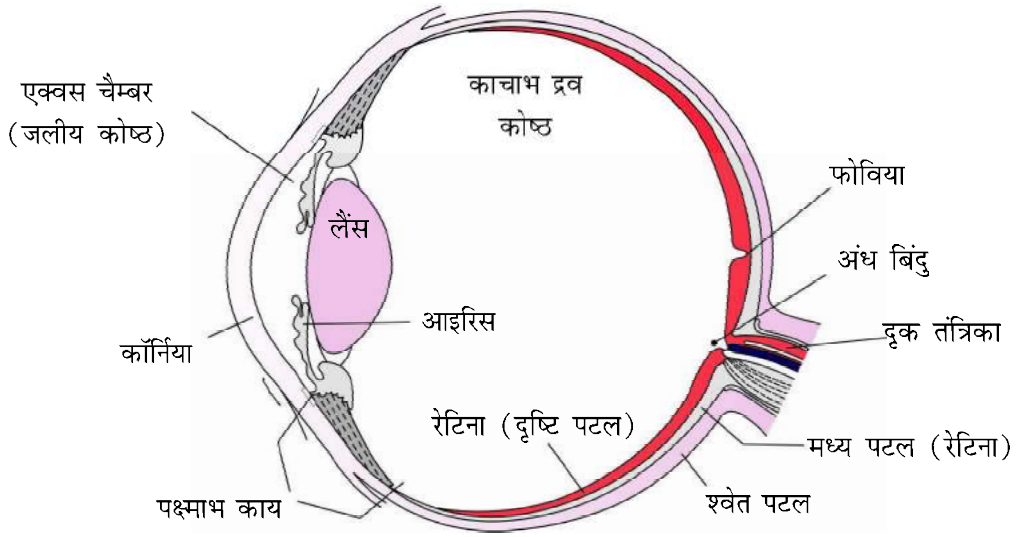

चित्र 21.6 नेत्र के भागों को प्रदर्शित करते हुए चित्र

पक्ष्माभ काय आगे की ओर निरंतरता बनाते हुए वर्णक युक्त और अपारदर्शी संरचना **आइरिस** बनाती है, जो कि आँख का रंगीन देखने योग्य भाग होता है। नेत्र गोलक के भीतर पारदर्शी क्रिस्टलीय **लैंस** होता है जो कि तंतुओं द्वारा पक्ष्माभ काय से जुड़ा रहता है। लैंस के सामने आइरिस से घिरा हुआ एक छिद्र होता है, जिसे **प्यूपिल** कहते हैं। प्यूपिल के घेरे का नियंत्रण आइरिस के पेशी तंतु करते हैं।

आंतरिक परत **रेटिना** (दृष्टि पटल) कहलाती है और यह कोशिकाओं की तीन तंत्रिकीय परतों से बनी होती है अर्थात् अंदर से बाहर की ओर गुच्छिका कोशिकाएं, द्विध्रुवीय कोशिकाएं और प्रकाश ग्राही कोशिकाएं। प्रकाश ग्राही कोशिकाएं दो प्रकार की होती हैं। **शलाका** और **शंकु**। इन कोशिकाओं में प्रकाश संवेदी प्रोटीन प्रकाशीय वर्णक होता है। दिन की रोशनी में देखना (प्रकाशानुकूली) और रंग देखना शंकु के कार्य है तथा स्कोटोपिक (तिमिरानुकूलित) दृष्टि शलाका का कार्य है। शलाकाओं में बैंगनी लाल रंग का प्रोटीन रोडोप्सिन या दृष्टि बैंगनी होता है, जिसमें विटामिन ए का व्युत्पन्न होता है। मानव नेत्र में तीन प्रकार के शंकु होते हैं, जिनमें कुछ विशेष प्रकाश वर्णक होते हैं, जो कि लाल, हरे और नीले प्रकाश को पहचानने में सक्षम होते हैं। विभिन्न प्रकार के शंकुओं और उनके प्रकाश वर्णकों के मेल से अलग-अलग रंगों के प्रति संवेदना उत्पन्न होती है। जब इन शंकुओं को समान मात्रा में उत्तेजित किया जाता है तो सफेद रंग के प्रति संवेदना उत्पन्न होती है।

दृक तंत्रिका नेत्र तथा दृष्टि पटल को नेत्र गोलक के मध्य तथा थोड़ी पश्च ध्रुव के ऊपर छोड़ती है तथा रक्त वाहिनी यहाँ प्रवेश करती है। प्रकाश संवेदी कोशिकाएं उस भाग में नहीं होती है, अंत: इसे **अंधबिंदु** कहते हैं। अंधबिंदु के पार्श्व में आँख के पिछले ध्रुव पर पीला वर्णक बिंदु होता है, जिसे **मैक्यूला ल्यूटिया** कहते हैं और जिसके केंद्र में एक गर्त होता है जिसे **फोविया** कहते हैं। फोविया रेटिना का पतला भाग होता है, जहाँ केवल शंकु संघनित होते हैं। यह वह बिंदु है जहाँ दृष्टि क्रियाएं (दिखाई देना) अधिकतम होती हैं।

कॉर्निया और लैंस के बीच की दूरी को **एक्वस चैंबर** (जलीय कोष्ठ) कहते हैं। जिसमें पतला जलीय द्रव नेत्रोद होता है। लैंस और रेटिना के बीच के रिक्त स्थान को **काचाभ/द्रव कोष्ठ** कहते हैं और यह पारदर्शी द्रव काचाभ द्रव कहलाता है।

21.6.1.2 देखने की प्रक्रिया

दृश्य तरंगदैर्ध्य में प्रकाश किरणों को कॉर्निया व लैंस द्वारा रेटिना पर फोकस करने पर शलाकाओं व शंकु में आवेग उत्पन्न होते हैं। यह पहले इंगित किया जा चुका है कि मानव नेत्र में प्रकाश संवेदी यौगिक (प्रकाश वर्णक) **ओप्सिन** (एक प्रोटिन) और **रेटिनल** (विटामिन ए का एल्डिहाइड से) बने होते हैं। प्रकाश ओप्सिन से रेटिनल के अलगाव को प्रेरित करता है, फलस्वरूप ऑप्सिन की संरचना में बदलाव आता है तथा यह झिल्ली की पारगम्यता में बदलाव लाता है।

इसके परिणामस्वरूप विभावांतर प्रकाश ग्राही कोशिका में संचरित होती है तथा एक संकेत की उत्पत्ति होती है, जो कि गुच्छिका कोशिकाओं में द्विध्रुवीय कोशिकाओं द्वारा सक्रिय कोशिका विभव उत्पन्न करता है। इन सक्रिय विभव के आवेगों का दृक तंत्रिका द्वारा मस्तिष्क के **दृष्टि वल्कुट** क्षेत्र में भेजा जाता है, जहाँ पर तंत्रिकीय आवेगों की विवेचना की जाती है और छबि को पूर्व स्मृति एवं अनुभव के आधार पर पहचाना जाता है।

21.6.2 कर्ण

कर्ण दो संवेदी क्रियाएं करते हैं, सुनना और शरीर का संतुलन बनाना। शरीर क्रिया विज्ञान की दृष्टि से कर्ण को तीन मुख्य भागों में विभक्त किया जा सकता है - **बाह्य कर्ण, मध्य कर्ण** और **अंत:कर्ण** (चित्र 21.7)। बाह्य कर्ण **पिन्ना** या **ऑरीकुला** तथा **बाह्य**

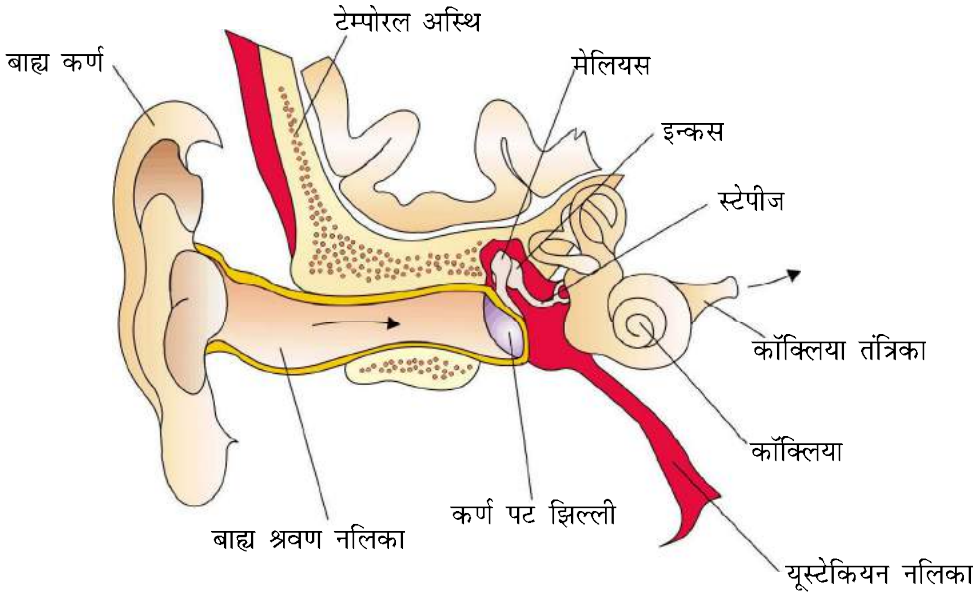

चित्र 21.7 कर्ण का आरेखी दृश्य

श्रवण गुहा का बना होता है। पिन्ना वायु में उपस्थित तंरगों को एकत्र करता है जो ध्वनि उत्पन्न करती है। बाह्य श्रवण गुहा, **कर्ण पटह झिल्ली** तक भीतर की ओर जाती है। पिन्ना तथा मिटस में कुछ महीन बाल और मोम स्त्रवित करने वाली ग्रंथियाँ होती हैं। कर्ण पटह झिल्ली संयोजी ऊतकों की बनी होती है जो बाहरी ओर त्वचा से तथा अंदर श्लेष्मा झिल्ली से आवरित होती है। मध्य कर्ण तीन अस्थिकाओं से बना होता है जिन्हें **मैलियस, इंकस** और **स्टेपीज** कहते हैं। ये एक दूसरे से शृंखला के रूप में जुड़ी रहती है। मैलियस कर्ण पटह झिल्ली से और स्टेपीज कोक्लिया की **अंडाकार खिड़की** से जुड़ी होती है। कर्ण अस्थिकाएं ध्वनि तंरगों को अंत:कर्ण तक तक पहुँचाने की क्षमता को बढ़ाती है। **यूस्टेकीयन नलिका** मध्यकर्ण गुहा को फेरिंक्स से जोड़ती है। यूस्टेकियन नलिका कर्ण पटह के दोनों ओर दाब को समान रखती हैं।

द्रव से भरा अंत:कर्ण लेबरिंथ कहलाता है, जो कि अस्थिल और झिल्लीनुमा लेबरिंथ से बना होता है। अस्थिल लेबरिंथ वाहिकाओं की एक शृंखला होती है। इन वाहिकाओं के भीतर झिल्ली नुमा **लेबरिंथ** होता है, जो कि परिलसिका द्रव से घिरा रहता है; किंतु झिल्लीनुमा लेबरिंथ एंडोलिंफ नामक द्रव से भरा रहता है। लेबरिंथ के घुमावदार भाग को **कोक्लिया** कहते हैं। कोक्लिया को दो झिल्लियों द्वारा तीन कक्षों में विभक्त किया जाता है, जिन्हें बेसिलर झिल्ली और राइजनर्स झिल्ली कहते हैं। ऊपरी कक्ष को स्केला वेस्टीब्यूली, मध्य कक्ष को स्केला मीडिया और निचले कक्ष को स्केला टिंपेनी कहते हैं। स्केला वेस्टीब्युली और स्केला टिंपेनी परिलसिका द्रव से तथा स्केला मीडिया अंर्तलसिका द्रव से भरा होता है (चित्र 21.8)। कोक्लिया के नीचे स्केला वेस्टीब्युली अंडाकार खिड़की में समाप्त होती हैं; जबकि स्केला टिंपनी गोलाकार खिड़की में समाप्त होते हैं।

आर्गन ऑफ कॉर्टाई आधारीय झिल्ली पर स्थित होता है जिसमें पाई जाने वाली **रोम कोशिकाएं** श्रवण ग्राही के रूप में कार्य करती है। रोम कोशिकाएं आर्गन ऑफ कॉर्टाई की आंतरिक सतह पर शृंखला में पाई जाती है। रोम कोशिकाएं का आधारीय भाग अभिवाही तंत्रिका तंतु के निकट संपर्क में होता है। प्रत्येक रोम कोशिका के ऊपरी भाग से कई स्टीरियो सिलिया नामक प्रवर्ध निकलता है। रोम कोशिकाओं की शृंखला के ऊपर पतली लचीली टेक्टोरियल झिल्ली होती है।

अंत:कर्ण में कोक्लिया के ऊपर जटिल तंत्र, **वेस्टीब्युलर तंत्र** भी होता है। वेस्टीब्युलर तंत्र तीन **अर्द्धचंद्राकार** नलिकाओं और **ऑटोलिथ** से बना होता है (मैक्युला, लघुकोश और यूट्रीकल का संवेदी हिस्सा है)। प्रत्येक अर्द्धचंद्राकार नलिका एक दूसरे से समकोण पर भिन्न तल पर स्थित होती है। झिल्लीनुमा नलिकाएं अस्थिल नलिकाओं के परिलसिका द्रव में डुबी रहती हैं। नलिका का फुला हुआ आधार भाग एंपुला जिसमें एक उभार निकलता है, जिसे **क्रिस्टा एंपुलैरिस** कहते हैं। प्रत्येक क्रिस्टा में रोम कोशिकाएं होती हैं। लघुकोश और यूट्रीकल में उभारनुमा संरचना **मैक्यूला** होता है। क्रिस्टा व मैक्यूला वेस्टीब्युलर तंत्र के विशिष्ट ग्राही होते हैं, जो शरीर के संतुलन व सही स्थिति के लिए उत्तरदायी होते हैं।

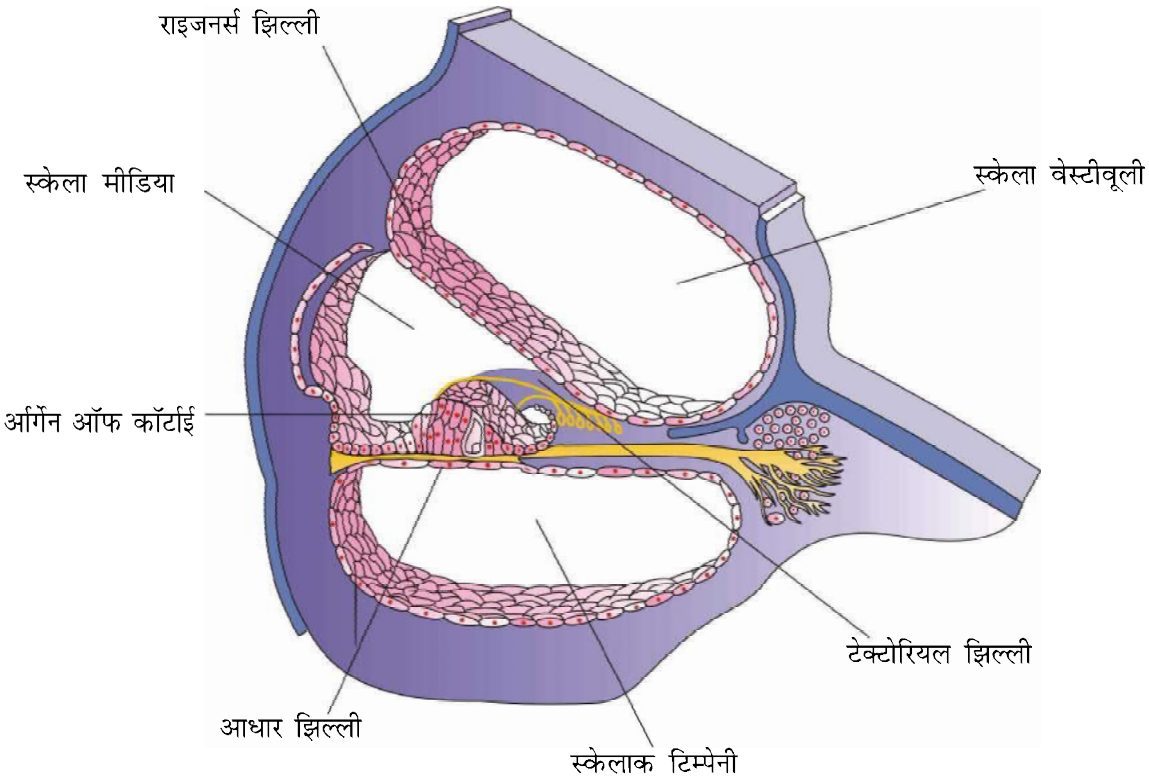

चित्र 21.8 कोक्लिया के काट का दृश्य

21.6.2.1 श्रवण की क्रिया

कर्ण किस प्रकार ध्वनि तरंगों को तंत्रिकीय आवेगों में बदलता है, जो कि मस्तिष्क द्वारा उदीप्त व क्रियात्मक होकर हमें ध्वनि की पहचान कराते हैं? बाह्य कर्ण ध्वनि तरंगों को ग्रहण कर कर्ण पटह तक भेजता है। ध्वनि तरंगों के प्रतिक्रिया में कर्ण पटह में कंपन्न होता है और ये कंपन्न कर्ण अस्थिकाओं (मैलियस, इंकस और स्टेपीस) से होते हुए गोलाकार खिड़की तक पहुँचते हैं। गोलाकार खिड़की से कंपन्न कोक्लिया में भरे द्रव तक पहुँचते हैं, जहां वे लिंफ में तरंगे उत्पन्न करते हैं। लिंफ की तरंगें आधार कला में हलचल उत्तेजित करती हैं।

आधारीय झिल्ली में गति से रोम कोशिकाएं मुड़ती हैं और टैक्टोरियल झिल्ली पर दबाव डालती हैं। फलस्वरूप संगठित अभिवाही न्यूरोंस में तंत्रिका आवेग उत्पन्न होते हैं। ये आवेग अभिवाही तंतुओं द्वारा श्रवण तंत्रिका से होते हुए मस्तिष्क के श्रवण वल्कुट तक भेजे जाते हैं जहाँ आवेगों का विश्लेषण कर ध्वनि को पहचाना जाता है।

सारांश

तंत्रिका तंत्र समन्वयी तथा एकीकृत क्रियाओं के साथ ही अंगों की उपापचयी और समस्थैनिक क्रियाओं का नियंत्रण करता है। तंत्रिका तंत्र की क्रियात्मक इकाई न्यूरोंस, झिल्ली के दोनों ओर सांद्रता प्रवणता अंतराल के कारण उत्तेजक कोशिकाएं होती हैं। स्थिर तंत्रिकीय झिल्ली के दोनों ओर का विद्युत विभवांतर विरामकला विभव कहलाता है। तंत्रिकांक्ष झिल्ली पर विद्युत विभावांतर प्रेरित उद्दीपन द्वारा संचारित होता है। इसे सक्रिय विभव कहते हैं। तंत्रिकाक्ष झिल्ली की सतह पर आवेगों का संचरण विध्रुवीकरण और पुनध्रुवीकरण के रूप में होता है। पूर्व सिनेप्टिक न्यूरॉन और पश्च सिनेप्टिक न्यूरॉन की झिल्लियाँ सिनेप्स का निर्माण करती है, जो कि सिनैप्टिक विदर द्वारा पृथक हो सकती है या नहीं होती है। सिनेप्स दो प्रकार के होते हैं - विद्युत सिनैप्स और रासायनिक सिनेप्स। रासायनिक सिनैप्स पर आवेगों के संचरण में भाग लेने वाले रसायन न्यूरोट्रांसमीटर कहलाते हैं।

मानव तंत्रिका तंत्र दो भागों का बना होता है -

(i) केंद्रीय तंत्रिका तंत्र और (ii) परीधीय तांत्रिका तंत्र। सी एन एस मस्तिष्क और मेरूरज्जु का बना होता है। मस्तिष्क को तीन मुख्य भागों में विभाजित किया जा सकता है। (i) अग्र मस्तिष्क (ii) मध्य मस्तिष्क (iii) पश्च मस्तिष्क। अग्र मस्तिष्क प्रमस्तिष्क, थेलेमस और हाइपोथेलेमस से बना होता है। प्रमस्तिष्क लंबवत् दो अर्धगोलार्धों में विभक्त होता है, जो कॉर्पस कैलोसम से जुड़े रहते हैं। अग्र मस्तिष्क का महत्वपूर्ण भाग हाइपोथेलेमस शरीर के तापक्रम, खाने और पीने आदि क्रियाओं का नियंत्रण करता है। प्रमस्तिष्क गोलार्द्धों का आंतरिक भाग और संगठित गहराई में स्थित संरचनाएं मिलकर एक जटिल संरचना बनाते हैं, जिसे लिम्बिक तंत्र कहते हैं और यह सूंघने, प्रतिवर्त्ती क्रियाओं, लैंगिक व्यवहार के नियंत्रण, मनोभावों की अभिव्यक्ति और अभिप्रेरण से संबंधित होता है। मध्य मस्तिष्क ग्राही व एकीकरण तथा एकीकृत दृष्टि तंतु तथा श्रवण अंतर क्रियाओं से संबंधित है।

पश्च मस्तिष्क पोंस, अनु मस्तिष्क और मेड्यूला का बना होता है। अनु मस्तिष्क कर्ण की अर्द्धचंद्राकार नलिकाओं तथा श्रवण तंत्र से प्राप्त होने वाली सूचनाओं को एकीकृत करता है। मध्यांश (मैड्यूला) में श्वसन, हृदय परिसंचयी, प्रतिवर्तित और जठर स्त्रावों के नियंत्रण केंद्र होते हैं। पोंस रेशेनुमा पथ का बना होता है, जो मस्तिष्क के विभिन्न भागों को आपस में जोड़ता है। परिधीय तंत्रिका तंत्र को प्राप्त उद्दीपनों के लिए अनैच्छिक प्रतिक्रियाओं को प्रतिवर्ती क्रियाएं कहा जाता है।

वातावरणीय बदलाव की सूचना सी एन एस को संवेदी अंगों से प्राप्त होती हैं, जिन्हें संचरित और विश्लेषित किया जाता है। इसके बाद संदेशों को आवश्यक समायोजन हेतु भेजा जाता है।

मानव नेत्र गोलक की दीवारें तीन उपपरतों से बनी होती है। कॉर्निया को छोड़कर बाहरी परत स्केलेरा (शुक्ल पटल) है। स्केलेरा के भीतर की ओर मध्य परत कॉरोइड कहलाती है। आंतरिक परत रेटिना में दो प्रकार की प्रकाश ग्राही कोशिकाएं होती हैं - शलाका और शंकु। इन कोशिकाओं में प्रकाश संवेदी प्रोटीन प्रकाश वर्णनक पाए जाते हैं।

दिन-रात की दृष्टि (फोटोपिक दृष्टि) शंकु का कार्य है तथा स्कोटोपिक दृष्टि शलाका का कार्य है। प्रकाश रेटिना से प्रवेश कर लैंस तक पहुँचता है और रेटिना पर वस्तु की छवि बनती है। रेटिना में उत्पन्न आवेगों को मस्तिष्क के दृष्टि वल्कुट भाग तक दृक तंत्रिका द्वारा भेजा जाता है। जहाँ पर तंत्रिकीय आवेगों का विश्लेषण होता है और रेटिना पर बनने वाली छवि को पहचाना जाता है।

कर्ण को बाह्य कर्ण, मध्य कर्ण व अंत:कर्ण में विभाजित किया जा सकता है। बाह्य कर्ण पिन्ना तथा बाह्य श्रवण गुहा से बना होता है। मध्य कर्ण तीन अस्थिकाओं मैलियस, इंकस और स्टेप्सीज से बना होता है। द्रव्य से भरा अंत:कर्ण लेबरिंथ का घुमावदार भाग कोक्लिया कहलाता है। कोक्लिया दो झिल्लियों बेसिलर झिल्ली

और राइजनर्स झिल्ली द्वारा तीन कक्षों में विभाजित किया जाता है। ऑर्गन कॉफ कॉर्टाई आधारीय झिल्ली द्वारा तीन कक्षों में विभाजित किया जाता है। ऑर्गन ऑफ कॉर्टाई आधारीय झिल्ली पर स्थित होता है और इसमें पाई जाने वाली रोम कोशिकाएं श्रवण ग्राही की तरह कार्य करती हैं। कर्ण ड्रम में उत्पन्न कंपन्न कर्ण अस्थिकाओं और अंडाकार खिड़की द्वारा द्रव से भरे अंत: कर्ण तक भेजे जाते हैं, जहाँ वे आधारीय झिल्ली में एक तरंग उत्पन्न करती हैं।

आधारीय झिल्ली में होने वाली गति रोम कोशिकाओं को मोड़ती है और टेक्टोरियस झिल्ली के विरूद्ध दबाव उत्पन्न करते हैं। फलस्वरूप तंत्रिका आवेग उत्पन्न होते हैं और अभिवाही तंतुओं द्वारा मस्तिष्क के श्रवण वल्कुट तक भेजे जाते हैं। अंत: कर्ण में भी कोक्लिया के ऊपर जटिल तंत्र होता है और शरीर के संतुलन और सही स्थिति को बनाए रखने में हमारी मदद करता है।

अभ्यास

1. निम्नलिखित संरचनाओं का संक्षेप में वर्णन कीजिए-
   (अ) मस्तिष्क (ब) नेत्र (स) कर्ण
2. निम्नलिखित की तुलना कीजिए-
   (अ) केंद्रीय तंत्रिका तंत्र और परिधीय तंत्रिका तंत्र
   (ब) स्थिर विभव और सक्रिय विभव
   (अ) कॉरोइड और रेटिना
3. निम्नलिखित प्रक्रियाओं का वर्णन कीजिए-
   (अ) तंत्रिका तंतु की झिल्ली का ध्रुवीकरण
   (ब) तंत्रिका तंतु की झिल्ली का विध्रुवीकरण
   (स) तंत्रिका तंतु के समांतर आवेगों का संचरण
   (द) रासायनिक सिनेप्स द्वारा तंत्रिका आवेगों का संवहन
4. निम्नलिखित का नामांकित चित्र बनाइए-
   (अ) न्यूरॉन (ब) मस्तिष्क (स) नेत्र (द) कर्ण
5. निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए-
   (अ) तंत्रीय समन्वयन (ब) अग्र मस्तिष्क
   (स) मध्य मस्तिष्क (द) पश्च मस्तिष्क
   (ध) रेटिना (य) कर्ण अस्थिकाएं
   (र) कॉक्लिया (ल) ऑर्गन ऑफ कॉर्टाई व सिनेप्स
6. निम्न पर संक्षिप्त टिप्पणी दीजिए-
   (अ) सिनेप्टिक संचरण की क्रियाविधि
   (ब) देखने की प्रक्रिया
   (स) श्रवण की प्रक्रिया
7. (अ) आप किस प्रकार किसी वस्तु के रंग का पता लगाते हैं?
   (ब) हमारे शरीर का कौन सा भाग शरीर का संतुलन बनाए रखने में मदद करता है?
   (स) नेत्र किस प्रकार रेटिना पर पड़ने वाले प्रकाश का नियमन करते हैं?

8. (अ) सक्रिय विभव उत्पन्न करने में Na^+ की भूमिका का वर्णन कीजिए।
   (ब) सिनेप्स पर न्यूरोट्रांसमीटर मुक्त करने में Ca^{++} की भूमिका का वर्णन कीजिए।
   (स) रेटिना पर प्रकाश द्वारा आवेग उत्पन्न होने की क्रियाविधि का वर्णन कीजिए।
   (द) अंत: कर्ण में ध्वनि द्वारा तंत्रिका आवेग उत्पन्न होने की क्रियाविधि का वर्णन कीजिए।
9. निम्न के बीच में अंतर बताइए-
   (अ) आच्छादित और अनाच्छादित तंत्रिकाक्ष
   (ब) दुम्राक्ष्य और तंत्रिकाक्ष
   (स) शलाका और शंकु
   (द) थेलेमस और हाइपोथेलेमस
   (ध) प्रमस्तिष्क और अनुमस्तिष्क
10. (अ) कर्ण का कौन सा भाग ध्वनि की पिच का निर्धारण करता है?
    (ब) मानव मस्तिष्क का सर्वाधिक विकसित भाग कौन सा है?
    (स) केंद्रीय तंत्रिका तंत्र का कौन सा भाग मास्टर क्लॉक की तरह कार्य करता है?
11. कशेरुकी के नेत्र का वह भाग जहाँ से दृकतंत्रिका रेटिना से बाहर निकलती हैं, क्या कहलाता है-
    (अ) फोविया
    (ब) आइरिस
    (स) अंध बिंदु
    (द) ऑप्टिक चाएज्मा (चाक्षुष काएज्मा)
12. निम्न में भेद स्पष्ट कीजिए-
    (अ) संवेदी तंत्रिका एवं प्रेरक तंत्रिका
    (ब) आच्छादित एवं अनाच्छादित तंत्रिका तंतु में आवेग संचरण
    (स) एक्विअस ह्यूमर (नेत्रोद) एवं विट्रियस ह्यूमर (काचाभ द्रव)
    (द) अंध बिंदु एवं पीत बिंदु
    (य) कपालीय तंत्रिकाएं एवं मेरू तंत्रिकाए

अध्याय 22

रासायनिक समन्वय तथा एकीकरण

22.1 *अंत:स्रावी ग्रंथियां और हार्मोन*

22.2 *मानव अंत:स्रावी तंत्र*

22.3 *हृदय, वृक्क और जठर आंत्रीय पथ के हार्मोन*

22.4 *हार्मोन क्रिया की क्रियाविधि*

आप अध्ययन कर चुके हैं कि तंत्रिका तंत्र विभिन्न अंगों के बीच एक बिंदु दर बिंदु द्रुत समन्वय का कार्य करता है। तंत्रिकीय समन्वय काफी तेज लेकिन अल्प अवधि का होता है। तंत्रिका तंतुओं द्वारा शरीर की सभी कोशिकाओं का तंत्रिकायन नहीं होने के करण कोशिकीय क्रियाओं के लिए तथा निरंतर नियमन के लिए एक विशेष प्रकार के समन्वय की आवश्यकता होती है। यह कार्य हार्मोन द्वारा संपादित होता है। तंत्रिका तंत्र और अंत:स्रावी तंत्र मिलकर शरीर की शरीर क्रियात्मक कार्यों का समन्वय और नियंत्रण करते हैं।

22.1 अंत:स्रावी ग्रंथियां और हार्मोन

अंत:स्रावी ग्रंथियों में नलिकाएं नहीं होती हैं अत: वे नलिकाविहीन ग्रंथियां कहलाती हैं। इनके स्राव हार्मोन कहलाते हैं। हार्मोन की चिरसम्मत परिभाषा के अनुसार 'हार्मोन अंत:स्रावी ग्रंथियों द्वारा स्रवित रक्त में मुक्त किए जाने वाले रसायन हैं, जो दूरस्थ लक्ष्य अंग तक पहुँचाए जाते हैं।' परंतु इस परिभाषा को अब रूपांतरित किया गया है जिसके अनुसार 'हार्मोन सूक्ष्म मात्रा में उत्पन्न होने वाले अपोषक रसायन हैं जो अंतरकोशिकीय **संदेशवाहक** के रूप में कार्य करते हैं' इस नई परिभाषा के अंतर्गत सुनियोजित अंत:स्रावी ग्रंथियों से स्रावित हार्मोन के अतिरिक्त कई नये अणु भी सम्मिलित हो जाते हैं। अकशेरुकियों में कम हार्मोन के साथ एक सरल अंत:स्रावी तंत्र होता है जबकि कशेरूकियों में कई रसायन हार्मोन की तरह कार्य कर उनमें समन्वय स्थापित करते हैं। यहाँ मानव अंत:स्रावी तंत्र का वर्णन किया गया है।

22.2 मानव अंत:स्रावी तंत्र

अंत:स्रावी ग्रंथियां और शरीर के विभिन्न भागों में स्थित हार्मोन स्रवित करने वाले ऊतक/कोशिकाएं मिलकर अंत:स्रावी तंत्र का निर्माण करते हैं। पीयूष ग्रंथि, पिनियल ग्रंथि, थाइरॉयड, एड्रीनल, अग्नाशय, पैराथायरॉइड, थाइमस और जनन ग्रंथियां (नर में वृषण और मादा में अंडाशय) हमारे शरीर के सुनियोजित अंत:स्रावी अंग हैं (चित्र 22.1)। इनके अतिरिक्त कुछ अन्य अंग जैसे कि जठर-आंत्रीय मार्ग, यकृत, वृक्क, हृदय आदि भी हार्मोन का उत्पादन करते हैं। मानव शरीर की सभी प्रमुख अंत:स्रावी ग्रंथियों तथा हाइपोथैलेमस की संरचना और उनके कार्य का संक्षिप्त विवरण अगले भाग में दिया गया है।

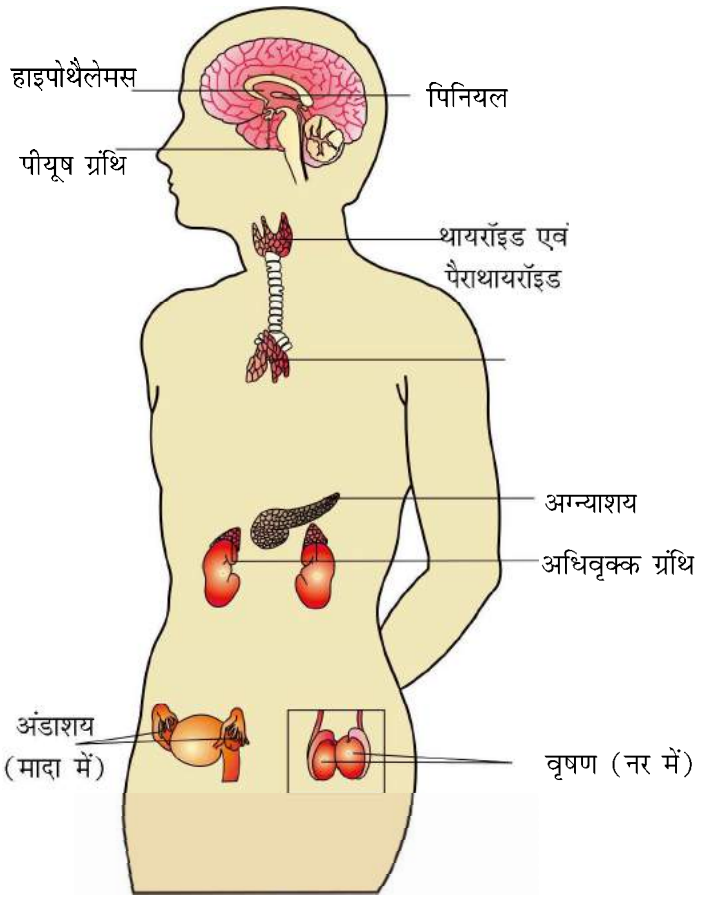

चित्र 22.1 अंत:स्रावी ग्रंथियों की स्थिति

22.2.1 हाइपोथैलेमस

जैसा कि आप जानते हैं कि हाइपोथैलेमस, डाइनसिफेलॉन (अग्रमस्तिष्क पश्च) का आधार भाग है और यह शरीर के विविध प्रकार के कार्यों का नियंत्रण करता है। इसमें हार्मोन का उत्पादन करने वाली कई तंत्रिकास्रावी कोशिकाएं होती हैं जिन्हें न्यूक्ली कहते हैं। ये हार्मोन पीयूष ग्रंथि से स्रवित होने वाले हार्मोन के संश्लेषण और स्राव का नियंत्रण करते हैं। हाइपोथैलेमस से स्रावित होने वाले हार्मोन दो प्रकार के होते हैं-

मोचक हार्मोन (जो पीयूष ग्रंथि से हार्मोन से स्राव को प्रेरित करते हैं) और निरोधी हार्मोन (जो पीयूष ग्रंथि से हार्मोन को रोकते हैं)। उदाहरणार्थ: हाइपोथैलेमस से निकलने वाला गोनेडोट्रोफिन मुक्तकारी हार्मोन के स्राव पीयूष ग्रंथि में गोनेडोट्रोफिन हार्मोन के संश्लेषण एवं स्राव को प्रेरित करता है। वहीं दूसरी ओर हाइपोथैलेमस से ही स्रवित सोमेटोस्टेटिन हार्मोन, पीयूष ग्रंथि से वृद्धि हार्मोन के स्राव का रोधक है। ये हार्मोन हाइपोथैलेमस की तंत्रिकोशिकाओं से प्रारंभ होकर, तंत्रिकाक्ष होते हुए तंत्रिका सिरों पर मुक्त कर दिए जाते हैं। ये हार्मोन निवाहिका परिवहन-तंत्र द्वारा पीयूष ग्रंथि तक पहुंचते हैं और अग्र पीयूष ग्रंथि के कार्यों का नियमन करते हैं। पश्च पीयूष ग्रंथि का तंत्रिकीय नियमन सीधे हाइपोथैलेमस के अधीन होता है (चित्र 22.2)।

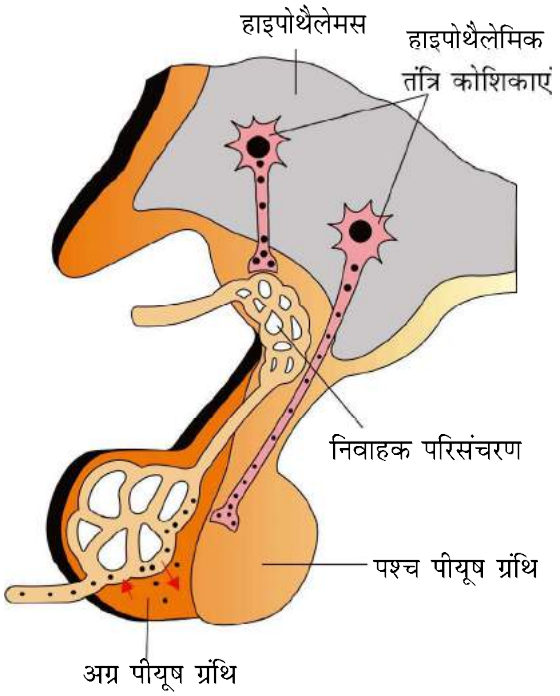

चित्र 22.2 पीयूष ग्रंथि तथा हाइपोथैलेमस के साथ इसके संबद्धता की आरेखीय प्रस्तुति

22.2.2 पीयूष ग्रंथि

पीयूष ग्रंथि एक सेला टर्सिका नामक अस्थिल गुहा में स्थित होती है और एक वृंत द्वारा हाइपोथैलेमस से जुड़ी होती है (चित्र 22.2)। आंतरिकी के अनुसार पीयूष ग्रंथि **एडिनोहाइपोफाइसिस** और **न्यूरोहाइपोफाइसिस** नामक दो भागों में विभाजित होती है। एडिनोहाइपोफाईसिस दो भागों का बना होता है – पार्स डिस्टेलिस और पार्स इंटरमीडिया। पार्स डिस्टेलिस को साधारणतया अग्र पीयूष ग्रंथि कहते हैं, जिससे **वृद्धि हार्मोन** या **सोमेटोट्रोपिन** (GH), **प्रोलैक्टिन** (PRL) या **मेमोट्रोपिन, थाइरॉइड प्रेरक हार्मोन** (TSH) **एड्रिनोकार्टिकोट्रॉफिक हार्मोन** (ACTH) या **कॉर्टिकोट्रोफिन, ल्यूटीनाइजिंग हार्मोन** (LH) और **पुटिका प्रेरक हार्मोन** का स्राव करता है। पार्स इंटरमीडिया एक मात्र हार्मोन **लेनोसाइट प्रेरक हार्मोन** (MSH) या मेलेनोट्रोफिन का स्राव करता है। यद्यपि मानव में पार्स इंटरमीडिया (मध्यपिंड) पार्स डिस्टेलिस (दूरस्थ पिंड) में लगभग जुड़ा होता है।

न्यूरोहाइपोफाइसिस (पार्स नर्वोसा) या पश्च पीयूष ग्रंथि, यह हाइपोथैलेमस द्वारा उत्पादित किए जाने वाले हार्मोन **ऑक्सीटॉसिन** और **वेसोप्रेसिन** का संग्रह और स्राव करती है। ये हार्मोन वास्तव में हाइपोथैलेमस द्वारा संश्लेषित होते हैं और तंत्रिकाक्ष होते हुए पश्च पीयूष ग्रंथि में पहुँचा दिए जाते हैं।

वृद्धिकारी हार्मोन (GH) के अति स्राव से शरीर की असामान्य वृद्धि होती है जिसे जाइगेंटिज्म (अतिकायकता) कहते हैं और इसके अल्प स्राव से वृद्धि अवरुद्ध हो जाती है जिसे पिट्यूटरी ड्वार्फिज्म (बौनापन या वामनता) कहते हैं।[13] प्रोलैक्टिन हार्मोन स्तन ग्रंथियों की वृद्धि और उनमें दुग्ध निर्माण का नियंत्रण करता है। थाइरॉइड प्रेरक हार्मोन थाइरॉइड ग्रंथियों पर कार्य कर उनसे थाइरॉइड हार्मोन के संश्लेषण और स्राव को प्रेरित करता है। एड्रिनोकार्टिकोट्रॉफिक हार्मोन (ACTH) एड्रीनल वल्कुट पर कार्य करता है और इसे **ग्लूकोकॉर्टिकॉइड्स** नामक, स्टीरॉइड हार्मोन के संश्लेषण और स्रवण के लिए प्रेरित करता है। ल्यूटिनाइजिंग और पुटिका प्रेरक हार्मोन जननांगों की क्रिया को प्रेरित करते हैं और लिंगी हार्मोन का उत्पादन करते हैं अतः **गोनेडोट्रोपिन** कहलाते हैं। नरों में ल्यूटिनाइजिंग हार्मोन, एंड्रोजेन नामक हार्मोन के संश्लेषण और स्राव के लिए प्रेरित करता है। इसी तरह नरों में पुटिका प्रेरक हार्मोन और **एंड्रोजेन** शुक्रजनन को नियंत्रित करता है। मादाओं में ल्यूटिनाइजिंग हार्मोन पूर्ण विकसित पुटिकाओं (ग्राफियन पुटिका) से अंडोत्सर्ग को प्रेरित करता है और ग्राफियन पुटिका के बचे भाग से कॉर्पस ल्यूटियम बनाता है। पुटिका प्रेरक हार्मोन, मादाओं में अंडाशयी पुटिकाओं की वृद्धि और परिवर्धन को प्रेरित करता है।

मेलानोसाइट प्रेरक हार्मोन, मेलानोसाइट्स (मेलानीन युक्त कोशिकाओं) पर क्रियाशील होता है तथा त्वचा की वर्णकता का नियमन करता है। ऑक्सीटॉसिन हमारे शरीर की चिकनी पेशियों पर कार्य करता है और उनके संकुचन को प्रेरित करता है। मादाओं में यह प्रसव के समय गर्भाशयी पेशियों के संकुचन और दुग्ध ग्रंथियों से दूध के स्राव को प्रेरित करता है। वेसोप्रेसिन मुख्यत: वृक्क की दूरस्थ संवलित नलिका से जल एवं आयनों के पुनरावशोषण को प्रेरित करता है, जिससे मूत्र के साथ जल का ह्रास (डाइयूरेसिस) कम हो। अत: इसे प्रतिमूत्रल हार्मोन या **एंटी-डाइयूरेटिक हार्मोन** (ADH) भी कहते हैं।[14]

22.2.3 पिनियल ग्रंथि

पिनियल ग्रंथि अग्र मस्तिष्क के पृष्ठीय (ऊपरी) भाग में स्थित होती है। पिनियल ग्रंथि **मेलेटोनिन** हार्मोन स्रावित करती है। मेलेटोनिन हमारे शरीर की दैनिक लय (24 घंटे) के नियमन का एक महत्वपूर्ण कार्य करता है। उदाहरण के लिए यह सोने-जागने के चक्र एवं शरीर के तापक्रम को नियंत्रित करता है। इन सबके अतिरिक्त मेलेटोनिन उपापचय, वर्णकता, मासिक (आर्तव) चक्र प्रतिरक्षा क्षमता को भी प्रभावित करता है।

22.2.4 थाइरॉइड ग्रंथि

थाइरॉइड ग्रंथि श्वास नली के दोनों ओर स्थित दो पालियों से बनी होती है (चित्र 22.3)। दोनों पालियाँ संयोजी ऊतक के पतली पल्लीनुमा इस्थमस से जुड़ी होती है। प्रत्येक थाइरॉइड **ग्रंथि पुटकों** और **भरण ऊतकों** की बनी होती हैं। प्रत्येक थाइरॉइड पुटक एक गुहा को घेरे पुटक कोशिकाओं से निर्मित होता है। ये पुटक कोशिकाएं दो हार्मोन, **टेट्राआयडोथाइरोनीनस** (T_4) अथवा **थायरोक्सीन** तथा **ट्राईआइडोथायरोनीन** (T_3) का संश्लेषण करती हैं। थाइरॉइड हार्मोन के सामान्य दर से संश्लेषण के लिए आयोडीन आवश्यक है। हमारे भोजन में आयोडीन की कमी से **अवथाइरॉइडता** एवं थाइरॉइड ग्रंथि की वृद्धि हो जाती है, जिसे साधारणतया **गलगंड** कहते हैं। गर्भावस्था के समय अवथाइरॉइडता के कारण गर्भ में विकसित हो रहे बालक की वृद्धि विकृत हो जाती है। इससे बच्चे की अवरोधित वृद्धि (क्रिटेनिज्म) या वामनता तथा मंदबुद्धि, त्वचा असामान्यता, मूक बधिरता आदि हो जाती हैं। वयस्क स्त्रियों में

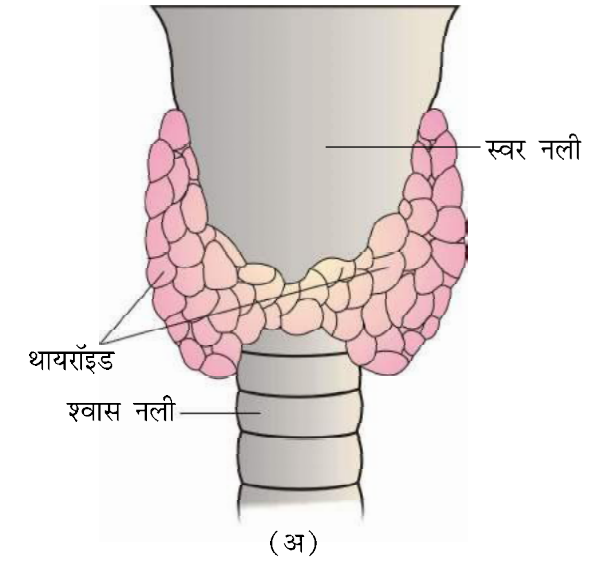

चित्र 22.3 थायरॉइड की स्थिति की आरेखी प्रस्तुति (अ) पृष्ठ दृश्य (ब) अधर दृश्य

अवथाइराइडता मासिक चक्र को अनियमित कर देता है। थाइरॉइड ग्रंथि के कैंसर अथवा इसमें गाँठों की वृद्धि से थाइरॉइड हारमोन के संश्लेषण की दर असामान्य रूप से अधिक जाती है। इस स्थिति को **थाइरॉइड अतिक्रियता** कहते हैं, जो शरीर की कार्यिकी पर प्रतिकूल प्रभाव डालती है।

थाइरॉइड हार्मोन आधारीय उपापचयी दर के नियमन में मुख्य भूमिका निभाते हैं। ये हार्मोन लाल रक्त कणिकाओं के निर्माण की प्रक्रिया में भी सहायता करते हैं। थाइरॉइड हार्मोन कार्बोहाइड्रेट्, प्रोटीन और वसा के उपापचय (संश्लेषण और विखंडन) को भी नियंत्रित करते हैं। जल और विद्युत उपघट्यों का नियमन भी थाइरॉइड हार्मोन प्रभावित करते हैं। थाइरॉइड ग्रंथि से एक प्रोटीन हार्मोन, थाइरोकैल्सिटोनिन (TCT) का भी स्राव होता है जो रक्त में कैल्सियम स्तर को नियंत्रण करता है।[15]

22.2.5 पैराथाइरॉइड ग्रंथि

मानव में चार पैराथाइरॉइड ग्रंथियाँ, थाइरॉइड ग्रंथि की पश्च सतह पर स्थित होती है। थाइरॉइड ग्रंथि की दो पालियों पर प्रत्येक में एक जोड़ी पैराथाइरॉइड ग्रंथियाँ पाई जाती हैं (चित्र 22.3बी), जो **पैराथाइरॉइड हार्मोन** (PTH) नामक एक पेप्टाइड हार्मोन का स्राव करती हैं। पीटीएच का स्राव रक्त के साथ परिसंचारित कैल्सियम आयन के द्वारा नियमित होता है।

पैराथाइरॉइड हार्मोन रक्त में Ca^{2+} के स्तर को बढ़ाता है। पी टी एच अस्थियों पर कार्य कर अस्थि अवशोषण (विघटन/विखनिजन) प्रक्रम में सहायता करता है। पी टी एच वृक्क नलिकाओं से Ca^{2+} के पुनरावशोषण तथा पचित भोजन से Ca^{2+} के अवशोषण को भी प्रेरित करता है। अत: यह स्पष्ट है कि पी टी एच एक अतिकैल्सियम रक्तता हार्मोन (hypercalemic hormone) है, क्योंकि यह रक्त में Ca^{2+} स्तर को बढ़ाता है। यह थाइरोकैल्सिटोनिन के साथ मिलकर, यह शरीर में Ca^{2+} स्तर को बढ़ाता है। टी सी टी के साथ मिलकर, यह शरीर में Ca^{2+} का संतुलन बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

22.2.6 थाइमस ग्रंथि

थाइमस ग्रंथि महाधमनी के उदर पक्ष पर उरोस्थि के पीछे फेफड़ों के बीच स्थित एक पालीयुक्त संरचना है। थाइमस ग्रंथि प्रतिरक्षा तंत्र के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। यह ग्रंथि **थाइमोसिन** नामक पेप्टाइड हार्मोन का स्राव करती है। थाइमोसिन टी-लिंफोसाइट्स के विभेदीकरण में मुख्य भूमिका निभाते हैं जो **कोशिका माध्य प्रतिरक्षा** के लिए महत्वपूर्ण है। इसके अतिरिक्त **थाइमोसिन तरल प्रतिरक्षा** (humoral immunity) के लिए प्रतिजैविक के उत्पादन को भी प्रेरित करते हैं। बढ़ती उम्र के साथ थाइमस का अपघटन होने लगता है, फलस्वरूप थाइमोसिन का उत्पादन घट जाता है। इसी के परिणामस्वरूप वृद्धों में प्रतिरक्षा प्रतिक्रिया कमजोर पड़ जाती है।

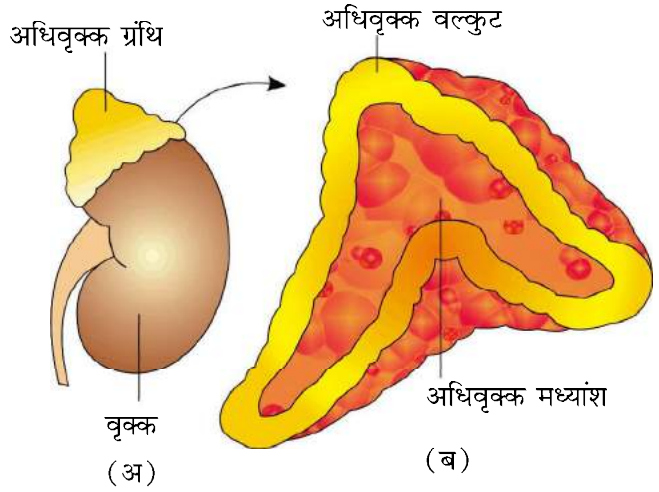

चित्र 22.4 (अ) वृक्क एवं अधिवृक्क ग्रंथि (ब) अधिवृक्क ग्रंथि के दो भागों का अनुप्रस्थकाट प्रदर्शन

22.2.7 अधिवृक्क ग्रंथि

हमारे शरीर में प्रत्येक वृक्क के अग्र भाग में एक स्थित एक जोड़ी अधिवृक्क ग्रंथियां होती हैं, (चित्र 22.4 अ)। ग्रंथियां दो प्रकार के ऊतकों से निर्मित होती हैं। ग्रंथि के बीच में स्थित ऊतक **अधिवृक्क मध्यांश** और बाहरी ओर स्थित ऊतक **अधिवृक्क वल्कुट** कहलाता है (चित्र 22.4बी)।

अधिवृक्क मध्यांश दो प्रकार के हार्मोन का स्राव करता है जिन्हें एड्रिनलीन या एपिनेफ्रीन और **नॉरएंड्रिनलीन** या **नारएपिनेफ्रीन** कहते हैं। इन्हें सम्मिलित रूप में **कैटेकॉलमीनस** कहते हैं। एड्रिनलीन और नॉरएड्रिनलीन किसी भी प्रकार के दबाव या आपातकालीन स्थिति में अधिकता में तेजी से स्रावित होते हैं, इसी कारण ये **आपातकालीन हार्मोन** या **युद्ध हार्मोन** या **फ्लाइट हार्मोन** कहलाते हैं। ये हार्मोन सक्रियता (तेजी), आँखों की पुतलियों के फैलाव, रोंगटे खड़े होना, पसीना आदि को बढ़ाते हैं। दोनों हार्मोन हृदय की धड़कन, हृदय संकुचन की क्षमता और श्वसन दर को बढ़ाते हैं। कैटेकोलएमीन, ग्लाइकोजन के विखंडन को भी प्रेरित करते हैं, जिसके परिणामस्वरूप रक्त में ग्लूकोज का स्तर बढ़ जाता है। साथ ही ये लिपिड और प्रोटीन के विखंडन को भी प्रेरित करते हैं।

अधिवृक्क वल्कुट को तीन परतों में विभाजित किया जा सकता है- **जोना रेटिक्यूलेरिस** (आंतरिक परत), **जोना फेसिक्यूलेटा** (मध्य परत) और **जोना ग्लोमेरूलोसा** (बाहरी परत)। अधिवृक्क वल्कुट कई हार्मोन का स्राव करता है- जिन्हें सम्मिलित रूप से **कोर्टिकोस्टीरॉइड हार्मोन** या **कोर्टिकॉइड** कहते हैं, जो कॉर्टिकोस्टीरॉइड कार्बोहाइड्रेट के उपापचय में संलग्न होते हैं **ग्लूकोकार्टिकॉइड** कहलाते हैं। हमारे शरीर में, कॉर्टिसॉल मुख्य ग्लूकोकॉर्टिकॉइड है। जल और विद्युत अपघट्यों का संतुलन करने वाले कॉर्टिकॉस्टीराइड, मिनरलोकॉर्टिकॉइड्स कहलाते हैं। हमारे शरीर में एल्डोस्टीरॉन मुख्य मिनरलोकॉर्टिकाइड है।

ग्लूकोकॉर्टिकोइड ग्लाइकोजन संश्लेषण, ग्लूकोनियोजिनेसिस, वसा अपघटन और प्रोटीन अपघटन को प्रेरित करते हैं तथा एमीनो अम्लों के कोशिकीय ग्रहण और उपयोग को अवरोधित करते हैं। कॉर्टिसॉल, हृदय संवहनी तंत्र के रखरखाव तथा वृक्क की क्रियाओं में भी संलग्न होता है। ग्लूकोकॉर्टिकोइड एवं विशेष रूप से कॉर्टिसाल प्रतिशोथ प्रतिक्रियाओं को प्रेरित करता है तथा प्रतिरक्षा तंत्र की प्रतिक्रिया को अवरोधित करता है। कॉर्टिसाल लाल रुधिर कणिकाओं के उत्पादन को प्रेरित करता है। एल्डोस्टीरॉन मुख्यत: वृक्क नलिकाओं पर कार्य करता है और Na^+ एवं जल के पुनरावशोषण तथा K^+ व फॉस्फेट आयन के उत्सर्जन को प्रेरित करता है। इस प्रकार एल्डोस्टीरॉन, वैद्युत अपघट्यों, शरीर द्रव के आयतन, परासरणी दाब और रक्त दाब को बनाए रखने में सहायक होता है। एड्रीनल वल्कुट द्वारा कुछ मात्रा में एंड्रोजेनिक स्टीराइड का भी स्राव होता है जो यौवनारंभ के समय अक्षीय रोम, जघन रोम, तथा मुख (आनन) रोम की वृद्धि में भूमिका अदा करते हैं।[16]

22.2.8 अग्नाशय

अग्नाशय एक संयुक्त ग्रंथि है जो अंत:स्रावी और बहि:स्रावी दोनों के रूप में कार्य करती है (चित्र 22.1)। अंत:स्रावी अग्नाशय 'लैंगरहैंस द्वीपों' से निर्मित होता है। साधारण मनुष्य के अग्नाशय में लगभग 10 से 20 लाख लैंगरहैंस द्वीप होते हैं जो अग्नाशयी ऊतकों का 1 से 2 प्रतिशत होता है। प्रत्येक लैंगरहैंस द्वीप में मुख्य रूप से दो प्रकार की कोशिकाएं होती हैं जिन्हें α और β **कोशिकाएं** कहते हैं। α **कोशिकाएं** का **ग्लूकगॉन** तथा β **कोशिकाएं इंसुलिन** हार्मोन का स्राव करती हैं।

ग्लूकागॉन एक पेप्टाइड हार्मोन है जो सामान्य रक्त शर्करा स्तर के नियमन में मुख्य भूमिका निभाता है। ग्लूकागॉन मुख्य रूप से यकृत कोशिकाओं पर कार्य कर ग्लाइकोजेन अपघटन को प्रेरित करता है जिसके फलस्वरूप रक्त शर्करा का स्तर बढ़ जाता है। इसके अतिरिक्त पेट ग्लूकोनियोजिनेसिस की प्रक्रिया को भी प्रेरित करता है जिससे कि **हाइपरग्लाइसिमिया (अति ग्लूकोज रक्तता)** होती है। ग्लूकागॉन कोशिकीय शर्करा के अभिग्रहण और उपयोग को कम करता है। अत: ग्लूकोगॉन **हाइपरग्लाइसिमिक हार्मोन** है। इंसुलिन भी एक प्रोटीन हार्मोन है जो ग्लूकोज समस्थापन के नियमन में मुख्य भूमिका निभाता है। इंसुलिन मुख्यत: हिपेटोसाइट और एडीपोसाइट पर कार्य करता है और कोशिकीय ग्लूकोज अभिग्रहण और उपयोग को बढ़ाता है। इसके फलस्वरूप ग्लूकोज तीव्रता से रक्त हिपेटोसाइट और एडीपोसाइट में जाता है और तथा रक्त शर्करा का स्तर कम **(हाइपोग्लासीमिया)** हो जाता है। इंसुलिन लक्ष्य कोशिकाओं में ग्लूकोज से **ग्लाइकोजेन** बनने की प्रक्रिया को भी प्रेरित करता है। रक्त में ग्लूकोज समस्थापन का नियमन सम्मिलित रूप से दो हार्मोन इंसुलिन और ग्लूकागॉन द्वारा होता है।

लंबी अवधि तक हाइपरग्लाइसीमिया (अति ग्लूकोज रक्तता) होने पर **डायबिटीज मेलीटस** (मधुमेह) बीमारी हो जाती है जो मूत्र के साथ शर्करा का ह्रास और हानिकारक पदार्थों जैसे कीटोन बॉडीज के निर्माण से जुड़ी है। मधुमेह के मरीजों का इंसुलिन द्वारा सफलतापूर्वक उपचार किया जा सकता है।

22.2.9 वृषण

नर में उदर गुहा (पेडू) के बाहर वृषण कोष में एक जोड़ी वृषण स्थित होता हैं (चित्र 22.1)। वृषण प्राथमिक लैंगिक अंग के साथ ही अंत:स्रावी ग्रंथि के रूप में भी कार्य करता है। **वृषण शुक्रजनक नलिका** और **भरण या अंतराली ऊतक** का बना होता है। **लेइडिग कोशिकाएं** या **अंतराली कोशिकाएं** अंतरनलिकीय स्थानों में उपस्थित होती हैं और **एंड्रोजेन** या नर हार्मोन तथा **टेस्टोस्टेरॉन** प्रमुख हार्मोन का स्राव करती हैं।

एंड्रोजेन नर के सहायक जनन अंगों जैसे कि एपीडिडाईमस, शुक्रवाहिका, सेमिनल वेसीकल, प्रोस्टेट ग्रंथि, यूरिथ्रा आदि के परिवर्धन, परिपक्वन और क्रियाओं का नियमन करते हैं। ये हार्मोन पेशीय वृद्धि, मुख और अक्षीय रोम की वृद्धि, क्रोधात्मकता, निम्न स्वरमान या आवाज इत्यादि को उत्तेजित करते हैं। एंड्रोजेन शुक्राणु निर्माण की प्रक्रिया में प्रेरक भूमिका निभाते हैं। एंड्रोजेन केंद्रीय तंत्रिका तंत्र पर कार्य कर नर लैंगिक व्यवहार (लिबिडो) को प्रभावित करता है। ये हार्मोन प्रोटीन और कार्बोहाइड्रेट उपापचय पर उपाचयी प्रभाव डालते हैं।

22.2.10 अंडाशय

मादाओं के उदर में अंडाशय का एक युग्म (जोड़ा) होता है (चित्र 22.1)। अंडाशय एक प्राथमिक मादा लैंगिक अंग है जो प्रत्येक मासिक चक्र में एक अंडे को उत्पादित करते हैं। इसके अतिरिक्त अंडाशय दो प्रकार के स्टीरॉइड हार्मोन समूहों का भी उत्पादन करते हैं, जिन्हें **एस्ट्रोजेन** और **प्रोजेस्टेरॉन** कहते हैं। अंडाशय अंडपुटक और भरण ऊतक का बना होता है। एस्ट्रोजेन का संश्लेषण एवं स्राव प्रमुख रूप से परिवर्धित हो रहे अंडाशयी पुटकों द्वारा होता है। अंडोत्सर्ग के पश्चात विखंडित पुटिका, **कॉर्पसल्यूटियम** में बदल जाता है जो कि मुख्यतया प्रोजेस्टेरॉन हार्मोन का स्राव करता है।

एस्ट्रोजेन स्त्रियों में द्वितीयक लैंगिक अंगों की वृद्धि तथा क्रियाओं का प्रेरण, अंडाशयी पुटिकाओं का परिवर्धन, द्वितीयक लैंगिक लक्षणों का प्रकटन (जैसे उच्च आवाज की स्वरमान) स्तन ग्रंथियों का परिवर्धन इत्यादि अनेक क्रियाएं करते हैं। एस्ट्रोजेन स्त्रियों के लैंगिक व्यवहार का नियामक भी है।

प्रोजेस्टेरॉन प्रसवता में सहायक होते हैं। प्रोजेस्टेरॉन दुग्ध ग्रंथियों पर भी कार्य कर के दुग्ध संग्रह कूपिकाओं के निर्माण और दुग्ध के स्राव में सहायता करते हैं।

22.3 हृदय, वृक्क और जठर आंत्रीय पथ के हार्मोन

अब तक आप अंत:स्रावी ग्रंथियों और उनके हार्मोन के बारे में समझ चुके होंगे। यद्यपि पहले इंगित किया जा चुका है कि हार्मोन का स्राव कुछ अन्य अंगों द्वारा भी होता है जो अंत:स्रावी ग्रंथियां नहीं हैं। उदाहरण के लिए हृदय की अलिंद भित्ति द्वारा एक पेप्टाईड हार्मोन का स्राव होता है, जिसे **एट्रियल नेट्रियुरेटिक कारक** (एएनएफ) कहते हैं। यह रक्त दाब को कम करता है। जब रक्त दाब बढ़ जाता है, तो एएनएफ के स्राव और इसकी क्रिया के फलस्वरूप रक्त वाहिकाएं विस्फारित हो जाती हैं तथा रक्त दाब कम हो जाता है।

वृक्क की जक्स्टाग्लोमेरूलर कोशिकाएं, **इरिथ्रोपोईटिन** नामक हार्मोन का उत्पादन करती हैं जो रक्ताणु उत्पत्ति (आरबीसी के निर्माण) को प्रेरित करता है। जठर आंत्रीय पथ के विभिन्न भागों में उपस्थित अंत:स्रावी कोशिकाएं चार मुख्य पेप्टाइड हार्मोन का स्राव करती हैं; **गैस्ट्रिन, सेक्रेटिन, कोलिसिस्टोकाइनिन** - और **जठर अवरोधी पेप्टाइड** (जी आई पी)। गैस्ट्रिन, जठर ग्रंथियों पर कार्य कर हाइड्रोक्लोरिक अम्ल और पेप्सिनोजेन के स्राव को प्रेरित करता है। सेक्रेटिन बहि:स्रावी अग्नाशय पर कार्य करता है और जल तथा बाइकार्बोनेट आयनों के स्राव को प्रेरित करता है। कोलिसिस्टोकाइनिन अग्नाशय और पित्ताशय दोनों पर कार्य कर क्रमश: अग्नाशयी एंजाइम और पित्त रस के स्राव को प्रेरित करता है। जी आई पी जठर स्राव और उसकी गतिशीलता को अवरुद्ध करता है। अनेक अन्य ऊतक, जो अंत:स्रावी नहीं है, कई हार्मोन का स्राव करते हैं जिन्हें **वृद्धिकारक** कहते हैं। ये वृद्धिकारक, ऊतकों की सामान्य वृद्धि और उनकी मरम्मत और पुनर्जनन के लिए आवश्यक हैं।

22.4 हार्मोन क्रिया की क्रियाविधि

हार्मोन लक्ष्य ऊतकों पर उपस्थित **हार्मोनग्राही** विशिष्ट प्रोटीन से जुड़कर अपना प्रभाव डालते हैं। लक्ष्य कोशिका झिल्लियों पर उपस्थित हार्मोनग्राही, झिल्ली योजित ग्राही, और कोशिका के अंदर उपस्थित ग्राही अंतरा कोशिकीयग्राही कहलाते हैं, जिसमें से अधिकांश केंद्रकीय ग्राही (केंद्रक में उपस्थित) होते है,

हार्मोन, ग्राहियों के साथ जुड़कर **हार्मोनग्राही सम्मिश्र** का निर्माण करते हैं (चित्र 22.5 a,b)। प्रत्येक ग्राही सिर्फ एक हार्मोन के लिए विशिष्ट होता है, अत: ग्राही विशिष्ट होते हैं। हार्मोनग्राही सम्मिश्र के बनने से लक्ष्य ऊतक में कुछ जैव रासायनिक परिवर्तन होते हैं। अत: लक्ष्य ऊतक में उपापचय एवं कार्यिकी का नियमन हार्मोन द्वारा होता है। रासायनिक प्रकृति के आधार पर हार्मोन को समूहों में विभाजित किया जा सकता है:

(ट) **पेप्टाइड, पॉलीपेप्टाइड, प्रोटीन** हार्मोन (जैसे इंसुलिन, ग्लूकागॉन, पीयूष ग्रंथि हार्मोन, हाइपोथैलेमिक हार्मोन इत्यादि)

(ब) **स्टीरॉइड** (उदाहरण के लिए कोटीसोल, टेस्टोस्टेरोन, एस्ट्राडायोल और प्रोजेस्टरॉन)

(स) **आयोडोथाइरोनिन** (थायराइड हार्मोन)

(द) **अमीनो अम्लों के व्युत्पन्न** (उदाहरण के लिए एपीनेफ्रीन)।

जो हार्मोन झिल्ली योजित ग्राहियों से क्रिया करते हैं वे साधारणतया लक्ष्य कोशिकाओं में प्रवेश नहीं कर पाते हैं, लेकिन द्वितीयक संदेशवाहकों का उत्पादन कर (जैसे कि चक्रीय ए एम पी, आई पी$_3$, Ca^{2+} आदि) अंतत: कोशिकीय उपापचय का नियमन करते हैं (चित्र 22.5 अ)। अंतरकोशिकीय ग्राहियों से क्रिया करने वाले हार्मोन (जैसे स्टीरॉइड हार्मोन, आयोडोथाइरोनिन आदि) हार्मोनग्राही सम्मिश्र एवं जीनोम के पारस्परिक क्रिया से जीन की अभिव्यक्ति अथवा गुणसूत्र क्रिया का नियमन करते हैं। संयुक्त जैव-रासायनिक क्रियाएं शरीर की कार्यिकी तथा वृद्धि को प्रभावित करती हैं (चित्र 22.5 बी)।

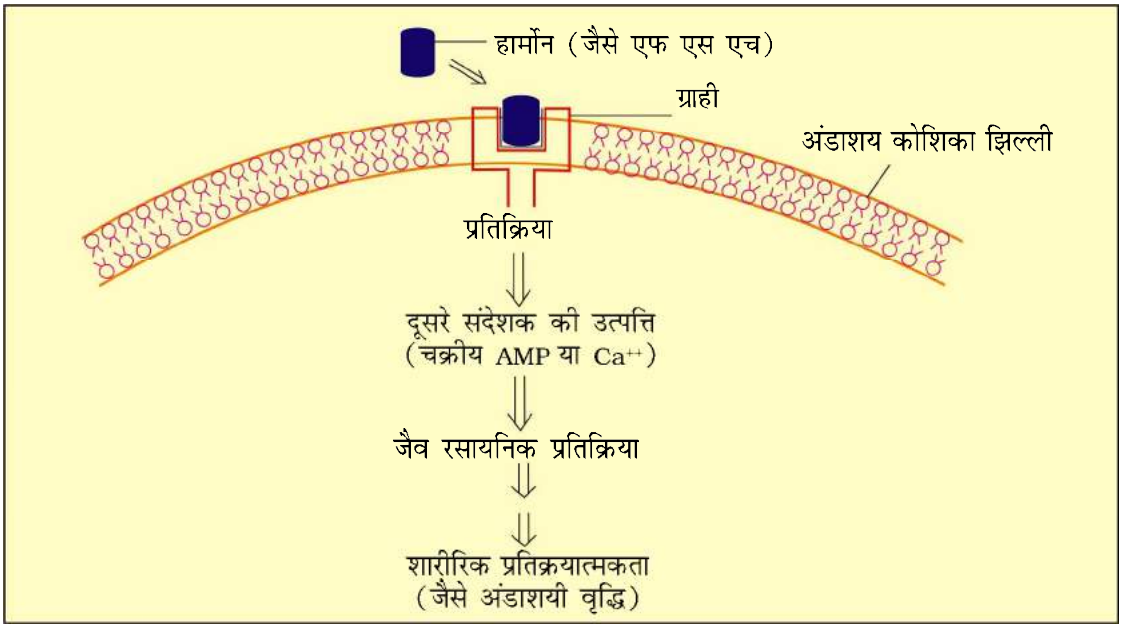

(अ)

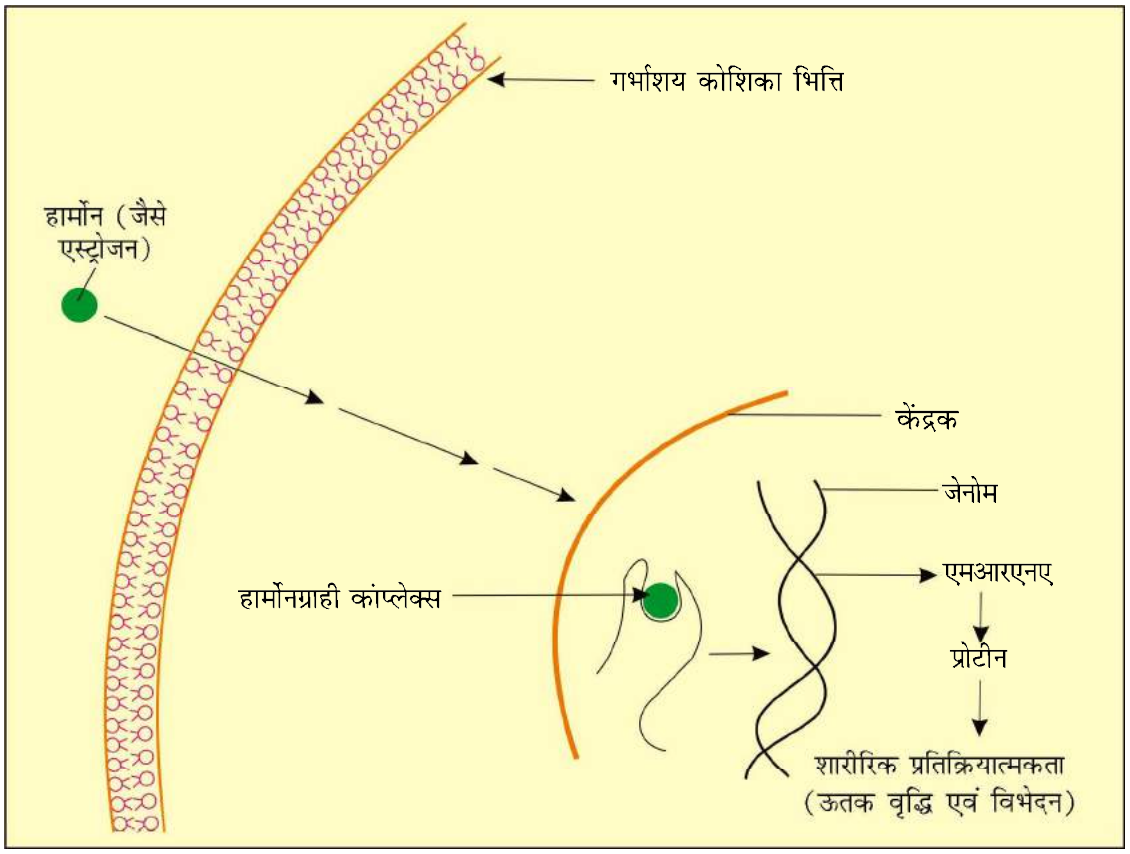

(ब)

चित्र 22.5 (अ) प्रोटीन हार्मोन (ब) स्टेरॉयड हार्मोन - हार्मोन क्रियात्मकता की प्रक्रिया की आरेखीय प्रस्तुति

सारांश

कुछ विशेष प्रकार के रसायन हार्मोन की तरह कार्य कर मानव शरीर में रासायनिक समन्वय, एकीकरण और नियमन प्रदान करते हैं। ये हार्मोन कुछ विशेष कोशिकाओं अंत:स्रावी ग्रंथियों तथा हमारे अंगों की वृद्धि उपापचय एवं विकास को नियमित करते हैं।

अंत:स्रावी तंत्र का निर्माण हाइपोथैलेमस, पीयूष, पीनियल, थायरॉइड, अधिवृक्क, अग्नाशय, पैराथायरॉइड, थाइमस और जनन (वृषण एवं अंडाशय) द्वारा होता है। इनके साथ ही कुछ अन्य अंग जैसे जठर आंत्रीय पथ, वृक्क हाइपोथैलेमस, हृदय आदि भी हार्मोन का उत्पादन करते हैं। हाइपोथैलेमस द्वारा 7 मुक्तकारी हार्मोन और 3 निरोधी हार्मोन का उत्पादन होता है जो पीयूष ग्रंथि पर कार्य कर उससे उत्सर्जित होने वाले हार्मोन के संश्लेषण और स्रवण का नियंत्रण करते हैं। पीयूष ग्रंथि तीन मुख्य भागों में विभक्त होती है- पार्स डिस्टेलिस, पार्स इंटरमीडिया, पार्स नर्वोसा। पार्स डिस्टेलिस द्वारा 6 ट्रॉफिक हार्मोन का स्रवण होता है। पार्स इंटरमीडिया केवल एक हार्मोन का स्राव करता है, जबकि पार्स नर्वोसा दो हार्मोन का स्राव करता है। पीयूष ग्रंथि से स्रवित हार्मोन कायिक ऊतकों की वृद्धि, परिवर्धन एवं परिधीय अंत:स्रावी ग्रंथियों की क्रियाओं का नियंत्रण करते हैं। पिनियल ग्रंथि मेलाटोनिन का स्राव करती है जो कि हमारे शरीर की 24 घंटे की लय को नियंत्रित करता है, (जैसे कि सोने व जागने की लय, शरीर का तापक्रम आदि)। थाइरॉइड ग्रंथि से स्रवित होने वाले हार्मोन थाइरॉक्सीन आधारीय उपापचयी दर, केंद्रीय तंत्रिका तंत्र के परिवर्धन और परिपक्वन, रक्ताणु उत्पत्ति कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, वसा के उपापचय, मासिक चक्र आदि का नियंत्रण करता है।

अन्य थायरॉइड हार्मोन थाइरोकैल्सिटोनिन हमारे रक्त में कैल्सियम की मात्रा को कम करके उसका नियंत्रण करता है। पैराथायरॉइड ग्रंथियों द्वारा स्रवित पैराथायरॉइड हार्मोन (PTH) Ca^{2+} के स्तर को बढ़ाकर, Ca^{2+} के समस्थापन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। थाईमस ग्रंथियों द्वारा स्रावित थाइमोसिन हार्मोन टी-लिम्फोसाइट्स के विभेदीकरण में मुख्य भूमिका निभाता है, जो कोशिका केंद्रित असंक्राम्यता (प्रतिरक्षा) प्रदान करते हैं। साथ ही थाइमोसिन एंटीबॉडी का उत्पादन भी बढ़ाते हैं जो शरीर को तरल असंक्राम्यता (प्रतिरक्षा) प्रदान करते हैं। अधिवृक्क ग्रंथि मध्य में उपस्थित अधिवृक्क मध्यांश और बाहरी अधिवृक्क वल्कुट की बनी होती है। अधिवृक्क मध्यांश एपीनेफ्रीन और नॉरएपीनेफ्रीन हार्मोन का स्राव करता है।

ये हार्मोन सतर्कता, पुतलियों का फैलना, रोंगटे खड़े करना, पसीना आना, हृदय की धड़कन, हृदय संकुचन की क्षमता, श्वसन की दर, ग्लाइकोजेन अपघटन , वसा अपघटन को बढ़ाते हैं। अधिवृक्क वल्कुट ग्लूकोकॉर्टिकाइड्स (कॉर्टिसॉन) और मिनरेलोकॉर्टिकाइड्स (एल्डोस्टीरॉन) का स्राव करता है। ग्लूकोकॉर्टिकॉइड्स ग्लाईकोजन संश्लेषण, ग्लूकोनियोजिनेसिस, वसा अपघटन, प्रोटीन अपघटन, रक्ताणु उत्पत्ति, रक्त दाब और ग्लोमेरूलर निस्पंदन को बढ़ाते हैं तथा प्रतिरोधक क्षमता को दबा कर शोथ प्रतिक्रियाओं को रोकता है। खनिज कोर्टिकॉइडस शरीर में जल एवं वैद्युत अपघट्यों का नियमन करते हैं। अंत:स्रावी अग्नाशय ग्लूकागॉन एवं इंसुलिन हार्मोन का स्राव करता है। ग्लूकागॉन कोशिका में ग्लाइकीजेनोलिसिस तथा ग्लूकोनियोजेनेसिस को प्रेरित करता है, जिससे रक्त में ग्लूकोज की मात्रा बढ़ जाती है। इसे हाइपरग्लासीमिया (अति ग्लूकोज रक्तता) कहते हैं। इंसुलिन शर्करा के अभिग्रहण और उपयोग को प्रेरित करती है और ग्लाइकोजिनेसिस के फलस्वरूप हाइपोग्लासिमिया हो जाता है। इंसुलिन की कमी से डायबिटीज मेलीटस (मधुमेह) नामक रोग हो जाता है।

वृषण एंड्रोजन हार्मोन का स्राव करता है जो नर के आवश्यक लैंगिक अंगों के परिवर्धन, परिपक्वन और क्रियाओं को, द्वितीयक लैंगिक लक्षणों का प्रकट होना, शुक्राणु जनन, नर लैंगिक व्यवहार, उपचयी पथक्रम और

रक्ताणु उत्पत्ति को प्रेरित करता है। अंडाशय द्वारा एस्ट्रोजेन और प्रोजेस्टेरॉन का स्राव होता है। एस्ट्रोजेन स्त्रियों में आवश्यक लैंगिक अंगों की वृद्धि व परिवर्धन और द्वितीयक लैंगिक लक्षणों के प्रकट होने को प्रेरित करता है। प्रोजेस्टेरॉन गर्भावस्था की देखभाल के साथ ही दुग्ध ग्रंथियों के परिवर्धन और दुग्धस्राव को बढ़ाता है। हृदय की अलिंद भित्ति एंट्रियल नेट्रियूरेटिक कारक का उत्पादन करता है, जो रक्त दाब कम करता है। वृक्क में एरीथ्रोपोइटिन का उत्पादन होता है जो रक्ताणु उत्पत्ति को प्रेरित करता है। जठर आंत्रीय पथ के द्वारा गैस्ट्रिन सेक्रेटिन, कोलीसिस्टोकाइनिन –पैंक्रियोजाइमिन और जठर अवरोधी पेप्टाइड का स्राव होता है। ये हार्मोन पाचक रसों के स्राव और पाचन में सहायता करते हैं।

अभ्यास

1. निम्नलिखित की परिभाषा लिखिए:
   (अ) बहि:स्रावी ग्रंथियाँ
   (ब) अंत: स्रावी ग्रंथियाँ
   (स) हार्मोन
2. हमारे शरीर में पाई जाने वाली अंत:स्रावी ग्रंथियों की स्थिति चित्र बनाकर प्रदर्शित कीजिए।
3. निम्न द्वारा स्रवित हार्मोन का नाम लिखिए–

(अ) हाइपोथैलेमस	(ब) पीयूष ग्रंथि	(स) थायरॉइड
(द) पैराथायरॉइड	(य) अधिवृक्क ग्रंथि	(र) अग्नाशय
(ल) वृषण	(व) अंडाशय	(श) थायमस
(स) एट्रियम	(ष) वृक्क	(ह) जठर–आंत्रीय पथ

4. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए–

हार्मोन	लक्ष्य ग्रंथि
(अ) हाइपोथेलैमिक हार्मोन	_____
(ब) थायरोट्रॉफिन (टीएसएच)	_____
(स) कॉर्टिकोट्रॉफिन (एसीटीएच)	_____
(द) गोनेडोट्रोपिन (एलएच, एफएसएच)	_____
(य) मेलानोट्रोफिन (एमएसएच)	_____

5. निम्नलिखित हार्मोन के कार्यों के बारे में टिप्पणी लिखिए–

(अ) पैराथायरॉइड हार्मोन (पीटीएच)	(ब) थायरॉइड हार्मोन
(स) थाइमोसिन	(द) एंड्रोजेन
(य) एस्ट्रोजेन	(र) इंसुलिन एवं ग्लूकागॉन

6. निम्न के उदाहरण दीजिए–
   (अ) हाइपर ग्लाइसीमिक हार्मोन एवं हाइपोग्लासीमिक हार्मोन
   (ब) हाइपर कैलसीमिक हार्मोन
   (स) गोनेडोट्रॉफिक हार्मोन

(द) प्रोजेस्टेशनल हार्मोन
(य) रक्तदाब निम्नकारी हार्मोन
(र) एंड्रोजेन एवं एस्ट्रोजेन

7. निम्न लिखित विकार किस हार्मोन की कमी के कारण होते हैं-
(अ) डायबिटीज (ब) गॉइटर (स) क्रेटीनिज्म

8. एफ एस एच की कार्यविधि का संक्षेप में वर्णन कीजिए।

9. निम्न लिखित के जोड़े बनाइए-

स्तंभ I	**स्तंभ II**
(i) T_4	(अ) हाइपोथैलेमस
(ii) पीटीएच	(ब) थायरॉइड
(iii) गोनेडोट्रॉफिक रिलीजंग हार्मोन	(स) पीयूष ग्रंथि
(iv) ल्यूटिनाइजिंग हार्मोन	(द) पैराथायरॉइड